Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

Birbal

बीरबल

(सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास)

[भाग १–२]

लेखक Ramchandar Taku

रामचन्द्र ठाकुर एम. ए.

('आम्रपाली', 'मीरा प्रेम दीवानी', उपन्यास के लेखक)

अनुवादक

दाऊलाल लाड़ 'दर्शन'

वोरा एन्ड कम्पनी पब्लिशर्स लिमिटेड

३ राउन्ड बिल्डिंग, कालबादेवी रोड, बम्बई २.

Bora and "Co" Bombay

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

H83
R16B
18640
Rs 4-8-0

प्रथमावृत्ति
१९५१
1951

१५

मूल्य ४॥)

Sri Pratap Singh
Library
Srinagar.

मुद्रक :
अनंत जे. शाह,
लिपिका प्रेस,
कुर्ला रोड,
अन्धेरी.

प्रकाशक :
अेम. के. वोरा,
वोरा अेण्ड कं. पब्लिशर्स लि.
३, राउन्ड बिल्डिंग
बम्बअी. नं. २

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

समर्पण

उस प्रोफ़ेसर को—
जो मेरा भाई है,

उस भाई को —
जो मेरा आलोचक है,

उस आलोचक को—
जो हर गहरी बात पर
हँस लेता है

उस —
मुरली ठाकुर को !

लेखक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

संकेत

अनुमान किया जाता है कि बीरबल का जो स्वरूप जनसाधारण के सामने आज तक लाया गया है वह केवल किसी एक व्यक्ति या समूह की आधार-रहित कल्पनाओं का परिणाम है। दूसरे शब्दों में कोई भी सुशिक्षित और सत्यान्वेषी व्यक्ति आज निस्संकोच कह सकता है कि बादशाह और बीरबल के नाम पर प्रचलित कहानियाँ—जिन्हें किंवदंतियाँ कहना ही अधिक उपयुक्त होगा—मनगढ़न्त हैं। यह स्वाभाविक ही है कि ऐसा ऐतिहासिक व्यक्ति जो जनसाधारण में अपने 'चुटकुलों' के द्वारा ही अधिक पहचाना जाता हो, आधुनिक इतिहास-अन्वेषक पर अपने व्यक्तित्व का प्रभाव नहीं डाल सकता। संक्षेप में, अब तक इतिहासकारों और विशेषकर इतिहासप्रेमी साहित्यकारों के लिए 'बीरबल' एक उपेक्षित व्यक्ति रहा है।

प्रस्तुत उपन्यासकार. पहले एक साहित्यकार और फिर एक सहृदय मनुष्य के नाते, अपने समय के एक चतुरतम और महान व्यक्ति की यह उपेक्षा सहन नहीं कर सका और अपने प्रिय व्यक्ति की ऐतिहासिक खोज जो परिणाम ला सकती है, कुछ वैसा ही परिणाम 'बीरबल' उपन्यास के रूप में पाठकों के सामने है। लेखक ने अपनी 'तवारीख़' में इस विषय का अधिक स्पष्ट और सुन्दर विवेचन किया है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हिंदी का ऐसी कृति से वंचित रहना अवांछनीय होता जब कि आज वह राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन है। अनुवादक के नाते मैंने लेखक के मन्तव्य के अनुरूप वातावरण को सजीव बनाने का प्रयत्न किया है और हिंदी के उस विशाल रूप का आश्रय लिया है जो सूक्ष्मतम और विशालतम भावना को शाब्दिक रूप देकर एवं एकांगी और विवादास्पद संकीर्ण मार्गों से हटाकर लेखक और पाठक दोनों को सरल और विस्तृत राजमार्ग पर ले आये।

स्थान और समय के अभाव, विशेष रूप से समय के अभाव के कारण मुद्रण में कुछ अक्षम्य अशुद्धियाँ रह गई हैं, यथा—'अकबर' के स्थान पर कई जगह 'अक़बर' छप गया है, वैसी ही और कई हैं। आशा है विद्वान पाठक एवं समालोचक इसे क्षम्य समझकर कृतार्थ करेंगे।

'दर्शन'

★

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आधारभूत ग्रंथों की सूची

अंग्रेज़ी

	पुस्तक	रचयिता
१	अकबरनामा (अबुलफ़ज़ल कृत)	एच. ब्लॉचमेन और गॅरेट
२	आईने-अकबरी ,,	,, ,,
३	तुज़गे जहाँगीरी (आत्मकथा)	ए. रॉजर्स
४	मुन्नाख़बुत्तवारीख़ (बिदौरी कृत)	जी. एस. ए. रैंकिंग
५	तवारीख़े फ़रिश्ता (फ़रिश्ता कृत)	एच. जी. ब्रिग्ज़
६	एनाल्स एंड एंटिक्विटीज़ ऑफ़ राजस्थान	ले. क. जेम्स टॉड
७	अकबर, दी ग्रेट मोग़ल	ए. विसेंग्ट स्मिथ
८	ए शार्ट हिस्ट्री ऑफ़ मुस्लिम रूल इन इंडिया	डॉ. ईश्वरीप्रसाद
९	दी हिस्ट्री ऑफ़ आर्यन रूल इन इंडिया, टु दी डेथ ऑफ़ अकबर	ई. बी. हेवेल
१०	हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया (वॉ. ३)	स्टेनली लेनपूल
११	हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया	मेडोज़ टेइलर
१२	हिस्ट्री ऑफ़ दी ग्रेट मोग़ल्स	पी. केन्नेडी
१३	मोग़ल इंडिया	निकोली, मेनुच्ची
१४	हिस्ट्री ऑफ़ मिडिएइवल इंडिया	सी. वी. वैद
१५	दी मोग़ल एम्परर्स ऑफ़ हिन्दुस्तान	ई. एस. होल्डन
१६	दी रिलीजियस पॉलिसी ऑफ़ दी मोग़ल एम्परर्स	श्रीराम शर्मा
१७	हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया	सर एच. एस. ईलीयट
१८	हिस्ट्री ऑफ़ इंडिया	एम. एलफ़िन्स्टन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हिंदी

१६	अकबर	चन्द्रमौलि सुकुल
२०	राजा बीरवल	देवीप्रसाद मुंशी
२१	खानखाना नामा	,,
२२	हुमायूँ नामा	,,
२३	जहाँगीर नामा	,,
२४	सूरीश्वर सम्राट अकबर	कृष्णलाल वर्मा
२५	उदयपुर राज्य का इतिहास	गौरीशंकर ही. ओझा

गुजराती

२६	शाहानशाह अकबरशाह	स्व० न्हानालाल कवि
२७	जहाँगीर नूरजहान	,,
२८	बीरबल विनोद	बद्रनज़ामी राहती
२६	राज्यरत्न बीरबलनो हास्यभंडार	स्व० पेस्तनजी जमशेदजी सठा
३०	अकबर (सयाजी साहित्यमाला)	बापूभाई वैष्णव बी. ए.
३१	आईन–ई–अकबरी अर्थात् बादशाह अकबर	पुरुषोत्तम जीजाभाई शाह
३२	दरबारे अकबरी (आज़ाद कृत)	सादिक़
३३	जहाँगीर	प्रकाशक, गुजरात प्रिंटिंग प्रेस
३४	सम्राट अकबर (सस्तुं साहित्य)	बंकिमचंद्र लाहिरी

अनुक्रम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पहला भाग	पृष्ठ ३६ से १५६
दूसरा भाग	पृष्ठ १५७ से २७२

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तवारीख़

दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा ! ......

संस्कृत-साहित्य के अंतिम महाकवि जगन्नाथ पंडित ने यह उद्‌गार व्यक्त किया है; और दूसरी ओर गुजरात के महाकवि न्हानालाल भी शाह के लिए ऐसा ही कुछ कहते हैं —

"इतिहास मां बीजुं इबादतखानुं नथी ।
इतिहास मां बीजो अकबरशाह नथी ।
अकबरशाह अेटले–जगत नी बादशाहमाळा नो मेर ।
इतिहास मां अकबर बादशाह हतो–एकमेवाद्वितियम् !"—

जिसकी क़ब्र पर आँसू बहाते हुए "कैज़र अक़बर" का जर्मन लेखक काउंट नोएर अपने हृदय की वेदना को, दुनिया की किसी दूसरी ज़गह की अपेक्षा, वहीं अनुभव करता है; आज भी प्रत्येक भारतीय जिसकी याद में अपना सिर झुकाता है, उस भारतीय अक़बर-शाह की प्रशंसा किसने न की होगी ?

'कीन' का कथन है कि दुनिया के इतिहास में, खूँख्वार शहंशाहों की अकल्पनीय पंक्ति में, अकबर से अधिक उज्ज्वल नाम किसी का भी दिखाई नहीं देता ! 'स्लीमेन' कहता है कि जिस तरह कवियों का उल्लेख करने पर 'शेक्सपियर' का स्मरण होता है, वैसे ही सम्राटों का उल्लेख करते हुए अक़बर नज़रों के आगे अवतरित हो जाता है !

यह तो हुई 'अक़बर' के प्रशंसकों की बात ! लेकिन उसके कट्टर विरोधी टॉड साहब को भी आखिरकार कहना पड़ता है

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कि— 'अक़बर, भारत का सबसे महान् राजा है!' आयलैंड उसे पूर्व का सबसे महान् सम्राट मानता है; उसी तरह एच. जी. वेल्स, अकबर को दुनिया के महान् राजाओं की श्रेणी में ही रखते हैं, और मिस्र के एक पाशा, 'मूसा नबी' से अब तक होने वाले धार्मिक, सामाजिक, और राजनैतिक अधिकारी व्यक्तियों में सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति 'अकबर' को ही मानता है। दुनिया के बड़े बड़े इतिहासकार— होल्डन साहब और हेवेल, लेनपूल और मेलीसन, सर हेनरी इलियट, और लॉर्ड एलफिन्स्टन, 'अकबर' का दाहिना हाथ माना जाने वाला प्रधानमंत्री अबुलफ़ज़ल और इतिहासकार फरिस्ता, अक़बरी दरबार का धर्मांध सरदार मशहूर इतिहासकार मौलाना अब्दुलकादिर बिदौनी और इसी शताब्दि के शम्सूल-उलेमा मौलाना मुहम्मद हुसैन और आज़ाद-बंधु आदि सब ही अकबर के बारे में अपनी बात कह डालने के बाद संपूर्ण विश्वास के साथ उसके लिए इसी शब्द का उच्चारण करते हैं— एकमेवाद्वितीयम्!...

ऐसे थे शंहशाह जलालुद्दीन अकबर!

राजा

इन्हीं के 'नवरत्नों' में एक मुख्य रत्न थे राजा बीरबल! जो 'अकबरी दरबार' में दोहज़ारी मनसबदार के साथ साथ मुसाहिबे दानिशमंद, बादशाह के बुद्धिमान मंत्री, मित्र और कवि भी थे!

काश्मीर से गुजरात और मारवाड़ से काशी तक के लोग "बीरबल" को 'अपना' बताने का प्रयत्न करते रहे हैं। एक दंतकथा के अनुसार बीरबल कान्यकुब्ज चौबे थे, जो हमीरपुर ज़िले के निवासी थे, और 'अमीर-उल-उमरा' राजा भगवानदास के ज़रिये अकबर के पास पहुँच गये थे। जोधपुर-निवासी मुंशी देवीप्रसाद की मान्यता है कि बीरबल का असली नाम ब्रह्मदास था। वे ब्राह्मण थे और एक सुन्दर कवि होने के साथ साथ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

संस्कृत, अरबी और फ़ारसी भाषाओं के लिखने और बोलने में पारंगत थे। काल्पी और रेवा राज्यों में घूमते हुए, अपनी कवित्वशक्ति के जोर से संयोगवश अकबर के पास पहुँच गये। कइयों का कहना है कि वे काशी निवासी ब्रह्मभट्ट—चारण थे। बुन्देलखण्डी कहते हैं कि बीरबल टेहरी गाँव के एक धनाढ्य ब्राह्मण थे और राजा टोडरमल के द्वारा बादशाह अकबर से उनकी पहिचान हुई थी। एक हिन्दी लेखक कवि शिवसिंह, 'भूषण' के दो दोहों का उद्धरण देकर सिद्ध करना चाहते हैं कि बीरबल का जन्म कानपुर जिले के त्रिविक्रमपुर नामक नगर में हुआ था। दूसरी ओर, बहुतों का यह भी अभिप्राय है कि बीरबल दिल्ली का ही एक ग़रीब ब्राह्मण था; उसका मूल नाम सुब्रनाथ था। किसी दिन खेल तमाशा देखते हुए बादशाह उसकी चतुराई पर मुग्ध हो गये, और उसे हमेशा के लिए अपने पास रख लिया। जयपुर निवासियों का कथन है कि बीरबल का जन्म अजमेर के निकट किसी गाँव में हुआ था। वह एक जन्मजात ग़रीब लकड़हारा था: एक दिन शिकार के लिए निकले हुए बादशाह से जंगल में उसकी मुलाक़ात हुई और उसके बुद्धिबल से आकृष्ट होकर बादशाह ने उसे हमेशा के लिए अपना मित्र बना लिया। किंतु मारवाड़ के लोग बीरबल को मकराना निवासी एक ग़रीब ब्राह्मण समझते हैं, जिसने कि सबसे पहले मकराना की संगमरमर की खानों के बारे में तत्कालीन सांभर के हाकिम को अवगत कराया था। इसी सिलसिले में वह बादशाह के निकट सम्पर्क में आया और बादशाह का इतना कृपापात्र बना। डॉक्टर ग्रियर्सन बीरबल के पूर्वजीवन को महेश भाट के रूप में पहचानते हैं। किंतु बिदौनी के शब्दों पर ही अधिक विश्वास रखा जा सकता है, क्योंकि वह संस्कृत का प्रकाण्ड विद्वान होने के साथ ही साथ बादशाह के खास सरदारों में से एक था। और बीरबल का समकालीन था। रामायण आदि भारतीय ग्रन्थों का फारसी में अनुवाद करने और बादशाह तथा राजा जी के रणक्षेत्र में जाने पर वह भी वहाँ साथ रहा था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उसके कथनानुसार बीरबल का मूल नाम ब्रह्मदास था; वह जाति का भाट और कविता का रोज़गारी था। 'भारत के वीर पुरुष" में बीरबल का, काल्पी के एक भाट के रूप में वर्णन किया गया है, जिसने कि अपने सुन्दर गीतों से दिल्ली को पागल बनाया, और इसी सिलसिले में विद्वानों के जौहरी अकबर शाह का स्नेही बन गया।—और आधुनिक इतिहासकार विन्सेएट स्मिथ लिखते हैं कि बीरबल, पूर्वजीवन में महेशदास नामक, काल्पी का रहने वाला एक निर्धन ब्राह्मण था।

इन सब उद्धरणों में जो भी सच हो, लेकिन इतना निश्चित है कि प्रारम्भिक जीवन में राजा बीरबल बहुत गरीब थे, और अपने अनुपम बुद्धि-चातुर्य, विचक्षण कवि-हृदय और अद्भुत विनोदवृत्ति के कारण ही अकबर जैसे शाहंशाह के प्रियतम मित्र बने! बीरबल इस प्रकार निर्विवाद रूप से एक ऐतिहासिक व्यक्ति है। चाहे उसका मूल नाम महेश, सुप्रनाथ या ब्रह्मदास जो भी कुछ रहा हो राजा बीरबल को अकबर ने २००० की मनसब-दारी और राजा की उपाधि दी थी यह तो बिदौनी और अक़बर के प्रधानमन्त्री "अक़बर नामा" और "आइने अक़बरी" के रचयिता अबुलफ़ज़ल, इन दोनों विद्वानों ने मान्य किया है। 'इक़बाल-नाम-ए-जहांगीर' में राजा बीरबल के दो पुत्र होने का स्पष्ट उल्लेख है। राजा बीरबल का यूसुफ़ज़ाई पठानों से युद्ध करने के लिये जाना और वहीं युद्ध में मृत होना तो अबुलफ़ज़ल से लेकर विन्सेन्ट स्मिथ तक के इतिहासकारों द्वारा मान्य की हुई ऐतिहासिक घटना है। प्रयाग के दुर्ग में, "अशोक स्तम्भ" माने जाने वाले स्तम्भ पर लिखा हुआ है:— "संवत् १६३२ शके १४९३ मार्ग बदी ५ सोमवार, गंगादास सुत महाराज बीरबल; श्री तीरथराज प्रयाग की यात्रा सफल लिखित।" कलकत्ता के विक्टोरिया मेमोरियल कलेक्शन में नवरत्नों का, एक बहुत पुराना चित्र है, जिसमें राजा बीरबल, बादशाह की बगल में बैठे हैं।—इसके सिवा अक़बर द्वारा बसाये

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

फ़तहपुर सीकरी में शाही महल के पास ही बीरबल की हवेली भी थी जो अभी भी उसी नाम से पुकारी जाती है।

इस तरह, संक्षेप में, अब यह सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं रहती कि बीरबल निःसंदेह एक ऐतिहासिक व्यक्ति थे। इतिहास में उनका उल्लेख केवल–कल्पना, या कल्पना द्वारा अतिरंजित दंतकथा या साधारण दरबारी सरदार की कहानी नहीं है। सम्भव है कि राजा बीरबल विदूषक हों, हाज़िर-जवाब हों, विनोदी हों, कवि हों किन्तु इससे भी विशेष, इन सब गुणों से विशिष्ट या अनूप कोई और वस्तु उनमें ज़रूर होगी—। यदि न होती तो वे अकबर जैसे गुणग्राही और विद्वानों के पारखी विचक्षण शहंशाह की इतनी अधिक कृपा प्राप्त न कर सके होते। राजा बीरबल की विनोदात्मक दन्तकथाओं में कई जगह उनकी पत्नी और पुत्री का उल्लेख आता है, लेकिन इसके सिवा उनके नाम पर कही जानेवाली कथाएँ उतनी ही अनिश्चित हैं जितनी कि कालिदास के बारे में। हाँ, अकबरी युग के दो असाधारण कविगण—कवि गंग और कवि केशव ने अपने काव्यों में राजा बीरबल का अद्वितीय दानशील होने का उल्लेख एक से अधिक बार किया है।

दन्तकथाएँ

यह मान लेना ग़लत है कि, हिन्दुस्तान के कोने-कोने में प्रचलित 'अकबर और बीरबल' की लोकप्रिय कथाएँ, जिनकी संख्या डेढ़ सौ से भी अधिक हैं, सभी सच होंगी। किसी महान व्यक्ति या घटना के नाम पर, समय बीतने के साथ-साथ नई-नई बातें प्रकट होती रहती हैं। संभव है कि सब सच न हों, लेकिन उनमें से कुछ तो आंशिक या आधारित रूप में सच्ची होनी ही चाहिए। कुरुक्षेत्र में श्रीकृष्ण द्वारा कथित 'गीता' चाहे इस समय अपने मूल रूप में न हो लेकिन उसका सैद्धांतिक आधार तो परिवर्तन के बाद भी वही है; यही बात 'बादशाह और बीरबल' की कहानियों के बारे में भी मालूम होती है। फिर भी,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अकबर जैसा विद्या-व्यसनी सम्राट, जिसके पुस्तकालय में २४००० पुस्तकें, किसी भी क्षण पढ़ने को लभ्य थीं, जिसके कलाभवन में ७० सिद्धहस्त चित्रकार निरन्तर काम करते रहते थे, जिसके दरबार में ५९ कवि और १४२ पण्डित अहर्निश वादविवादों में निमग्न रहते थे; जो बादशाह दर्शनशास्त्र के अनुसंधान के पीछे दीवाना-सा था, और जिसकी बुद्धिप्रतिभा और स्मरणशक्ति इतनी तीव्र थी कि महाभारत के फ़ारसी भाषान्तरकार फैज़ी, देवी मिश्र, बिदौनी वगैरह पण्डितों को भी जो विचारों के दुर्गम मार्ग में रुकने पर सही रास्ता दिखाने की क्षमता रखता था—ऐसे बुद्धिप्रगल्भ, युद्ध-विशारद अद्वितीय सम्राट की, प्रचलित दन्तकथाओं में उल्लिखित 'अकबर' के साथ तुलना करना भी हास्यास्पद है। ये दन्तकथाएँ बीरबल के चातुर्य की प्रशंसा के लिए या किसी लेखक ने अपना बुद्धि-कौशल दिखाने के लिए 'बादशाह–बीरबल' के नाम से लिख डाली होंगी।

...फिर भी इन कहानियों के मौलिक अभिप्राय से, अकबर बादशाह और बीरबल का धूमिल आभास अवश्य मिलता है!

मुल्ला दोप्याज़ा और कालिदास

उर्दू-साहित्य में, अकबर के नवरत्नों में मुल्ला दोप्याज़ा के बारे में भी अनेक बातें मिलती हैं। मुल्ला दोप्याज़ा विद्वान थे, सारा कुरान उन्हें कण्ठस्थ था। लेकिन वे ज़रा सनकी-से थे; उनका नाम—दोप्याज़ा—ही उनके रंगढंग की ओर संकेत करता है। उन कहानियों में उन्हें बीरबल से अधिक विनोदी और बीरबल को भी बेवकूफ़ बनाने वाले के तौर पर बताया गया है। दोप्याज़ा की कहानियों, कवि कालिदास और भोज की कथाओं तथा बादशाह–बीरबल की कहानियों में किसी-किसी जगह विचित्र समानता है! ऐसा मालूम होता है कि उन कहानियों में, बीरबल का नाम बदलकर दोप्याज़ा या कवि कालिदास रख दिया गया हो! अथवा कवि कालिदास के प्रसंगों को उन दोनों के नाम पर बदल दिया हो!....अस्तु।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उनकी, इस तरह सर्वव्यापी प्रशंसा स्पष्ट संकेत करती है कि राजा बीरबल हाज़िरजवाब आदि गुणों को लेकर 'एकमेवाद्वितीयम्' थे। अकबर के नवरत्नों में सब ही, बादशाह की 'चातुर्य-कसौटी' से पार उतरने पर 'खरे' थे, लेकिन चातुर्य विनोद में तो राजा बीरबल ही अद्वितीय थे।

मित्र

एक इतिहासकार का कथन है कि जब राजा बीरबल बहुत ग़रीब हालत में थे तब शहंशाह अकबर ने उन्हें 'मित्र' कहकर पुकारा था, इसीलिए जीवन-पर्यन्त अकबर ने राजाजी के साथ मित्र जैसा ही व्यवहार रखा। इस व्यवहार को लेकर राजाजी कई बार राजसी मर्यादा का उल्लंघन कर जाते थे, लेकिन फिर भी किसी दिन बादशाह की ओर से उन्हें उलाहना नहीं सहना पड़ा। बिदौनी ने भी कई जगह उल्लेख किया है कि अकेले राजाजी ही ऐसे व्यक्ति थे जो बिना किसी संकोच के, शाही हरम में अकेले जा सकते थे; इतना ही नहीं, बादशाह का बहुत-सी धार्मिक वस्तुओं का पक्षपात भी राजाजी के कारण ही था!

बादशाहों का आन्तरिक जीवन भी कभी-कभी बहुत विचित्र होता है! नेपोलियन, जिसका नाम जगत-विजेताओं में गिना जाता है, अपने आंतरिक-जीवन में दुःखी था! किसी भी बादशाह के आंतरिक जीवन की ऐतिहासिक छानबीन करने पर कभी कभी ऐसा मालूम होता है कि रास्ते में निश्चिन्त होकर सोने वाला भिखारी, उससे अधिक सुखी होगा। बादशाह को 'बादशाह' होने के कारण एक ऐसी कृत्रिम मर्यादा में रहना पड़ता है, जहाँ पिता, पुत्र, पत्नी, बन्धु या मित्र— कोई भी प्रवेश नहीं कर सकता, या स्वयं बादशाह भी उस मर्यादा को लाँघने में असमर्थ होता है; इस दृष्टि-कोण से वह अकेला है; बँधा हुआ है! प्राचीन-काल में, चक्रवर्ती सम्राट् भी राज्यभार से संतप्त और भारी मन को हलका करने के लिए, अपने हृदय की सामान्य और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

व्यक्ति-गत बातों को व्यक्त करने के लिए, विदूषकों को बचपन से ही मित्र के तौर पर रात-दिन अपने पास ही रखते थे, जो बाहर से मूर्ख दिखाई देते हुए भी चतुर और मनीषी होते थे।

पागल हाथियों की पीठ पर सवारी करने और भूखे सिंह के साथ निःशस्त्र हाथों से जूझने वाला महापराक्रमी अकबरशाह राजनीति और समरांगण में समान रूप से सिद्धहस्त था! उसकी बुद्धि और शक्ति अप्रतिहत थी। तथापि 'बादशाह' होने के कारण उसके व्यक्ति-गत जीवन में अवश्य कोई ऐसी कमी रही होगी जिसे राजा बीरबल ने पूरी की हो; नहीं तो और किसी भी कारण से बादशाह के इतने समीप वे न आ पाये होते; इतने प्रिय न बने होते!

राजा बीरबल सिर्फ़ हाज़िरजवाब ही न थे, सिर्फ़ कवि ही न थे, अथवा केवल रसिक ही नहीं थे; वे मित्र थे, परिपूर्ण मित्र; प्रत्येक पहलू से मित्र ही!....कलम और तलवार में वे समानरूप से बादशाह के साथी थे!....और समर्थ के पास अधिक देर तक समर्थ व्यक्ति ही टिक सकता है! बादशाह की बुद्धि और हृदय को किसी मित्र के चिर सामीप्य की आवश्यकता थी जिसकी पूर्ति बीरबल ने की! फ़तहपुर सीकरी के शाही महल के खण्डहरों के पास इस समय भी खड़ी हुई राजा बीरबल की हवेली क्या इसका स्पष्ट प्रमाण नहीं है? भवन की निकटता, हृदय की निकटता की ओर भी संकेत करती है। प्रसिद्ध इतिहास-वेत्ता विन्सेण्ट स्मिथ का कहना है कि राजा बीरबल में बाद-शाह के विचारों को जानने की अद्भुत क्षमता थी और बादशाह स्वयं बीरबल को अधिक से अधिक समय अपने पास रखना पसंद करते थे।

बिदौनी कहता है कि २००० की मनसबदारी तो नाम भर की थी, बादशाह निजी-तौर पर लाखों रुपये और ज़वाहरात राजाजी को इनाम के तौर पर देते रहते थे! क्या सिर्फ हंसाने भर के लिये? सिर्फ खुश करने के लिये?......असंभव!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बादशाह ने राजाजी को तलवार पकड़ना भी सिखाया था; उन्हें समरांगण में भी अपने साथ घुमाया था। मित्रता के साथ-साथ साम्राज्य कारभार का वज़न भी उन्होंने आंशिक रूप से बीरबल पर डाल दिया था। अकबर ने, अपने एक फ़रमान में राजाजी को अपनी सभा के एक स्तम्भ का रूप देकर वर्णित किया है। बहुत-सी लड़ाइयों को अपने बुद्धिबल से रोक देना उनका ही काम था। वे शाही राजदूत और सांधिविग्रहक का काम भी करते थे। उन्होंने डूंगरपुर और चोरा, कालिंजर और मलाबार, सुलतान और रीवां आदि कई राजाओं और बादशाह के बीच की कडुआहट मिटाकर व्यर्थ युद्ध-विग्रह से कई छोटे छोटे राज्यों को बचा लिया था।

बिदौनी स्पष्ट लिखता है कि बीरबल की स्मरण-शक्ति अतीव प्रबल थी, वे विनोद करने और हाजिर-जवाबी में उस वक्त अनुपम थे। कई बार सिर्फ चेष्टा और इशारे से ही वे बादशाह के मन की बात समझ जाते थे।

राजा बीरबल का देहान्त हुआ—फाल्गुन शुक्ला द्वितीया, गुरुवार, १८ वीं फरवरी सन् १५८६ के दिन ! यूसुफ़-जाई पठानों से युद्ध करते हुए !!

'इक़बाल-नाम-ए-जहांगीर' में लिखा है कि सल्तनत पर बैठने से आज तक बादशाह को इतना दुःख कभी नहीं हुआ था। अबुलफ़ज़ल कहता है कि, शाह के हृदय पर यह एक कारुणिक आघात था! बिदौनी भी लिखता है कि इस लड़ाई में (यूसुफ़जाई पठानों से) बहुत से बड़े बड़े सरदार भी मारे गये थे, लेकिन बादशाह को किसी के लिये भी इतना शोक नहीं हुआ, जितना कि बीरबल के लिए! एक जगह तो स्पष्ट-रूप से उल्लिखित है कि इसी शोक में बादशाह ने दो दिन तक अन्न नहीं लिया जब कि तीसरे दिन मरियम-बेगम ने ज़बरन उसका शोक छुड़ाया था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अबुलफ़ज़ल ने अपने 'अकबर नामा' के अन्त में अकबर का एक पत्र उद्धरित किया है जो कि उसने गुजरात के सूबे, तत्कालीन सिपहसालार ख़ानख़ाना के नाम भेजा था। ख़ानख़ाना संस्कृत और ब्रज-भाषा के एक रसिक कवि थे, और फैजी तथा अबुलफ़ज़ल की तरह राजाजी के खास मित्र भी थे। अपने उस पत्र में बादशाह लिखता है :

"इस लड़ाई में हमारी सभा के सुप्रसिद्ध बहुमूल्य रत्न, हमारे दरबार के स्तम्भ, बुद्धिमान मन्त्री राजा बीरबल, जो कि अपनी मित्रता से आप पराजित थे, अचानक इस असार संसार से कूच कर गये हैं।

इस दुःख से हमारी खुशी नष्ट हो गई है। अब हमें यह संसार जन शून्य दिखाई देता है...इस अकल्पनीय आपत्ति ने हमारे हृदय पर गम्भीर आघात किया है। दुःख! महा दुःख!! संसारी सुख की मदिरा में दुःख रूपी कूड़ा भरा हुआ है—यहां की मिठाइयों में ज़हर भरा है...उनके वियोग के आघात का जख़्म हमारे हृदय में इस तरह इतना गहरा है जो अवर्णनीय जैसा है; न उसे पूरी तरह से व्यक्त किया जा सकता है......"

उपर्युक्त पत्र निर्देश करता है कि बादशाह का प्रेम और सौजन्य राजाजी के प्रति कितना था! उनकी व्याकुलता और वियोग का व्यक्तीकरण, कठोर हृदय को भी द्रवित कर सकता है......कहते हैं कि अकबर कवि भी था, राजा जी की मृत्यु के बाद अकबर की यह कविता कितनी गहरी भावना व्यक्त करती है!......

दीन जान सब दीन, एक दुराग्यो दुसह दुःख;
सो अब हमको दीन, कछु नहिं राख्यो बीरबर
पीथल सों मजलिस गई, तानसेन सों राग;
हँसिबो, रमिबो, बोलिबो, गयो बीरबर साथ॥

अकबर और बीरबल की हार्दिक मैत्री की सत्यता के लिए, अब और किस प्रमाण की आवश्यकता रह जाती है?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहा जाता है कि फ़तहपुर सीकरी की राजधानी छोड़ने के बाद फिर अकबर वहाँ कभी वापस नहीं गया, लाहौर से आगरा आने के बाद फिर उसने अपना दरबार वहीं रखा था।

मन्त्री

राजा बीरबल संधि-विग्रहक का भी काम करते थे। एक इतिहासकार का कथन है कि सन् १५६६ ई. में राजा बीरबल ने मलाबार के राजा कजली के वकील की बादशाह से मुलाक़ात कराई, जिससे व्यापार आदि के बारे में संधियाँ हुई।

मुलतान के युद्ध में, दुश्मन राजा को अपनी चतुराई से समझा बुझाकर शांति स्थापित कर देने के कारण राजाजी को बुद्धिमान मंत्री की उपाधि दी गई थी। सन् १५७२ में गुजरात की लड़ाई के वक्त अकबरशाह के साथ राजा बीरबल भी समरांगण में ही थे! सन् १५७३ में राजाजी चोरागढ़ के युद्ध में जेन खाँ के साथ सेनापति के रूप में गये और चोरा नरेश को अपनी वाक्पटुता से समझाकर, उसके द्वारा बादशाह को कीमती उपहार भिजवा कर झुकाया। सन १५७५ में नगरकोट के राजा को भी उन्होंने इसी तरह शान्त किया। उसी तरह डूंगरपुर के राजा को भी उन्होंने व्यर्थ समरांगण में जाने से रोककर बादशाह के साथ संधि करवाई थी।

नवरत्नों की बैठक में राजा बीरबल का अस्तित्व, उनकी मंत्रीपद की योग्यता और यथार्थता की ओर संकेत करता है। यद्यपि वे प्रधान मंत्री अबुलफ़ज़ल अथवा राजा टोडरमल जैसे न थे, और न राजा मानसिंह, राजा भगवानदास या ख़ानख़ाना जैसे अप्रतिम सेनापति; तथापि इन दोनों क्षेत्रों में अपनी योग्यता का परिचय देने की क्षमता उनमें अवश्य थी! इतना ही नहीं, उनकी मृत्यु ही उनकी योग्यता का ज्वलन्त प्रमाण है जब कि उन्होंने बादशाह के सेनाधिनायक के रूप में यूसुफ़-जाई पठानों से लड़ते-लड़ते देह-त्याग किया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्मिथ का अभिमत है कि राजाजी को पठानों से लड़ने के लिए भेजकर अकबर ने भारी भूल की; पर यह खुद स्मिथ साहब की भूल है। जो अकबर चौदह साल की उम्र से युद्ध-भूमि का अनुभवी था, वह कदापि किसी अक्षम या अयोग्य व्यक्ति को समरांगण में सेनापति बनाकर नहीं भेज सकता! प्रतिकूल प्रसंगों में तो अच्छे-अच्छे जगत-विजेताओं को भी पीछे हटना पड़ता है; राजाजी भी ऐसी ही किसी दुरवस्था के शिकार हुए।

हिंदू-मुसलमान सुलह-ए-कुल

गुजरात के महाकवि 'न्हानालाल' मुक्तकंठ से कहते हैं—'अकबर-शाह, हिन्दू-मुसलमान का अद्भुत समन्वय था!'

अकबर के बचपन के गुरु, अब्दुललतीफ़ साहब ने उसे 'सुलह-ए-कुल' का मन्त्र प्रारम्भ में ही सिखा दिया था, जिसका अभिप्राय प्रत्येक व्यक्ति या समष्टि के साथ सुलह या सहृदयता था। अकबर जब तक जीवित रहा, उसने अपने इस मन्त्र को कभी नहीं छोड़ा। यह सच है कि उसने गोंडवाडा की रानी दुर्गावती के प्रदेश को आक्रमण कर के जीता और दक्षिण-प्रदेश को, रिश्वत देकर अपने राज्य में मिलाया, किन्तु प्रत्येक अवस्था में दुश्मन को उसने दया और सम्मान की दृष्टि से ही देखा! चित्तौड़ के पतन के बाद उसीने जयमल-पत्ता जैसे वीर दुश्मन की मूर्ति बना कर आगरे के क़िले में स्थापित कराई। उसने दुश्मनों और प्रतिस्पर्धियों को हमेशा प्रेम और सहृदयता से जीतने का प्रयत्न किया, और इसी के बल पर उसने हिंदुस्तान के विशाल साम्राज्य की नींव डाली, जिसकी बुनियाद में हिंदुओं और मुसलमानों के खून की कुर्बानी समान रूप से हुई थी। बादशाह के दोनों हाथों के समान दरबार के हिंदू और मुसलमान सरदार एकचित्त से दुश्मनों से मोर्चा लेकर उन्हें विजित करते थे; ऐसी विजय का कारण हिंदुत्व और इस्लाम का समन्वय—अकबरशाह था!

समन्वय! सिर्फ युद्ध में ही? नहीं...

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

साहित्य, संगीत, कला, शिल्प, धर्म और समाज—किसी भी पहलू से देखिये, अकबर ने हिन्दू-मुसलमान को एक करने के लिये, उन्हें हिन्दुस्तानी बनाने के लिए ऐसे अनेक स्तुत्य प्रयत्नों का प्रत्यक्ष प्रयोग किया था।

फतहपुर-सीकरी के नये महलों में या आगरे के नये किले में; विशेष रूप से ईरान से बुलाये गये बाग़वानों के हाथों तैयार किये गये बगीचों में या फ़ारसी गुरु और हिन्दू शिष्यों की चित्र कला में...कहीं भी देखिये, ईरानी भारतीय संस्कृति का सुन्दर समन्वय अकबर के राज्यकालीन अवशेषों में दिखाई देता है। अकबर ने स्वयं राजपूतों की तरह केश और दाढ़ीमुण्डन कराया, जब कि उसकी वंश परम्परा तुर्की संस्कृति से अभिभूत थी। हिन्दुस्तानी शेरवानी, बन्दवाले अंगरखे, बंदेश, पगड़ी, दुपट्टे और कमरबन्द को, अक़बरशाह के दरबार में बैठनेवाले तुर्की, फ़ारसी, तूरानी और अफ़गानी सरदारों ने समान रूप से अपनाया था। राज्य-व्यवस्था और सामाजिक व्यवहार के लिए किसी भी संस्कृति अथवा किसी भी धर्म में से जितना भी आवश्यक और योग्य मालूम हुआ, अक़बर ने अपनाया, और दूसरों को अपनाने की सलाह दी।

जहांगीर, अपने पिता अक़बरशाह के लिए 'तुजुगे-जहांगीरी' में लिखता है—वे किसी भी धर्म से द्वेष न करके सभी धर्मों के प्रति समता और सहानुभूति पूर्ण व्यवहार करते थे। उनकी मान्यता थी कि प्रत्येक धर्म में बहुत सी अच्छी बातें हैं और उन्हें समझना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है। मेरे बाबा अक़बर, बहुत गुणग्राहक थे; वे अपने नौकरों और सरदारों में हिन्दू-मुसलमान जैसा कोई पक्षपात न करते हुए, सबों को समान रूप से उन्नति का अवसर देते थे......"

अकबर ने हिन्दुओं के बहुत से उच्च-संस्कारों को तत्परता से अपनाया था, साथ ही साथ उतनी ही तत्परता से उसने सती-धर्म जैसे बहुत से कुसंस्कारों को दफनाया भी था!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और धर्म के बारे में, जहांगीर के कथनानुसार, अकबर किसी भी धर्म में हस्तक्षेप नहीं करता था। अबुलफ़ज़ल अपने 'अकबर नामा' में लिखते हैं कि बादशाह सभी धर्मों की उत्तमता और सत्यता ग्रहण करता रहता था। ईसाई-धर्म की उपासना के लिये उसने आगरे में एक गिरजाघर बनाया था। अबुलफ़ज़ल के कथनानुसार अकबर भी ब्राह्मणों की तरह, दिन में एक ही बार भोजन करता था। बिदौनी के मन्तव्यानुसार, बौद्ध लामाओं और हिंदू सन्यासियों के कहने पर उसने स्त्री-सहवास बहुत कम कर दिया था। हीर विजय सूरि के संपर्क में आने के बाद अकबर ने अधिक कठोरता से पशुवध की मुमानियत की थी। महेरजी राणा के संसर्ग के बाद अकबर अग्निपूजक बना और अबुलफ़ज़ल को उस विधि-संस्कार का मुखिया बनाया। राजा बीरबल के सहवास से उसने सूर्य-पूजा शुरू की और देवीमिश्र के समान ब्राह्मणों को बुलाकर सूर्य के एक हजार नाम कंठस्थ किये और दैनिक सूर्योपासना प्रारम्भ की। अकबर के इबादतखाने में दूर-दूर और देश-देश के धार्मिक उपदेशक आते थे, वाद-विवाद करते और अपनी छाप छोड़कर बिदा होते थे। दम्भी उलेमाओं को उसने हज़ भेजा, विद्वान आलिमों को उच्चासनों पर बिठाया और इस तरह प्रत्येक धर्म में से सत्य-शोधन का अभ्यास और जिज्ञासा जारी रखी। आखिरकार अपनी सभी जिज्ञासाओं के समाधान और सत्य-शोधन का निचोड़ उसने अपने नव-निर्मित "दीन-इलाही" धर्म में एकत्रित किया; अकेले राजा बीरबल ही ऐसे हिन्दू अनुयायी थे, जिसने अकबर बादशाह का "दीन-इलाही" स्वीकार किया!

परन्तु इसे स्वीकार करने के लिये भी उसने कभी किसी पर किसी तरह का दबाव नहीं डाला। अपने साम्राज्य के सभी सूबाओं को उद्देशित करके उसने एक फ़र्मान निकाला था कि वे लोग जनता में प्रचलित धर्म और विश्वास में किसी तरह का हस्तक्षेप न करें।

18640

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बादशाह ने काश्मीर में सर्वधर्मावलंबियों के लिये एक प्रार्थना-मन्दिर बनवाया और अबुलफ़ज़ल ने उसकी दीवारों पर, उपनिषदों के निचोड़—एकमेवाद्वितीयम् को फ़ारसी कविता में बहुत सुन्दरता से खुदवाया था।

किन्तु बादशाह की इसी उदारता की वजह से, बादशाह के बारे में अनेक झूठी अफ़वाहें फैलाई गई थीं क्योंकि कोई भी उसके हार्दिक मन्तव्यों को सच्चे रूप में नहीं समझ पाया था!

...एक दिन, मक्का से एक पवित्र पत्थर लाने वाले हाज़ियों को लिवाने बादशाह नंगे पैर जाता है, उस पत्थर को चूमकर मस्तक से लगाता है; तो दूसरे दिन वही अक्बर बादशाह, अन्ध विश्वास फैलानेवाले उलेमाओं की अकड़ तोड़ने के लिए खुद इमाम का अधिकार लेकर खुतबा पढ़ने के लिए तैयार होता है!...

हिन्दू-मुसलमानों को एकत्रित करने में, दोनों के उच्च-संस्कारों और विचारों में विनिमय करने के लिए अकबर बादशाह की तरह प्रत्यक्ष प्रयास किसी ने न किया होगा!

ईसाई पादरी बारटोली कहते हैं कि अपने विचारों और आशय को गुप्त रखने की अद्भुत कला बादशाह में थी, इसलिए कोई भी उनके मन्तव्यों को भाँप न सकता था; इसीलिए साधारणतया देखने वाले को आज दिखाई देनेवाले अकबरशाह और कल के अकबरशाह में ज़रा भी समानता मालूम नहीं होती थी। पादरी दुजेरिक का कथन है कि साधारण प्रजाजनों के लिए उसके मन में इतनी सहानुभूति और उत्साह था कि कई बार बड़े बड़े अमीरों की कीमती सौगातें एक तरफ रखकर वह गरीब प्रजाजनों की मामूली भेंट भी बहुत प्रेम-पूर्वक स्वीकार करता था।

महाकवि न्हानालाल का अभिमत है कि सर्वसमन्वय और सब के कल्याण की उदात्त भावना के फलस्वरूप अकबर की प्रजा में अकबर के प्रति अतीव श्रद्धा और आदर था। इतना ही नहीं, बहुत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

से हिन्दू-मुसलमान उसे चमत्कारिक पुरुष मान कर पूजते थे, उसकी मनौती रखते थे, और बहुत सी बीमारियों को दूर करने के लिए बादशाह के मंत्र से फूंका हुआ पानी ले जाते थे। अबुलफ़ज़ल का कथन है कि ऐसे मंत्रों से अनेकों रोग नाबूद होने के कई उदाहरण प्रत्यक्ष हुए थे। फिर भी बादशाह के मन को चीन्ह लेना बहुत कठिन था। हिन्दुओं के साथ हिन्दू, मुसलमानों के साथ मुसलमान; नाज़रीनियों के साथ नाजरीनी और पारसियों के साथ बादशाह पारसी बन जाते थे। निःसन्देह अकबर सभी धर्मों का था, और सभी धर्म उसके थे!

महाकवि न्हानालाल सच ही कहते हैं:—

"हिन्दू नुं पूजन छे काशी मां,
इस्लाम नी निमाज़ छे मक्काशरीफे;
अकबरशाह ना दीने इलाही नां,
नमन छे ने पूजन छे, दशे दिशा मां।"

यह अत्यधिक संभव है कि बादशाह की ऐसी अनेकविध प्रवृत्तियों में, राजा बीरबल भी उनके मंत्री, मित्र और साथी के तौर पर हमेशा साथ रहे हों।

कवि और कवि-मित्र

राजा बीरबल, 'राजा' या 'बीरबल' बनने से पहले कवि थे, और लोकप्रिय भी। कवि ब्रह्म और बीरबल के नाम के मुक्त कवित्त अब भी कहीं कहीं पाये जाते हैं। राजा जी की अद्‌भुत प्रतिभा के सामने मलिन पड़ जाने वाले बहुत से सरदार, पण्डित, हिन्दू और मुसलमान उनके प्रति ईर्ष्या से जला करते थे; किन्तु उनके प्रशंसक भी कम न थे! एक सौ एक पुस्तकों का रचयिता कवि-श्रेष्ठ फैजी उनके बन्धु अबुलफ़ज़ल, खानखाना, कवि गंग और कवि नरहरि वगैरह, उनके निकटस्थ प्रशंसकों में से थे। राजा जी की कविता उच्चकोटि की होती थी, जिसके बारे में कहा जाता था कि—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उत्तम पद कवि गंग के, उपमा में बरबीर।

...और राजा जी सिर्फ़ कवि ही नहीं थे, दानी भी थे। "मासिरुलउमरा" के मुस्लिम लेखक ने ज़ोर देकर लिखा है कि राजा बीरबल अपने समय के अकेले दानी-पुरुष थे—दूसरा कोई भी उस वक्त उनकी तुलना में नहीं आ सकता था। कवि गंग कहते भी हैं कि—

बूचन से न कानूँगो, न दाता बीरबर से !'

कवि केशव कहते हैं:—

भू, रवि, पक्षी, पशु, नर, नाग, नदी, नद, लोक रचे दश चारी;
केशवदेव अदेव रचे, नरदेव रचे, रचना न निवारी।
रचि के नृपनाथ बली बलबीर, भयो कृत कृत्य महाव्रतधारी;
दै करतारपनौ कर तोहि, दई करतार दुहूँ कर तारी !!

लोकरंजन की प्रचलित दन्तकथाओं में भी, ग़रीब, विद्वान और कलाकारों के प्रति बीरबल की सहानुभूति और सहायता के अनेक उदाहरण हैं।

राजाजी शौकीन थे। धन जितने वेग से आता, उतने ही वेग से वे उसे खर्च कर डालते थे। उनकी निजी बैठकों में हर समय कवि और कलाकार उमड़ते रहते थे। कवि 'गंग' उनकी निजी बैठक का वर्णन करते हुए कहते हैं :—

मालती शकुन्तला सी, कोहे काम कंदला सी,
हाज़िर हज़ार चारु नटी नौल नागरै।
ऐल फेल फिरत खवास खास आसपास,
चौवज की चहल, गुलाबन की गागरै।
ऐसी मिजलस तेरी देखी राजा बीरबर,
'गंग' कहे गूँगी व्है के, रही छै गिरागरै।

राजाजी जिये; क्योंकि वे जीना सीखे थे।
राजाजी मरे—वे मरना जानते थे !........

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

...यही है बादशाह और बीरबल के व्यक्तित्व के पीछे छुपी हुई ऐतिहासिक भूमिका। इसमें कल्पना के रंग मिलाकर भी, ऐतिहासिक सत्यता बनी रहे इस ढंग से पात्रों और घटनाओं का चित्रण किया है—कुछ स्वच्छन्दता भी बरती है। एक ओर सलीम की उम्र में दो-चार साल बढ़ाये हैं, तो दूसरी ओर राजाजी को आठ-दस साल छोटा भी बनाया है। राजाजी, अकबर से उम्र में बड़े थे, ऐसा माना जाता है, किन्तु इस उपन्यास में उन्हें समवयस्क से भी छोटा बनाने की धृष्टता की गई है। कहानियों में सिर्फ़ एक जगह, उनकी पत्नी को उनके मरने के बाद भी जीवित रखा है। उपन्यास के आवश्यक रसाकर्षण को कम न होने देने के लिए ही ऐसा करना पड़ा है।

....और फिर तीन सदियों से, लोगों की जीभ में रम जाने वाली कहानियों को कैसे भुलाया जा सकता है? क़रीब डेढ़ सौ से अधिक दन्तकथाओं में से चालीस कहानियों का उपयोग मैंने किया है। यहाँ भी कल्पना मिश्रित ऐतिहासिक उपन्यास को ले कर कुछ कुछ डर-सा लगता है, किन्तु घटनाओं और पात्रों को यथाशक्य इतिहास से विमुख नहीं होने दिया गया है।

अकबरी दरबार

अन्त में कवि 'गंग' लिखते हैं:—

दिल्ली से न तख्त, बख्त मुग़लन से होय हैं,
होय है नगर न कहुँ, आगरे नगर से।
खानन में खानखाना, राजन में राजा मान,
हो हैं न वज़ीर कहूँ, टंडन टोंडर से।
कवि 'गंग' से गुनी, न तानसेन तानधारी,
बूचन से न कानूँगो, न दाता बीरबर से।
सात द्वीप के मँझार, सातहु समुद्रपार,
हो हैं न जलालुद्दीन, गाज़ी अकबर से।

यही है परिचय और भूमिका।

पाठकों का ऋणी,

रामचन्द्र ठाकुर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हक़ीक़त

'माफ़ कीजियेगा बीरबलजी, आपके अज्ञान पर मुझे दया आती है!' भीतर से डरते हुए, पर बाहर से विद्वत्ता का ढोंग करते हुए, मैंने दुस्साहस करके कह ही डाला!

'ख़बरदार!' शेर की तरह लाल लाल आँखें दिखाकर बीरबलजी चिल्लाए!

मेरी आँखें खुल गईं।

'तू जानता है कि मैं राजा हूँ!' मुझे धमकाते हुए उन्होंने पूछा।

'सुना तो है।' गला साफ़ करते हुए मैंने कहा।

'सुना है?' वे फिर चिल्लाए। मैं गिरते गिरते बचा। 'मुझे तेरे अज्ञान पर दया आती है। बेवकूफ़, देखता नहीं कि मैं तेरे सामने ही खड़ा हूँ? मैं था नहीं, हूँ। फिर सुनने न सुनने का सवाल ही कहाँ रहता है? मूर्ख, बेवकूफ़!'

मुझे भी क्रोध हो आया! कहाँ वह किताबी बीरबल, और कहाँ मुग़लाई पोशाक में डटा हुआ यह रोबदार बीरबल! फिर भी साहस करके मैंने कह ही डाला—

'मिस्टर बीरबल, मुझे कहने दीजिये कि आप मेरा अपमान कर रहे हैं; आपकी सभ्यता की सतह मुझे बहुत नीची दिखाई देती है।'

'अरे मतिभ्रम! अपमान मैं कर रहा हूँ या तू? तू मुझे गाली क्यों देता है? मुझे मिस्टर—मिस्टर से भी ख़राब 'बीरबल' कहकर पुकारता है! सभ्यता मुझमें नहीं है या तुझमें? माना कि मैंने तुझे गाली ही दी हो, तो इससे क्या? पुस्तक, सभा और औरत की हाज़िरी, इन तीनों को छोड़कर जो आदमी गाली नहीं दे सकता, वह जीने के भी लायक नहीं!—ख़ैर, हम लोग कहाँ रुके थे?—हाँ, यह सोलहवीं सदी है!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

‘जी !....ज्यों ज्यों आप बोलते जाते हैं, त्यों त्यों मेरी निराशा बढ़ती ही जाती है—’ ललाट पर आया हुआ पसीना पोंछते पोंछते मैंने कहा—‘यह तो है–१९४७ बीसवीं सदी; समझे, मिस्टर !’

‘अबे, तूने फिर गाली दी ?–अरे कोई है ?’

‘पर’ जनाब हुआ क्या ? ‘मैंने एकदम घबराकर पूछा।

‘मुझे मिस्टर क्यों कहते हो ?’

कमज़ोर होने के कारण मुझे ग़ुस्सा तो बहुत आया, लेकिन उसे दबाकर संयत-स्वर में कहा–‘जनाब, हिन्दुस्तान का बच्चा-बच्चा जानता है कि मिस्टर का मतलब क्या होता है–और आप नहीं जानते ? ख़ैर, यह दूसरी भाषा का शब्द है।

‘महोब्बतसिंह, इस मुछमुण्डे को बाइज़्ज़त यहाँ से बाहर ले जाओ, और बेइज़्ज़त करके हिन्दुस्तान के बाहर फेंक दो ! जिसे गाली देने के लिए भी दूसरी भाषा की मदद लेनी पड़े, वह हिन्दुस्तान में रहने के लायक भी नहीं !

‘लेकिन मेहरबान ! जो मैंने कहा, वह गाली नहीं है....जिसे राजाओं के राजासे भी बढ़कर माना जाता है उन चर्चिल साहब को भी ‘मिस्टर’ कहकर पुकार सकते हैं’ !

‘चुप रहो !’

‘अच्छी बात है—’घबराहट को दबाकर मैंने कहा–‘मुझमें ताक़त नहीं है, इसलिए मुझे आप चाहे जहाँ फिंकवा सकते हैं—लेकिन टेल मी यू सर, आप ने ही मुझे यहाँ बुलाया है, यह न भूलें !

मेरे ये शब्द सुनकर बीरबलजी कुछ कहते कहते रुक गये। विशालकाय महोब्बतसिंह और दूसरे मुग़ल सिपाहियों को देखकर मैं स्तब्ध रह गया ! वहाँ बादशाह अकबर न थे; फ़ैजी या नवरत्नों में से भी वहाँ कोई नहीं था जिसे देखकर मैं सहायता के लिए चिल्लाता। पुराने महल में अपनी काँपती काया को किसी तरह सम्हालकर मैं खड़ा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

था। जान लेने की धमकी देकर मुझे यहाँ पकड़कर लाया गया था। लेकिन मेरे आखिरी शब्दों से राजाजी को चुप होते देखकर मुझे खुशी हुई—मैंने हाज़िरजवाबी, लाजबाब, लाइल्म राजा बीरबल का मुँह बन्द कर दिया था!

आपके इन पहलवानों को काइन्डली वापस भिजवा दीजिये—थैंक यू —, अपनी काँपती हुई अंगुलियों को किसी तरह दबाकर बनावटी हँसी हँसते हुए मैंने अपनी आदत के मुताबिक आधी स्वदेशी और आधी अंग्रेजी में बोलना जारी रखा।

'हूँ'....कुछ देर सोचकर उन्होंने सिपाहियों को चले जाने का इशारा किया, और मूँछों को धीरे धीरे सहलाते हुए पूछा—'तुझे विश्वास है कि तू मेरा जीवन चरित्र लिख सकेगा?'

'मुझे नहीं, आपको विश्वास है, इसीलिए आपने मुझे यहाँ बुलाया है!' तालु से चिपकी हुई जीभ को ज़ोर देकर छुड़ाते हुए मैंने कहा।

बीरबल ने तीक्ष्ण-दृष्टि से मेरी ओर देखते हुए पूछा—'तू विदेशी तो नहीं है न?'

'नान्सेंस, जनाब मैं पूरा हिन्दुस्तानी हूँ!'

'अँ—हँ—' सिर हिलाते हुए उन्होंने कहा—'शरीर देशी, लेकिन विचार बिल्कुल विदेशी। खैर, अब बता—नान्सेंस याने....?'

'जनाब, यह अँग्रेजी शब्द है; आप नहीं जानते तो पूछना भी बेकार है; इतना विश्वास रखें कि मैं आपको गाली नहीं दे रहा! अब हमारी बातचीत में अँग्रेजी भाषा को नहीं घुसने दूँगा। प्रॉमिस फ़रमाइये, मैं आपके लिए क्या कर सकता हूँ!'

'अँ—हँ—' मानों बीबरलजी ने पुनः निराश होकर सिर हिलाया —'विचारों से तो तू बिलकुल विदेशी मालूम होता है—तुझे तो ठीक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

से बोलना भी नहीं आता ! तेरी वाक्य-रचना तो देख—शब्दों की सारी मधुरता अदृश्य हो जाती है ! हा: शारदे !'

'देखिये साहब ! परीक्षाएँ ले लेकर यूनीवर्सिटी वालों ने मुझे ऐसी हालत में ला रखा है कि अब अगर कोई आदमी, किसी भी तरह मेरी परीक्षा लेने का प्रयास करे तो इच्छा होती है कि उसे गोली ही मार दूँ ! माफ़ कीजियेगा, मैं आपके बारे में नहीं कहता—मतलब यह, कि क्या आप मेरी परीक्षा लिये बगैर ही मूल बात पर आने की कृपा करेंगे ?'

'मेरा जीवन-चरित्र लिख दे !'

'यह बात आपने मुझे चौथी बार कही है !'

'नहीं, चौथी बार तो मुझे तू पूछ रहा है। बोल, लिखेगा या नहीं ? याद रख, इन्कार करने वाले को मैं कभी नहीं छोड़ता !'

'आपकी कहानियाँ पढ़कर, इस बात का विश्वास तो पहले हो चुका है !'

'तो फिर घबराता क्यों है, सोचता क्या है ?....संशयात्मा विनश्यति ! अरे, महोब्बत !'

' बस, जनाब ! आपकी यह आदत मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है....जरा-जरा सी बात में आप महोब्बतसिंह को क्यों याद करते हैं ?....मैं आपको साफ़ जता देता हूँ—इस वक्त मुझे मरना बिलकुल पसन्द नहीं।...'

'अच्छा, अब नहीं बुलाऊँगा...' मेरी घबराहट पर हँसते हुए उन्होंने कहा—'अब पूछ !'

घबराहट को दूर करने के लिए, गला साफ़ करके फिर से ललाट का पसीना पोंछकर मैंने पूछा—'आप नाराज़ तो नहीं होंगे ?'

'अच्छा, न हूँगा, बस !'

'आप की असली जाति क्या है ?—माफ़ कीजियेगा !'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'निर्बल ! निर्बुद्धि तुझे जाति से काम है, या काम से ?'

'टु बी फ्रैंक विथ यू ! माफ़ कीजिएगा...साली अंग्रेजी बोलने की आदत ही पड़ गई है...बात यह है जनाब, कि कोई कहता है आप भाट हैं, कोई कहता है आप ब्राह्मण हैं...और कोई कहता है—अब क्या कहूँ जनाब !—कि आप किसी जाति के नहीं !'

'मैं किसी जाति का नहीं !' अपनी मूछों पर ज़ोरों से बट देते हुए राजा साहब ने कहा।

मैंने ज़रा और उत्साह में आकर कहा—'और, माय डीयर !... माफ़ कीजिएगा, कोई कोई तो यह भी कहते हैं कि आपकी हस्ती ही नहीं थी !'

'तू क्या मानता है ?' गम्भीरता पूर्वक उन्होंने मुझसे पूछा !

'मैं....मैं ! जनाब, मैं तो आपका सेवक हूँ—जो आप कहेंगे, मानूँगा—लिखूँगा भी !'

'हूँ !' कुछ सोचते हुए उन्होंने फिर से मूँछों पर हाथ फेरना शुरू किया, मुझे कुतूहल हुआ; कुछ देर रुक कर वे बोले—'आजकल ब्राह्मणों ने अधोगति का रास्ता पकड़ रखा है, इसलिए उनके कल्याण के लिए मुझे ब्राह्मण समझ कर ही लिखना—शायद इस बात से खुश होकर वे फिर उन्नति करें !'

'जनाब, यों तो इन दिनों ब्राह्मणों ने काफी उन्नति की है ! हमारी सदी के अनेक ब्राह्मणों को तो शायद आप ब्राह्मण कहते हुए भी संकुचित होंगे—और कई तो यहाँ तक सुधर चुके हैं कि उन्हें देख कर आप के मुँह से 'ब्राह्मण' शब्द ही न निकलेगा !'

'वाह !'

'वाह ?' मैंने चौंककर पूछा।

'हां, इसमें तेरे बाप का क्या जाता है ? वे जिस दिशा में प्रगति

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

करेंगे, आख़िरकार, उन्हें उसी तरफ़ पलटना होगा—इस पार या उस पार !'

'बहुत अच्छा, जनाब ! बहुत ठीक !' मैंने ज़रा खुशामद करते हुए कहा। फिर आवाज़ कुछ धीमी करके पूछा—'क्या यह बात सच है कि आप बादशाह अकबर की सिर्फ़ खुशामद ही करते थे !'

'क्षुद्र ! क्या कहा ?' आवाज़ को बुलन्द करके उन्होंने पूछा।

मेरी जीभ फिर तालू से चिपकने लगी।

वे फिर चिल्लाये—'तू किस से बोल रहा है ? मैं कौन हूँ ? वाचस्पति महेशदास, कविराज ब्रह्म, राजा बीरबल, मुसाहिबे दानिशमन्द—समझा ? नहीं समझेगा ! यह उर्दू है, हिन्दुस्तान की एक ही ज़बान—'

मैं फिर घबराया; राजाजी समझ गये।

घबरा नहीं, महोब्बत को नहीं बुलाऊँगा—यह तो ऊँची आवाज़ से बोलने की मेरी आदत ही पड़ गई है ! भाई, बात यह है कि, दुनिया में ख़ुशामद किसे पसन्द नहीं ! लेकिन ख़ुशामद, ख़ुशामद में फर्क होता है। जो है ही नहीं, उसे 'है' कहकर प्रशंसा की जाय, वह पहली ख़ुशामद। जो 'है' उसे बढ़ाकर कहा जाय, वह दूसरी ख़ुशामद और जो 'है' उसे 'है' कहना यह तीसरी ! क्या तीसरी को भी 'ख़ुशामद' कहा जा सकता है ? मैंने तीसरी को पसन्द किया है !'

'अच्छा जनाब, सच कहियेगा—ज़रा नाज़ुक सवाल है। आप ने मुझे अपने बारे में एक किताब लिखने के लिए बुलाया है। जिस तरह मरीज़ का, डॉक्टर से लजाना; दीवालिये का, वकील से हक़ीक़त छुपाना और पत्नी से पति का सब कुछ छुपाना फिज़ूल है—यू सी ? मैं तो आप के लिए अच्छा ही लिखूँगा, लेकिन आपकी सचाई—हकीक़त—तो मुझे जाननी ही चाहिए ! ठीक है न ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'हँ !' राजाजी ने मेरी आँखों में आँखें डालकर कुछ क्षण रुककर कहा—'तुझ में बुद्धि ज़रूर है !'

'जो न होती तो आप मुझे कहाँ बुलाने बैठे थे ?'

'अँहँ ! मैं तो निर्बुद्धियों को ही बुलाता हूँ !'

'जनाब जीवन-चरित्र लिखने के लिए तो बुद्धि की सख़्त ज़रूरत है !'

'घबरा नहीं, अभी तुझ में बुद्धि शेष है !'

'थैंक यू सर, थैंक यू वेरी मच। क्षमा...'

'क्षमा किया !'

'सच बात तो यह है कि आपके बारे में जितनी भी कहानियाँ मैंने पढ़ीं, वे मुझे तो क़रीब क़रीब 'हंबग्' ही लगीं ! या तो अकबर बादशाह को कोई काम-धन्धा ही न होगा, या आपको भंग पीने का अनिवार्य व्यसन रहा होगा !'

'मैं यू. पी. का हूँ !'

'यू. पी. ?' चौंककर मैंने पूछा। 'क्या राजा बीरबल को भी अंग्रेज़ी का शौक़ चर्राया ?

'कमअक़ल, शुरू शुरू में तूने ही तो कहा था कि मैं यू. पी. का हूँ !

'सॉरी...है !' मैंने विलायती शिष्टाचार दिखाया।

'मैं यू. पी. का हूँ, कवि हूँ; भँग पीना तो मेरे व्यसनों में शुमार होना ही चाहिए !'

'लेकिन हमारी बीसवीं सदी के बहुत से यू. पी. के महान् कविगण भंग नहीं पीते !'

'असम्भव ! तो मैं उन्हें कवि कहने के लिए तैयार नहीं !'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'ख़ैर, जनाब...क्या आप यह मानने के लिए भी तैयार नहीं कि हम मूल विषय से बहुत दूर भटकते जा रहे हैं !'

'यह तेरी ग़लती है; तुझे सीधी राह पर चलना ही नहीं आता !'

'आप ग़लत फ़रमा रहे हैं जनाब ! यह तो युनीवर्सिटी की ही भूल है; उन लोगों ने हमें सीधी राह पर जाने ही नहीं दिया; परीक्षा देते वक्त हमारी जो आदतें थीं, वे अभी तक जारी हैं !'

'तू मूर्ख है !'

'हूँगा ! पर मेरे सवाल का जवाब नहीं है !'

'तो सुन ! दुनिया की सभी कहावतों, कहानियों और दन्तकथाओं की बातों पर ध्यान देकर विचार कर....' राजाजी ने इस बार अत्यधिक गंभीर होकर कहना शुरू किया, और मैं भी उसी तरह गम्भीर होकर सुनने लगा—'उन सबों में कुछ न कुछ उद्देश्य जरूर होता है, जो उपदेशात्मक या भला होता है, और किसी भी कल्याणकारी उपदेश में कहीं न कहीं सत्य का अंश जरूर होता है—हम यह भी कह सकते हैं कि वह उद्देश्य सत्य ही होता है। पुराणों और पौराणिक कथाओं में भी ऐसा ही सत्य निहित रहता है। वह सत्य किस रूप में कहाँ छुपा है, यह ढूँढ़ निकालना तेरा काम है। हर एक कहानी अपने समय की सच्ची झलक व्यक्त करती है। यद्यपि उस कथा के पात्र मिथ्या हों, घटनाएँ झूठी लगें और कथितव्य असम्भव ज्ञात हो, तथापि इसका विश्वास तुझे करना ही होगा कि इन दन्तकथाओं या गप्पों का आधार सत्य पर ही होता है ! उसी तरह हमारी कहानियों में भी सत्य निहित है—उस सत्यांश को सही तौर पर खोज निकालना अब तेरा काम है !'

'जनाब, बड़ी मेहरबानी, लेकिन....'

'फिर लेकिन ?'

'जनाब ! यू. सी.... बात यह है कि आपकी कहानियों में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अकबर बादशाह को बिलकुल बेवक़ूफ बनाया गया है !'

'तो इसमें अकबर क्या करें ? कहानियाँ कहने वाले ही बेवक़ूफ थे !' ...

'बहुत ठीक, जनाब, बहुत बेहतर !.... तो इनमें से कितनी कहानियाँ सच्ची मानी जायें ?'

'जितनी भी सच्ची मालूम हों ?'

'महाशय, मैं आपका कृपाकांक्षी हूँ ! मुझे कुछ हकीक़त भी तो बताइये !'

'असम्भव ! मैं इतना बेवक़ूफ नहीं हूँ कि आज तक पाई हुई कीर्ति पल भर में खो दूँ ! और मेरी कीर्ति सही और ग़लत, दोनों तरह की कहानियों पर आधारित है !

'देखिये महाशय....क्या कहूँ ?....आपने मुझे बुरी परिस्थिति में ला रखा है—एक उदाहरण से आपको मेरी हालत का ज्ञान होगा; गुस्ताख़ी माफ़ कीजियेगा—आप के नाम पर कही जाने वाली कहानियों में आप दो दो बार शादी करते हैं, और तीन तीन बार नाचने वालियों के रखे हुए चाकर दिखाई देते हैं। माफ कीजियेगा ! अब इनमें कौन सी बात सच समझूँ ? बस महाशय, यह असम्भव है ! ना, मैं आपके बारे में कुछ नहीं लिख सकता !.... मुझे याद आ गया ?'

'क्या याद आ गया ?' तख्त पर से क़रीब क़रीब उठते हुए राजाजी ने पूछा।

'देखिये महाशय, आप बहुत कम रोमाण्टिक हैं... यू. सी, रंगीन नहीं हैं !'

'ख़बरदार !' सम्पूर्ण कक्ष को कँपाते हुए राजाजी चिल्लाए—'मूर्ख मैं कवि हूँ !' राजाजी की डांट से एक बार फिर तालु से चिपकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हुई जीभ को मुश्किल से छुड़ाकर विनीत स्वर में मैंने फिर कहना शुरू किया—'लेकिन जनाब, मेरे नायक को बिल्कुल रोमांटिक होना चाहिए... आपकी आंतरिक अवस्था अर्थात् निजी जीवन का तो कहीं भी उल्लेख नहीं मिलता....अर्थात् आपके लिए लिखी जाने वाली कहानी रोमांस के बगैर बिलकुल नीरस हो जायगी....निरर्थक कागज़ रँगने से क्या लाभ ?'

'तू विवाहित है ?'

'जी जनाब! —लेकिन...'

'यह तेरे सवाल का जवाब नहीं है यही न? अल्पज्ञ! यही तो सही जवाब है...अपने आप को देख, अपने आसपास देख, अपने विवाह की बात पर ग़ौर कर...'

'ठहरिये जनाब !' उनकी बात बीच ही में काटकर मैंने कहा— 'विवाह का रोमांस से क्या सम्बन्ध ? हम लोग तो विवाह के बाद ही रोमांस करते हैं, अपनी पत्नी से नहीं, किसी दूसरी युवती से ! और जनाब, रोमांस के शुभ परिणामस्वरूप हम एक के बाद दूसरी को ब्लाक में, याने ज़नानख़ाने में बिठा देते हैं। बहुधा हम लोग विवाह से पहले रोमांस करते हैं और विवाह के बाद तलाक ले लेते हैं। कई बार हम लोग विवाह न करके सिर्फ रोमांस को ही उपयुक्त मार्ग समझते हैं ! यू सी, रोमांस के इतने प्रकारों में से आप किस रोमांस के योग्य हैं, यह सोचने की बात है। यू. सी ! अगर आप बीसवीं सदी के होते तो आपके नाम पर पांच उपन्यास लिख डालता, लेकिन आप ठहरे सोलहवीं सदी के—नहीं, आपको लेकर कम से कम नॉवेल तो एक भी नहीं लिखा जा सकता !

'तू विवाहित है ?'

'मेरे जनाब, मैं कह चुका हूँ कि मैं विवाहित हूँ !'

'बस, जा लिखना शुरू कर—लिख सकेगा !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'परन्तु राजा साहब...' मैंने दीन बन कर कहा—'आपके जीवन की घरेलू बातें नहीं के बराबर हैं, ऐतिहासिक उल्लेखों में आप के नाम को छोड़ कर कुछ प्राप्य नहीं, अथवा जो है, उसमें मृत्यु के सिवा कुछ भी आधारभुत नहीं है, और वह भी कैसे हुई, इसे कोई नहीं जानता ! जब तक जीवित रहे, और मरते वक्त भी हरएक को आप चुटकियों में बहका कर छटकते ही रहे हैं। ऐसी परिस्थितियों में, एक्सक्यूज़ मी सर, मैं कुछ भी नहीं लिख सकता !'

'मुझे मरा हुआ समझता है ? क़मबख्त ! अरे मोहब्बत !'

'बात क्या है जनाब ? आपने मुझ से वायदा किया था, फिर भी आप उन राक्षसों को यहाँ बुलाते हैं ? मैं सुसभ्य आदमी हूँ, जंगलीपन मुझे ज़रा भी पसन्द नहीं, मैं किसी भी हालत में आपके सामने बन्दूक, या तलवार से कट मरने के लिए तैयार नहीं हूँगा !'

'तेरा चेहरा ही खुद कहे देता है !'

'मेहरबानी, जनाब !'

'तो फिर लिखता है या नहीं ?'

'क्या लिखूँ ?'

'मेरे नाम पर एक किताब ! क्या सारे दिन तेरे सामने घास काटता रहा हूँ ?'

'जनाब, मैं कैसे लिख सकूँगा ? मैं मामूली आदमी हूँ, मेरी हँसी होगी !

'कम अकल ! मेरे नामकी कहानियों, दन्तकथाओं और ऐतिहासिक घटनाओं में छुपे हुए सत्य को खोज निकालना तेरा काम है, खोज कर लिखना तेरा काम है, और लिख कर लोगों को देना भी तेरा ही कर्तव्य है ! बस, लिखना शुरू कर दे।'

'पर पढ़ने वाले मेरी लिखी हुई बातों को सत्य मानेंगे ? लोगों को मेरी बात रुचेगी ? आखिर मैं क्या समझूँ ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'देख लड़के! सौ बात की एक बात—अगर लोग उसे पसंद करें तो समझ लेना कि मेरे जीवन के प्रसंग बहुत सुन्दर थे, और पसंद न करें तो समझ लेना, तुझमें कुछ कमी है —तूने कहीं भूल की है!'

'जनाब...पर मैं लिखूँ क्या ? जीवनचरित्र, ऐतिहासिक-निबन्ध, उपन्यास, कहानी, आख्यायिका, पुस्तिका—'

लेकिन मेरा वाक्य पूरा होने के पहले ही राजा बीरबल सिंहासन से उठे और मुझे अबोध बालक समझकर दो तीन चपत लगा दीं, और चले गये। मेरा सिर चकराया, और मैं नीचे गिर पड़ा।

...और मेरी आँखें खुलीं–मुझे विश्वास हुआ कि वे अब सचमुच खुली थीं—राजा बीरबल और अपने 'नवरत्नों' के बीचों-बीच सुशोभित शहंशाह जलालुद्दीन अकबर के चित्र मेरे सामने पड़े थे और मैं उन्हें एक टक देख रहा था!

उसी तरह, जाने किन विचारों के परिवर्तन से मैं प्रायः दो घंटे तक बारबार उन्हीं प्रतीकों को देख देख कर सोचता रहा और सोच सोच कर देखता रहा और फिर राजा बीरबल का नाम लेकर उन्हीं के कहे शब्दों की याद करके लिखने बैठा—वही आज आपके हाथों में है!

—रामचन्द्र ठाकुर

[द्वितीयावृत्ति से]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पीछे क़दम बढ़ाइये....

इतिहास के राजमार्ग पर, पौने चार सौ साल पीछे !

....और देखिये उस वक्त के प्रगतिशील ज़माने को !

यह सन् १५६८ ईस्वी है ! काबुल, लाहौर, मालवा और गोंडवाणा की सीमाओं को विजित करती हुई मुग़ल सेना दिनोंदिन आगे बढ़ती जा रही है। 'गढ़ तो चित्तौड़गढ़ और सब गढ़ैया' की विशेषता से विभूषित चित्तौड़ के अजेय दुर्ग को भी अनेक वीरों की आहुति लेकर मुग़ल सेना के सामने झुक जाना पड़ा है; रणथम्भौर का पतन भी अधिक दूर नहीं !

ऐसे दिनों में आगरे का अकेला किला अपने टूटे हुए साथियों के यश की यादगार बनकर खड़ा है !....

....इन्हीं दिनों, एक ढलती दुपहरी को, काल्पी के घने जंगल में, सत्ताईस वर्ष का एक युवक हिरन की चाल वाले एक अरबी घोड़े पर, हवा के वेग से दौड़ा चला जा रहा था !

चंगेज़ और तैमूर का वह चग़ताईवंशी कुलदीपक, जिसने हिंदुस्तान को अपनाया और अपना घर बनाकर अपने पिता और पितामह का अधूरा कार्य पूरा किया; हिंदुस्तान में जन्म लेकर, स्वयं 'हिंदुस्तानी' बनकर, द्वेषाग्नि और अहंकार में भ्रमित होकर, एकता और बन्धुत्व के शत्रु बन जाने वाले मूढ़ लोगों को एक साम्राज्य और एक छत्र के नीचे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'हिंदुस्तानी' बनाने के लिए जिसने जी-जान से परिश्रम किया; जिसने हिन्दुस्तानी को 'हिन्दुस्तानी' बनाने के लिए धर्म और मज़हबों की परवाह करना छोड़कर समाज को दुतकारा, रूढ़ियों को तोड़ा और भारत की आन बान और शान का प्रसार भारत से बाहर, अरब और मिस्र से भी सुदूर इंगलिस्तान तक कर दिया; वही था हिन्दुस्तान का यह पहला "हिंदुस्तानी' बादशाह! आज वह शिकारी की पोशाक में काल्पी के गहन वन में एक सिंह का पीछा कर रहा था। लोग उसे शहंशाह जलालुद्दीन अकबर कहकर पुकारते थे!

शिकार और साहस, ये दोनों 'भयजनक भाव' शहंशाह अकबर के शौकों में शुमार थे, इसीलिए दूसरे अनेक कारणों के होते हुए भी, बादशाह, ग्रामीणों को सताने वाले एक सिंह का, आज सुबह से अविराम पीछा कर रहा था। इस अकबर बादशाह की विजय नीति दो भागों में विभक्त थी—राज्यों को जीतने के लिए वह सेना का प्रयोग करता था और लोगों को जीतने के लिए प्रेम का! यही कारण था कि राज्य के किसी भी ग्रामीण को बादशाह के पास पहुंचने के लिए अधिक बाधाओं का सामना नहीं करना पड़ता था। एक साईं के दर्शन करके लौटने पर बादशाह को स्थानीय गाँव वालों ने नज़राना चढ़ाने के साथ ही साथ, गाँव के सबसे बड़े शत्रु सिंह को विजित करने की प्रार्थना की। बादशाह को उस वक्त ऐसे ही अवसर की अभिलाषा थी। अपनी बड़ी संरक्षक सेना को वहीं छोड़कर उसने, छाया की तरह साथ रहने वाले अपने दो हुज़ूरियों—अतगबेग और कल्याणमल को साथ लेकर सिंह का पीछा शुरू किया। सिंह आगे था और बादशाह पीछे। सुबह से दोपहर और दोपहर से तीसरा पहर हुआ किंतु न सिंह थका, न बादशाह ही!

'हवाई हाथी' जैसे गजराजों को खाली हाथों वश में करने और अनेक शेरों को अकेले ही विजित करने वाले अकबर बादशाह को आज इस सिंह ने खूब छकाया! बादशाह की धुन और एकाग्रता सिंह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अन्त में सिंह, काल्पी की एक छोटी पहाड़ी की झाड़ियों में घुसने के साथ ही बादशाह के व्यूह में फँस गया। देखते ही देखते अरबी घोड़ा हिरन की तरह चौकड़ी भरता हुआ झाड़ियों में घुसा और बादशाह ने भुजा भर कर अपना मेवाड़ी भाला भागते हुए सिंह के पेट में भोंक दिया; सिंह उलट कर जमीन पर लोटने लगा। तत्क्षण बादशाह घोड़े पर से कूदा और तलवार निकाल कर आगे बढ़ा; किन्तु उसी समय घोड़ा ज़ोरों से हिनहिनाया। बादशाह ने डपट कर देखा कि इस सिंह की सिंहनी उछल कर उस पर धँसने को ही थी, किंतु तलवार वाले हाथ के पूरे बल से लगातार वारों से बादशाह ने सिंहनी को जमीन पर सुला दिया। साथ ही साथ उसने आहत सिंह का भी काम तमाम कर दिया। तब उसका क्रोध से फरकता हुआ हाथ शांत हुआ; मन और मस्तिष्क में भी शान्ति व्याप्त हुई, और साथ ही साथ आँखों में भी मृदुता भर आई। अकबर बादशाह में यह एक विशेष बात थी; समय आने पर वह कठोरतम बन सकता था किंतु नम्र और मृदु बनने में भी उसे अधिक समय नहीं लगता था। एक शाल्मलि वृक्ष के नीचे एक छोटी सी गुफा के पास मारे गये माँ-बाप के दो छोटे छोटे बच्चे खड़े होने की कोशिश कर रहे थे; बादशाह ने तलवार म्यान में रखकर उन दोनों बच्चों को छाती से लगा लिया। यदि बोल सकते होते तो वे मूक प्राणी भी पूछ लेते कि हमारे माँ-बाप को खो डालने वाले ? तू हत्यारा है या दयालु ?...किन्तु उन्होंने कुछ भी न पूछा। अतिशय परिश्रम से बादशाह के ओष्ठों के दोनों कोनों पर थूक के फेन जम गए थे; जीभ तालु से चिपक रही थी; अब बादशाह को सचमुच अनुभव हुआ कि पानी के बिना वह क्षण भर भी नहीं रह सकता !

यदि; वह जहाँ था वहाँ से आगे दस खेत ही उसने पार किये होते तो उन झाड़ियों के झुण्ड के पीछे उसे एक हरा भरा गाँव ज़रूर मिल जाता, किंतु यदि सचमुच दस खेत पार करता! इस समय तो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'हिंदुस्तानी' बनाने के लिए जिसने जी-जान से परिश्रम किया; जिसने हिन्दुस्तानी को 'हिन्दुस्तानी' बनाने के लिए धर्म और मज़हबों की परवाह करना छोड़कर समाज को दुतकारा, रूढ़ियों को तोड़ा और भारत की आन बान और शान का प्रसार भारत से बाहर, अरब और मिस्र से भी सुदूर इंगलिस्तान तक कर दिया; वही था हिन्दुस्तान का यह पहला "हिंदुस्तानी' बादशाह ! आज वह शिकारी की पोशाक में काल्पी के गहन वन में एक सिंह का पीछा कर रहा था। लोग उसे शहंशाह जलालुद्दीन अकबर कहकर पुकारते थे !

शिकार और साहस, ये दोनों 'भयजनक भाव' शहंशाह अकबर के शौकों में शुमार थे, इसीलिए दूसरे अनेक कारणों के होते हुए भी, बादशाह, ग्रामीणों को सताने वाले एक सिंह का, आज सुबह से अविराम पीछा कर रहा था। इस अकबर बादशाह की विजय नीति दो भागों में विभक्त थी—राज्यों को जीतने के लिए वह सेना का प्रयोग करता था और लोगों को जीतने के लिए प्रेम का ! यही कारण था कि राज्य के किसी भी ग्रामीण को बादशाह के पास पहुंचने के लिए अधिक बाधाओं का सामना नहीं करना पड़ता था। एक साईं के दर्शन करके लौटने पर बादशाह को स्थानीय गाँव वालों ने नज़राना चढ़ाने के साथ ही साथ, गाँव के सबसे बड़े शत्रु सिंह को विजित करने की प्रार्थना की। बादशाह को उस वक्त ऐसे ही अवसर की अभिलाषा थी। अपनी बड़ी संरक्षक सेना को वहीं छोड़कर उसने, छाया की तरह साथ रहने वाले अपने दो हुज़ूरियों—अतगबेग और कल्याणमल को साथ लेकर सिंह का पीछा शुरू किया। सिंह आगे था और बादशाह पीछे। सुबह से दोपहर और दोपहर से तीसरा पहर हुआ किंतु न सिंह थका, न बादशाह ही !

'हवाई हाथी' जैसे गजराजों को खाली हाथों वश में करने और अनेक शेरों को अकेले ही विजित करने वाले अकबर बादशाह को आज इस सिंह ने खूब छकाया ! बादशाह की धुन और एकाग्रता सिंह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अन्त में सिंह, काल्पी की एक छोटी पहाड़ी की झाड़ियों में घुसने के साथ ही बादशाह के व्यूह में फँस गया। देखते ही देखते अरबी घोड़ा हिरन की तरह चौकड़ी भरता हुआ झाड़ियों में घुसा और बादशाह ने भुजा भर कर अपना मेवाड़ी भाला भागते हुए सिंह के पेट में भोंक दिया; सिंह उलट कर जमीन पर लोटने लगा। तत्क्षण बादशाह घोड़े पर से कूदा और तलवार निकाल कर आगे बढ़ा; किन्तु उसी समय घोड़ा ज़ोरों से हिनहिनाया। बादशाह ने डपट कर देखा कि इस सिंह की सिंहनी उछल कर उस पर धँसने को ही थी, किंतु तलवार वाले हाथ के पूरे बल से लगातार वारों से बादशाह ने सिंहनी को जमीन पर सुला दिया। साथ ही साथ उसने आहत सिंह का भी काम तमाम कर दिया। तब उसका क्रोध से फरकता हुआ हाथ शांत हुआ; मन और मस्तिष्क में भी शान्ति व्याप्त हुई, और साथ ही साथ आँखों में भी मृदुता भर आई। अकबर बादशाह में यह एक विशेष बात थी; समय आने पर वह कठोरतम बन सकता था किंतु नम्र और मृदु बनने में भी उसे अधिक समय नहीं लगता था। एक शाल्मलि वृक्ष के नीचे एक छोटी सी गुफा के पास मारे गये माँ-बाप के दो छोटे छोटे बच्चे खड़े होने की कोशिश कर रहे थे; बादशाह ने तलवार म्यान में रखकर उन दोनों बच्चों को छाती से लगा लिया। यदि बोल सकते होते तो वे मूक प्राणी भी पूछ लेते कि हमारे माँ-बाप को खो डालने वाले? तू हत्यारा है या दयालु?...किन्तु उन्होंने कुछ भी न पूछा। अतिशय परिश्रम से बादशाह के ओठों के दोनों कोनों पर थूक के फेन जम गए थे; जीभ तालु से चिपक रही थी; अब बादशाह को सचमुच अनुभव हुआ कि पानी के बिना वह क्षण भर भी नहीं रह सकता!

यदि; वह जहाँ था वहाँ से आगे दस खेत ही उसने पार किये होते तो उन झाड़ियों के झुण्ड के पीछे उसे एक हरा भरा गाँव ज़रूर मिल जाता, किंतु यदि सचमुच दस खेत पार करता! इस समय तो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दिल्लीश्वर अकबर जंगल के कोने और गाँव की सीमा के बीच निराधार ही पड़ा था ! थकावट से चूर हो जाने के कारण बादशाह एक पेड़ के नीचे शिला पर बैठा ही था कि अतग़बेग वहाँ आ पहुँचा। बादशाह ने सिंह के वे दो बच्चे उसे सौंपते हुए टूटी हुई आवाज़ में कहा—'इन्हें शाही शिकारख़ाने में रखवा देना—पानी !

'हुज़ूर, तीन कोस से देखता आ रहा हूँ, कहीं भी पानी दिखाई नहीं दिया !' भूख और प्यास से आहत अतग़बेग ने बादशाह से भी अधिक धीमे स्वर में जवाब दिया। उसी समय दूसरी तरफ़ से कल्याणमल भी बादशाह की खोज में वहाँ आ निकला और घोड़े से उतरने के पहले ही गिरते गिरते बचा। बादशाह ने आशा भर कर उसे देखा किंतु वहाँ तो हालत सब से ज्यादा ख़राब थी; सिर हिलाकर उसने जवाब दिया—'नामवर, चारकोस जाकर लौटा हूँ, पानी की बूँद भी नहीं दिखती !'

बादशाह निराश होकर फिर शिला पर बैठ गया। आज तक उसने सिर्फ़ सुना ही था कि भूख और प्यास की वेदना असह्य व्याकुलता उपजाने वाली होती है, इस बात का सच्चा अनुभव आज उसे हुआ था। आज भूख और प्यास की परीक्षा में बादशाह और उसके हुज़ूरिये सभी एक-जैसे मामूली व्यक्ति बन गये थे ! कल्याणमल के शब्द सुनकर अन्त में अकबर ने हँसते हुए कहा—'हाँ, तो मेरे राज्य में एक ऐसा भी मुल्क है जहाँ तीन तीन कोस तक पानी की बूँद भी नहीं मिलती !'

'मिल गई, आलीज़ाह !' एकाएक कल्याणमल चीख उठा; उसकी दृष्टि का अनुसरण करके बादशाह और अतग़ ने घूम कर देखा कि एक अधेड़ देहातिन हाथ में रस्सी लेकर पहाड़ी के नज़दीक आ पहुँची थी। तत्क्षण अतग़ और कल्याण, मरण शय्या से उठे हुए मनुष्य के आनन्द का अनुभव करके उसके पास दौड़ गए और अपने स्वभावानुसार, दोनों ने अकबर बादशाह के दाएँ और बायें हाथ होने का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रोब दिखाने के लिए सत्ताशाली आवाज़ में बोलना शुरू किया। कल्याणमल ने कहा—'ऐ बाई, जा ज़रा दौड़ कर एक घड़ा पानी और कुछ खाने को ले आ!'

'हाँ, बिलकुल जल्दी लेकर आ, हुजूर सलामत के लिए!' अतग़ा ने समर्थन किया।

'दोनों ने हुक्म करने के साथ ही समझ लिया था कि देहातिन झटपट सब ला सामने रखेगी; लेकिन यहाँ तो आसार उलटे ही नज़र आये। रस्सी वाली देहातिन शेरनी की तरह उन पर झपटती हुई बोली—'अरे जा सलामत वाले!... देख, एक कदम भी आगे बढ़ाया तो तुम्हारे और तुम्हारे सलामत के मुँह इस रस्से से रँग दूँगी!.... यह अकबर बादशाह का राज है समझे! मुए शिकारी, जाने कहाँ कहाँ से आकर सिर पर सवार हो जाते हैं!' और एक ही क्षण बाद इस घटना से उसका ज़रा भी सम्बन्ध न हो, इस तरह शांति से दूसरी ओर घूम कर उसने किसी को पुकारना शुरू किया–महेश····ओ···महेश!'

अतग़ा और कल्याण का क्रोध आपे में न रहा। दोनों में किसी को ध्यान न रहा कि अकबर उनके पीछे खड़ा होकर चुपचाप यह सब सुन रहा था। कल्याणमल ने देहातिन के नजदीक पहुँच कर चिल्लाना शुरू किया—'कमबख़्त! शेरे मुग़लियात, फरज़ंदे चग़ताई शाहंशाह....'

'अरे आ तो सही, नजदीक तो आ! मार मार कर दो मुँह कर दूँगी; इसे कोई ऐरी गैरी न समझना यह लखिया है लखिया।... अरे ओऽ महेश!...' उसने पुनः पूर्ववत् शांति से उस 'महेश' नामधारी को पुकारना शुरू किया! अब तो शिकार के पास शांति रूप से बैठने वाले शिकारी कुत्तों ने भी जोरों से भोंकना शुरू किया। अतग़ाबेग और कल्याणमल, एक गँवारन के मुँह से अपना और बादशाह का अपमान होता देख जल उठे! सच पूछें तो उनका आपे से बाहर हो जाना भूख ही के कारण था। दोनों म्यान में से तलवार निकाल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कर लखिया की ओर जाने ही वाले थे कि दो मज़बूत हाथों ने उन दोनों को रोक लिया—ठहरो !'

दोनों अचानक काँप उठे; उन्होंने डरते हुए पीछे देखा कि स्वयं अकबर उनके हाथ पकड़ कर खड़ा था।—

'....यह बहुत बड़े गौरव की बात है कल्याण ! हमारी देहातिनें तलवार से नहीं डरतीं ! हमारी बादशाहत ऐसी प्रजा के आधार पर ही टिकी रह सकती है !' और बादशाह ने संयम के साथ देहातिन से देहाती बनकर बहुत ही मीठे ढंग से पूछा—'बाई, भूखे को अनाज और प्यासे को पानी देना तेरे धर्म में लिखा है या नहीं ? खुदा जानता है, आज सुबह से हम लोग भूख प्यास के मारे छटपटा रहे हैं !'

'तो मरो, इससे हमें क्या ?' लखिया बोल उठी; उसका गुस्सा अभी भी कम न हुआ था—'तुम तो शिकारी हो, शिकार करने निकले हो ! निर्दोषों की जान लेनेवालों को भूखे मरना ही बेहतर है ! अरे ओऽ...महेश !' फिर बादशाह की तरफ़ देखे बग़ैर ही बोली–'जाओ, उस झाड़ के नीचे पानी का घड़ा रखा है; रोटी-वोटी नहीं मिलेगी, है ही नहीं ! अरे ओऽ महेश !...' किन्तु शायद किसी पार्वती के ध्यान में मग्न हो या और कोई कारण रहा हो, वह 'महेश' नामधारी न तो वहाँ दिखाई दिया न उसने इतनी बुलाहटों का जवाब ही दिया !

बादशाह के शिकारी कुत्ते भी पानी के लिए भौंकते हुए अतग़-कल्याण के पीछे आ कर खड़े हो गये थे। बादशाह ने लखिया के बताये घड़े में से पानी तो पिया लेकिन भूख की पीड़ा किसी तरह कम न हुई। कुछ देर सोच कर उसने अपनी एक उँगुली की अँगूठी उतारी और लखिया के पास जा कर खुश करने के ढंग से कहा—'लखिया बाई, यह रतमजटित अँगूठी ले लो, लेकिन हम तीनों के लिए रोटियाँ ले आओ ! खुदा की क़सम, सुबह से कुछ नहीं खाया...।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लखिया, क्षण भर जबर्दस्ती पहनाई गई अँगूठी को एक टक देखती रही, फिर यकायक बादशाह के हाथ में अँगूठी रखती हुई जीभ काट कर बोली—'कोई परदेशी मालूम होते हो ! अक़्ल के दुश्मन, यह महाबली अकबर का राज है ! ऐसी अँगूठी हम जैसे निर्धन ब्राह्मण के पास देख कर कोतवाल सीधा कोतवाली में न बिठाएगा ? अगर तू कोई भागा हुआ नवाब या डाका डालनेवाला शाहज़ादा हो तो हम तो मर ही गये न ! भाई, यह लखिया है, यहाँ बनाने के धन्दे नहीं चलने के ! अरे ओऽ महेश, चल न, यह रस्सी ले जा !'

'अरी' तू ही जल्दी ले आ न ! कहीं दूर से महेश की आवाज़ सुनाई दी 'मैं नीचे नहीं आ सकूँगा, सूर्यास्त के पहले ही ये सब लकड़ियाँ और समिधा काट लेने चाहिए !'

'ओ भगवान !' निराश लखिया जैसे ऊब गई थी; पर अचानक उसे कुछ सूझा, और पास ही खड़े हुए बादशाह के हाथ में रस्सी थमाकर बोली—'देखो, यह लो रस्सी; ऊपर मेरा भतीजा लकड़ियाँ काट रहा है, उसे दे आओ; मैं तुम लोगों के लिए रोटियाँ ले आती हूँ। यज्ञ के काम के लिए ख़ास लकड़ियाँ काटी जा रही हैं, और शाम के पहले उन्हें यहाँ ले आना चाहिए। है मंज़ूर ?'

'मंज़ूर !' बादशाह ने तुरन्त जवाब दिया।

लखिया चली गई और एकबार किसी काम को हाथ में लेकर अन्त तक निभाने वाले दिल्ली के शहंशाह ने अपनी और अपने साथियों के पेट की आग बुझाने के लिए रस्सी को लेकर पहाड़ी के ऊपर चढ़ने की कोशिश करनी शुरू की।

पहाड़ी कुछ विचित्र-सी थी। जल्द पहुँचने का रास्ता भी सामने ही था, किन्तु वह इतना टेढ़ा-मेढ़ा था, और बादशाह इतना थका हुआ था कि अत्यधिक परिश्रम करने पर भी बादशाह ऊपर तक पहुँचने में सफल न हुए। संध्या होने को ही थी; रोटियाँ आने का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भी समय प्राय: हो चुका था। आख़िरकार बादशाह ने चिल्ला कर कहा—'अरे पंडित महेश, शाम से पहले ऊपर रस्सी ले आना असंभव मालूम होता है; चढ़ने का रास्ता भी बहुत विचित्र है !' कुत्तों ने साथ ही साथ भौंककर मानों बादशाह की बात का समर्थन किया।

'यह तो मैं जानता हूँ !' दूर से जवाब आया; बादशाह चौंका। कुत्तों को भी मानो भौंकते रहना ही इष्ट मालूम होता था।

'तो फिर रस्सी ऊपर किस तरह भेजी जाय ?' बादशाह ने चिल्लाकर पूछा। अभी तक महेश दिखाई नहीं देता था।

अतग़बेग और कल्याणमल का क्रोध एक बार देख और समझ कर शिकारी कुत्ते भी उनके बदले अपनी भाषा में क्रोध व्यक्त कर रहे थे। आख़िरकार ऊपर से जवाब आया—'भैया तुम्हारे पास कुत्ते हैं; उनमें से किसी एक के गले में रस्सी बाँधकर ऊपर भेज दो न !'

बादशाह यकायक चौंककर एक डग पीछे हट गया; दोनों हुजूरिये आँखें फाड़कर बादशाह को देखने लगे ! बादशाह चिल्ला उठा—'खूब, खूब ! अतग़मियाँ यहाँ रोटी और पानी भले ही न हो लेकिन अक़्ल ज़रूर है ! शिकारी कुत्ते को ऊपर भेज दो !' इतना कहकर बादशाह आराम से एक शिला पर जा बैठे !

कुत्ता जब ऊपर पहुँचा तो महेश पण्डित के सिर्फ़ पैर दिखाई देते थे; वे घनी झाड़ी में छुपे हुए, यज्ञ के लिए अत्यावश्यक बहुत से फूलादि तोड़ने में मशगूल थे; उन्हें देखकर कुत्ते ने भौंकना शुरू किया और फिर धीरज खोकर, आख़िरकार मज़बूती से बँधी हुई महेश की धोती खींचना शुरू किया और तब लकड़ियाँ हाथ में लेकर महेश को झाड़ी से बाहर आना पड़ा।

पण्डित महेश युवक था, शरीर भी शक्तिमान था। पत्थर और झाड़ी की टहनियों ने उसकी देह के प्रत्येक भाग को छूकर अपने स्पष्ट चिह्न छोड़ दिये थे। बादशाह का कुत्ता भौंकना भूलकर महेश के घुँघराले बालों, कटदार मूछों और तिरछी नज़र को एकटक देख रहा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

था। जब पसीना पोंछकर महेश ने कुत्ते के गले में से रस्सी छोड़ने के लिए हाथ बढ़ाया, तब भी वह शाही कुत्ता भौंकना भूलकर पिछले पैरों पर खड़ा हुआ उसी तरह देहाती पण्डित महेश को देखता रहा।

लेकिन पण्डित महेश समझा कि कुत्ता उससे डर रहा है, और कुत्ता समझा कि वह स्वयं महेश पर मुग्ध हो गया है क्योंकि जब लकड़ियों की मौली बाँधकर महेश नीचे उतरा तब भी कुत्ता उसके पीछे पीछे उसी तरह देखता हुआ चल रहा था; नीचे आने पर ही पण्डित महेश को ज्ञात हुआ कि वह शिकारी कुत्ता उसे अपने मालिक का शिकार समझकर ही अपने जातीय स्वभाव के विरुद्ध इतना सभ्य व्यवहार दिखला रहा था।

(२)

गाँव से क़रीब दस खेतों की दूरी पर, छोटी सी पहाड़ी की तलेटी में एक विशाल बट वृक्ष के तले, अकबर बादशाह, लखिया देहातिन के हाथों दूध में सान कर बनाई हुई मकई और बाजरे की रोटियाँ खा चुकने के बाद अब हाथ धो रहा था और सिर्फ घुटने तक की धोती और कमरबन्द लपेट कर नंगे बदन पंडित महेश बादशाह के हाँथों पर पानी उँड़ेल रहा था!

'तो तुम कवि हो?' अपनी कमरबन्द के एक सिरे से हाथ पोंछते हुए बादशाह ने पूछा।

'जी, मैं तो नहीं, गाँव वाले ज़रूर मुझे कवि कह करबुला लेते हैं!'

'ओह! तब तो मैं भी तुम्हें कवि ही कहूँगा, अच्छा तो मेरी एक बात का जवाब दोगे?'

'ज़रूर; फरमाइये!'

बादशाह ने घोड़े के पास खड़े होकर पूछा—'है कोई धीरन ऐसा नर, पीर बबर्ची भिस्ती खर?'

'जी ज़नाब, अपढ़ ब्राह्मण!'

'कैसे?' इस वाचाल ब्राह्मण की ओर आकर्षित होकर बादशाह ने पूछा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'जन्म से वह ब्राह्मण होने के कारण पूजा जाता है इसलिए पीर अपढ़ होने की वजह से दूसरों की रसोई बनानी होती है इसलिए बावर्ची, कभी कभी पानी पिलाने का काम भी करता है इसलिए भिश्ती और वक्त आये पर सिर पर सामान लाद कर मालिक के पीछे चलने भी लगता है इसलिए खर—गदहा ! अपढ़ ब्राह्मण में ये चारों गुण मौजूद होते हैं !'

'खूब ! खूब !! कवि, तुम सचमुच कवि हो; लो यह रख लो ! बादशाह ने अपनी उंगुली में से वही अँगूठी निकाल कर महेश की ओर फेंकी और छलांग मार कर घोड़े पर चढ़ गया।

शाहनशाह अकबर ! अँगूठी पर खुदा हुआ नाम देखते ही महेश पंडित चिल्ला कर बादशाह की ओर दौड़ा और उसके पैर पकड़ लिए 'दिल्लीश्वर, पधारिये हम गरीबों का आँगन भी पवित्र कीजिए।

'हाथ नीचे रख, हम ब्राह्मण हैं !' अलग और कल्याण को रोटियाँ देना भूल कर वहीं से लखिया चिल्लाई और एकाएक निश्चेष्ट सी खड़ी ही रही; रोटियाँ वैसे ही हाथों में रह गईं—'महाराजा अकबर !' वह कुदकुदाई और दौड़ कर रोटियों वाले हाथों से बादशाह के पैर पकड़ कर रोने लगी। कुछ चणों के बाद यकायक खड़ी होकर, उसी तरह रोते हुए उसने पास ही खड़े हुए कल्याणमल की छाती पर, उन्हीं रोटी वाले हाथों की मुट्ठियों से प्रहार करना शुरू किया—'मुए अभागो, मुँह से बोलते क्या हो गया था कि हमारे महाराजा बादशाह हैं !' उसी उन्मत्त सी हालत में उसने फिर रोते रोते दौड़ कर बादशाह के पैर पकड़ कर गिड़गिड़ाना शुरू किया-'महाराज, हम गँवारों को क्या पता था कि आप....हमने बड़ा पाप किया, चाहे जैसे बोल कर—ग़रीब परवर, माफ कर दो !'

देहातिन के इस पछतावे को बादशाह स्नेह से देखता रहा, फिर उसके हाथों को अपने पैरों से अलग करते हुए बोला—'हो सकता है गरीब परवर हूँ, पर तू तो शाह परवर है; भूखे बादशाह को तूने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रोटियाँ दी है ! अच्छा पंडित महेश इस अँगूठी को लेकर तुम आगरा के शाही महल में दाख़िल हो सकोगे !'...

और बादशाह ने अरबी घोड़े को एड़ी का इशारा किया, उसी के पीछे अतग़ा और कल्याणमल भी स्तब्ध खड़ी हुई लखियाके हाथ में से बाज की तरह झपट कर रोटियाँ छीन कर बादशाह के पीछे रवाना हो गये। लखिया के आँसू अभी तक भी सूखे न थे !

युवक महेश अपनी चाची को उसी तरह देख रहा था; आखिरकार उसने बनावटी गला साफ़ करके चाची का ध्यान अपनी ओर खींचा और उसके हाथों में वह अँगूठी रख कर, जमीन पर रखी हुई यज्ञ की समिधा उठाने के लिए झुका। चाची का गुस्सा अभी भी कम नहीं हुआ था। अपनी ही चिढ़ से ऊब कर उसने महेश से व्यंग भरे स्वर से पूछा।

'क्यों पण्डित महाशय ! तुम तो मथुरा और काशी पढ़ कर लौटे हो; हममें अक़्ल न सही तुममें तो थी न ? पत्थर पड़ें तेरी पढ़ाई पर ! अक़बर बादशाह को भी नहीं पहिचान सका ?'

'चाची, न संस्कृत में कहीं पढ़ा है न फ़ारसी में ही कहीं ऐसा सुना है जिससे मालूम हो सके कि अमुक चेहरेवाला ही अकबर बादशाह होगा, या फिर अकबर बादशाह का मुँह वैसा ही होना चाहिए !'

'हाथ जोड़े तुझसे, अब रहने दे अपनी पंडिताई, मुझे घर जाकर रसोई बनानी है; जा ये लकड़ियाँ जल्दी विद्याधर पण्डित के यहाँ पहुँचा दे; देख, पहले एक कलदार रुपया ले लेना—नया रुपया लेना—और पंडित, एक और बात याद किये देती हूँ—कवि जो ठहरा, फिर भूल जाएगा !'

'क्या बात है चाची ?' महेश ने शांतिपूर्वक पूछा।

चाची ने ग़ुस्से में मौली उठा कर महेश के कंधे पर पटकते हुए कहा—'पंडित जी, विद्याधर पंडित का घर पश्चिम दिशा में है, कहीं पूरब की तरफ़ न चल देना !'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'चाची, तुम नहीं जानतीं, मैं तो हमेशा सीधी राह पर ही चलता हूँ !'

'तेरे बाप-दादे भी कभी सीधी राह गये हैं, जो तू जाएगा ? शर्म नहीं आती तुझे ? ब्राह्मण की जात होते हुए भी लखपती पंडित रमानाथ, और उनकी संस्कृत पढ़ी-लिखी शास्त्र-धुरन्धर बेटी उमा कहाँ, और मरने के आलस भर से जीनेवाले हम कंगाल कहाँ ? इसीलिए कहती हूँ पूरब की तरफ़ मत जाना, भूत की तरह उस लखपती की बेटी के पीछे लगते तुझे शर्म नहीं आती ? कहाँ तू और कहाँ—कहाँ—,

'कहाँ राजा भोज और कहाँ गांगा तेली ! यों ही कह दो न चाची ? पर क्या मैंने अभी एक शब्द भी उमा के लिए मुँह से निकाला है ? क्या एक क़दम भी पूरब की तरफ़ बढ़ाया है ?'

'न गया तो क्या तू जाने से बाज़ आएगा ? अगर उस उमिया को देखे बिना घर में क़दम भी रखे तो मैं अपनी नाक कटवा लूँ ! जैसे दरिद्री चाचा, वैसा ही दरिद्री भतीजा ! क्या कहने हैं ?'

'सुनो चाची, जो यह महेश पंडित आज न होता तो यज्ञ के लिए यह समिधा झाड़ियों में से चुन चुन कर कौन काट लाता—और ये समिधा न हो तो कलदार रुपया कहाँ से आये ? फिर भी तुम मुझे दरिद्री·······।'

'अगर महीने भर में एक दिन कहीं से एक रुपया मिल भी गया तो कौन से आसमान के तारे चुन लिए ? बाक़ी के उन्तीस दिन तो इस अनपढ़ चाची के हाथों ही घर चलता है ! जा अब जल्दी कर !' कह कर खीझती हुई लखिया ने घर की ओर पैर बढ़ाये और उसी के पीछे पीछे मोली उठाये पंडित ने भी डग भरना शुरू किया।

वहाँ से गाँव अधिक दूर न था इसलिए पंडित विद्याधर के घर तक पहुँचने में पंडित महेश को अधिक समय न लगा। साँझ बीत चुकी थी फिर भी रात के शिकंजे से बच कर दिन का धुँधला-सा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रकाश पश्चिमी कोने से झाँक रहा था; उसी समय महेश पंडित ने विद्याधर के घर में पैर रखा।

पंडित विद्याधर बाप-दादों की कमाई हुई सम्पत्ति का एकाधिकारी, रसिक युवक था। अनपढ़ होते हुए भी जन्मजात ब्राह्मण के पांडित्य का उसे गर्व था और इसीलिए पं० रमानाथ की इकलौती पुत्री उमा के सुकोमल हाथों का वह स्वयं को अधिकारी समझने का प्रयत्न करता था।

वृद्धत्व की अन्तिम सीमा पर पहुँचे हुए पं० रमानाथ ने यज्ञ करने का निश्चय किया था और उसके लिए उन्हें विशेष समिधा की ज़रूरत थी; विद्याधर ने उनके सामने दावा कर दिखाया कि वह प्रत्येक वनस्पति का अन्यतम जानकार है, इसलिए वे समिधा का भार उस पर छोड़ दें, और अपनी इस मूर्खता को बखूबी छुपा कर उसने लखिया के ज़रिये महेश से कहलाकर किसी तरह समिधा मँगवाने का डौल किया।

विद्याधर जानता था कि महेश के पाण्डित्य की तुलना में वह शून्य भी नहीं, और यह बात भी उससे छुपी न थी कि वही महेश पण्डित, उमा के प्रति, हृदय में उससे भी अधिक सुकोमल भावों को सँवारता था।...किंतु इस वक्त समिधा के बिना वह व्याकुलता से छटपटा रहा था।

जब महेश ने उसके घर में पैर रखा, उस वक्त वह उमा की एक दासी से कह रहा था—'मैं कह रहा हूँ न, तू झट जाकर पण्डितजी से कह दे कि अगर समय हो चुका हो तो वे निश्चिन्त होकर यज्ञ का कार्य प्रारम्भ कर दें; मैं खुद जंगल में जाकर समिधा काट लाया हूँ!'

'तो मुझे ही दे दो न!' दासी ने अपने लहज़े में कहा...'पंडितजी उधर अकुला रहे हैं!'

'नहीं, समिधा तू नहीं ले जा सकती, मैं पलभर में स्नान करके लिए आता हूँ....अच्छा, उमाजी वहीं हैं या मौसी के घर गई हैं?' कुछ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

धीमी-सी आवाज़ में विद्याधर ने पूछा । किन्तु दासी भी कम न थी, बोली—'पण्डितजी, आना हो तो झट चले आओ !' और मुस्कराती हुई चली गई ।

महेश चुपचाप खड़ा यह सब सुन रहा था, दासी के चले जाने पर मौली को कहीं बाहर छुपाकर वह विद्याधर के पास आ खड़ा हुआ । यद्यपि पण्डित विद्याधर के हृदय में इस प्रतिद्वन्दी के लिए मन में बहुत कुछ मैल था फिर भी मुँह से अमृत बरसाना वह अच्छी तरह जानता था; महेश के हाथ को बड़े प्रेम से खींचकर पूछा—'आ गये मित्र ! बहुत अच्छा किया, वह समिधा कहाँ है ?'

'समिधा मिली तो सही, पर बड़ी मुश्किलों के बाद; कई आदमियों को काम पर लगाना पड़ा; चार रुपये का ख़र्च हुआ है !'

'चार नहीं, पाँच लो ! कहाँ है समिधा ?'

'यहाँ ले आऊँ ?'

'पण्डितजी, आप तो ठंडे ठंडे बोल रहे हैं और यहाँ जान जा रही है !'

'तो किसी यज्ञ के लिए यह समिधा मँगाई गई है ? कहाँ है यज्ञ ?'

'यज्ञ के लिए न सही, मेरी चिता के लिए है ! पर समिधा है कहाँ ?'

'ठहरिये, अभी लाकर देता हूँ; चाची घर ले गई हैं; मैं यही पूछने आया था कि अभी चाहिए या सबेरे...'

'दस बार तो कह चुका पण्डितजी,...अभी, अभी, इसी समय चाहिए !—अच्छा, आपही के घर रखी है, कोई बात नहीं, मैं ही उधर से ले लेता हूँ...' कहते हुए विद्याधर जूतियाँ पहन कर रवाना हुआ ।

'पण्डितजी, ज़रा पाँच रुपये तो दीजिए, मज़दूरों और लकड़हारों को चुकाने हैं !'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बहुत देर हो जाने के कारण विद्याधर का जी ठिकाने नहीं था; शीघ्र ही समिधा लेकर पंडित रमानाथ के घर पहुँचने और उमा को यह जताने के लिए, कि वह कितना योग्य है, उसका जी छटपटा रहा था! गुस्से में आकर उसने अकबरशाही पाँच रुपये महेश को दिये और उतावली में लखिया के घर की राह ली!

मुस्कराते हुए महेश ने धीरे से अपनी कमर में बँधा हुआ दुपट्टा शरीर पर डाल लिया और किरातार्जुनीय का एक श्लोक गुनगुनाते हुए घर के बाहर रखी हुई झोली उठाकर पंडित रमानाथ के घर का मार्ग पकड़ा; निस्सन्देह, वह पूर्व दिशा थी!

पंडित रमानाथ की हवेली, गाँव के ठीक पूर्व की ओर कालीमंदिर से कुछ दूर ही पर था। गाँव के प्रत्येक स्त्री-पुरुष (विशेषतया प्रौढ़ों और वृद्धों) का यह दृढ़ विश्वास था कि अपने पूर्वजों ही की तरह पंडित रमानाथ भी मरने के बाद सर्प होकर उसी हवेली में रहेंगे। इस बार, गाँव के लोगों की मान्यता थी कि पंडित जी ने जो बहुत सा धन हवेली में गाड़ रक्खा है, उसके दुरुपयोग से बचने और अपनी तो नहीं, किन्तु अपनी पुत्री की वंशवृद्धि के लिए उन्होंने इस यज्ञ का अनुष्ठान करने का निश्चय किया था। यद्यपि अभी उनकी पुत्री उमा का विवाह नहीं हुआ था किन्तु उन्होंने मन ही मन उसी गाँव के विद्याधर नाम के साधारण-धनवान ब्राह्मण-युवक के साथ उमा के विवाह का विचार किया था और यज्ञ के अन्त में ही यह विवाह कर डालने का उनका निश्चय भी हो चुका था।

किन्तु महेश के एकमात्र सच्चे चाचा लखिया के प्राणाधार और गाँव के प्रसिद्ध गँजेड़ी पुराणी चाचा की मान्यता थी कि पंडित रमानाथ सिर्फ अगले जन्म में सर्प की योनि से बचने के लिये ही इस यज्ञ का अनुष्ठान कर रहे हैं, उमा का इस यज्ञ से कोई संबंध नहीं क्यों कि उन्होंने गाँव के अधिकांश लोगों के हृदय में विश्वास जमा दिया था कि उमा का विवाह, उनके विद्वान् भतीजे महेश से ही होना चाहिए, और होकर रहेगा!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दूसरी बात, जो इस गाँव के लिए अत्यधिक प्रसिद्ध थी और जिस पर गाँव के सभी स्त्री-पुरुषों का विश्वास भी था वह यह थी कि बरसों पहले जब यह गाँव बस रहा था, महेश के पहले पूर्वज और रमानाथ के पहले पूर्वज दोनों ने कठिन तपस्या के द्वारा इसी गाँव की काली माता को प्रसन्न किया; और प्रसन्न होकर कालीमाता ने दोनों की जिह्वा पर सरस्वती विराजमान करके वचन दिया था। उस दिन कालीमाता अत्यधिक प्रसन्न थी इसलिए उन्होंने बिना पूछे ही कहा—'ब्राह्मणो, तुम दोनों मित्र हो; मैं वरदान देती हूँ कि वंश परम्परा तक, सरस्वती तुम दोनों के कुटुम्ब में रहेगी। इसके सिवा मैं तुम्हें दूसरे दो वरदान देती हूँ, इन में से जिसे जो चाहिए, माँग लो—एक है प्रचुर धनराशि—किन्तु चार पीढ़ियों के बाद वंश बदलेगा फिर लक्ष्मी घर में ही स्थिर रहेगी; और दूसरे वरदान में अन्नपूर्णा स्त्री और ज्ञान है। बोलो, पहिला किसे चाहिए?'

कालिका का प्रश्न सुनकर रमानाथ का लोभी पूर्वज बोल उठा—'पहला वरदान मुझे दो माँ!' माँ ने 'तथास्तु' किया और फिर प्रेम से महेश के पूर्वज की ओर देख कर उसे भी वरदान की माँग करने के लिए मुस्कराईं। किन्तु महेश का पूर्वज जो अपने मित्र का लालचीपन देख कर खीझ उठा था उसी खीझ में बोल बैठा—'माँ, मुझे अन्नपूर्णा स्त्री और गाँजा दो!' माँ तो 'तथास्तु' कह कर अन्तर्हित हो गईं किन्तु उस दिन से महेश के वंश में विद्वान् पुरुषों की उत्पत्ति तो हुई किन्तु घर का सारा बोझ स्त्रियों को संभालना पड़ा, साथ ही साथ घर में एक गंजेड़ी पुरुष भी होता था; इस समय वह पुरुष पुराणी चाचा थे। दूसरी ओर रमानाथ कालीमाता के पुण्य प्रताप से पूर्वजों के द्रव्य और विद्या का उपभोग कर रहा था। किन्तु वह स्वयं पाँचवाँ वंशज था और सन्तान के नाम पर अकेली ही उमा थी। इस समय उनकी वय ७५ वर्ष थी और पत्नी भी स्वर्ग सिधार चुकी थीं; इस तरह उनके वंश-परिवर्तन के लक्षण भी प्रत्यक्ष दिखाई दे रहे थे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इस घटना से गाँव के लोगों में प्रत्यक्षतया कालीमाता के प्रति भक्ति बढ़ रही थी और घर घर में इस चमत्कार की बात प्रचलित थी।

इस समय उन्हीं पंडित रमानाथ की हवेली के पीछे छोटे से बगीचे में काली माँ के आशीर्वाद से शास्त्रों में निपुण, पं० रमानाथ की इकलौती लाड़ली बेटी उमा, एक मेंहदी के पौधे के पास किसी कल्पना में खोई सी बैठी थी।

'बेचारी मेंहदी को भी कितना पिसना पड़ता है!' उमा के हाथ पर मेंहदी लगाते हुए उसकी पड़ोसिन ज्योत्स्ना बोल उठी। ज्योत्स्ना को स्वयं कवियित्री न होते हुए भी कविता सुनने का बहुत चाव था और इसीलिये वह उमा की सहेली बनी थी। उमा ने घुटनों के पास बैठी हुई ज्योत्स्ना के गाल पर हलकी-सी चपत लगाई और जवाब देने को हुई, किंतु उसके वे बिंबाधर काँप कर ही रह गये उनमें से स्वर न निकल सका।

ज्योत्स्ना के प्रश्न का उत्तर किसी और ने दिया—'सुन्दरी के कर कमलों पर बैठना सरल काम नहीं, उसके लिए तो घुट घुट कर पिसना ज़रूरी है!'

उमा चौंक कर खड़ी हो गई; उसने उत्तरदाता के स्वर को अच्छी तरह पहिचान लिया; वह था गँजेड़ी पुराखी चाचा का भतीजा पण्डित महेश! उमा ने आस-पास देखा, इसी बीच ज्योत्स्ना जाने कहाँ अदृश्य हो गई। अब उसके जी में जी आया, वह नीचे बैठी और कोई उसके कान में गुनगुनाया—रानी!'

उमा ने चौंक कर पीछे देखा कि वह महेश के गाल को छू जाने से बाल बाल बच गई है। बनावटी ग़ुस्से के लिये इतना बहाना काफी था; 'मेरे पिता जी आप का मुँह देखना भी नहीं चाहते!' मेंहदी भरे हाथों को वैसे ही फैलाए उमा चिढ़ कर बोली।

दोनों हाथ मेंहदी भरे होने से, महेश को उमा के और निकट आने में सहूलियत हुई; उसके कंधों को छू कर वह बोला—'रानी, कल आख़िरी बार यही बात तुम यहाँ कह चुकी हो!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'यहाँ नहीं, पाठशाला के सामने कही थी !'

'भूल हुई, सिर्फ़ दो सौ क़दम झूठ बोला; अच्छा, क्या रोज़ ऐसे ही शुरू शुरू में मुझ पर नाराज़ होना ज़रूरी है ?'

'बात बदलने की ज़रूरत नहीं, मैं कह तो चुकी, मेरे पिताजी आपका मुँह देखना नहीं चाहते !'

'समझा, पिताजी मेरा मुँह देखना नहीं चाहते, किन्तु पिता की पुत्री की चाह किस तरफ़ है ? पर रानी, भूलती रही हो, आज तो तुम्हारे पिताजी भी इस मुँह पर लट्टू हुए बिना न रहेंगे; समिधा के बिना उनका यज्ञ पूरा नहीं हो सकता, और समिधा आज मैं अपने हाथों से काटकर लाया हूँ—यह देखो !'

'परन्तु यह तो 'वे' लाने वाले थे !' आश्चर्य से समिधा की ओर देखकर उमा ने कहा।

'तुम्हारे 'वे' पण्डित विद्याधर मुझे उत्तर में भागने को कहकर, मेरे कहने से दौड़े दौड़े दक्षिण में गये हैं...उनके जैसे पण्डितों के लिए......'

'हँ...हँ...उनके बारे में कुछ न कहो; आज प्रातःकाल पिताजी ने शुभ तिथि, शुभ दिन, और शुभ घटिका देखकर निर्णय कर लिया है कि मुझे उनके घर जाना होगा।'

'रानी !' अपनी ओर पीठ करके खड़ी हुई उमा के कान में बहुत धीमे-स्वर में महेश ने कहा—'कल पाठशाला के सामने आख़िरी बार मैं कह चुका हूँ कि तुम्हारे पैर मेरे घर का मार्ग अधिक पसन्द करेंगे !'

'इसका कारण भी तो होगा ?'

'कारण ? रानी, कविता कवि के ही घर की ओर जाती है !'

'अच्छा ! आप का घर !! अचानक तुनक कर उमा ने महेश की ओर देखा, और हाथों की मेंहदी के बंधन का अनुभव कर के दूर हट कर बोली—'आपका घर, घर है ? जिसे गिर पड़ने के लिये सिर्फ़ एक मूसलाधार बरसात की क़सर है, जिसमें घुसे हुए चोरों को सिर धुन-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

धुन कर बाहर निकलना पड़े ! जिस घर में चचा गाँजा पिए और भतीजा दिन में किसी के लिए लकड़ियाँ काटकर शाम को गाँव के चबूतरे पर बैठे, गाँव भर के निकम्मों को कविता सुनाता रहे ! वही है न आपका घर; जहाँ पुरुष हमेशा स्त्रियों की मेहनत पर जीवित रहते हैं और स्त्रियाँ सारा जीवन पुरुषों की सेवा में गुज़ार कर अन्त में चिता का आश्रय लेती हैं !......शायद अब बुढ़िया की सेवाओं से ऊब कर पत्नी की मेहनत पर जीवन गुज़ारने की ठानी है और मुझको व्याहने की बेचैनी बढ़ गई है !'

महेश ने चुपचाप सब कुछ सुन लेने के बाद धीरे से उमा की ओर आँख उठा कर कहा—'रानी, जब हमारे तीनों भगवान—ब्रह्मा, विष्णु और महेश ने भी स्त्री से हार मान ली तो फिर बेचारा यह महेश किस गिनती में है ? मैं भी अपनी हार मान लेता हूँ !'

'पंडितज़ी !' हाथों से गिरती हुई मेंहदी को मुश्किल से सम्हाल कर उसी क्रोध में उमा बोली—'याद है न, तुम मुझे 'रानी' कह कर पुकारते हो !'

'सच ही तो है रानी ! तुम जैसी पढ़ी लिखी ब्राह्मणी सौ वर्ष में एक बार जन्म लेती है, इसीलिए तुम्हें रानी कहता हूँ !' महेश ने शांतिपूर्वक कहा। महेश की इस विनोदी शांति से उमा और खीझ उठी लेकिन किसी तरह क्रोध को छुपाकर, महेश के ही ढंग से शांतिपूर्वक खीझ और व्यंग का अभिनय-सा करती हुई बोली—'पंडितजी, जानते हो न, रानी का विवाह सदा राजा से ही होकर रहा है !'

'रानी, यह न भूलना, ब्राह्मण तो राजाओं का भी गुरु होने के कारण महाराजा है; और तुम्हारा विवाह राजा से नहीं महाराजा से होगा, यही निश्चित करने के लिए मैं आज पण्डितजी से मिलने आया हूँ !' इतना कहकर महेश इस ढंग से मौली उठाकर हवेली में चला गया मानो कोई बात ही न हुई हो !'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

किंतु इसी बीच जाने कब उमा का क्रोध कपूर की तरह उड़ गया; वह एक टक महेश को देखती रही—इसकी विद्याबुद्धि पर वह मुग्ध थी और उसका स्वास्थ्य उमा को अपने आप झुका देता था!

महेश के चले जाने के बाद कई क्षण तक उमा एकटक अपने हाथों की मेंहदी की ओर देखती रही; अब सचमुच हाथ की मेंहदी उसकी खुशी का कारण थी। अचानक ज्योत्स्ना को फिर सामने देख कर उमा चौंक उठी। ज्योत्स्ना ने उमा के कन्धे से कन्धा सटाकर मुस्काकर पूछा—'क्यों उस मूरख के पीछे पगली हुई जा रही है री? दूसरों को मूरख बनाना और हँसाना ये ही दो काम तेरा कन्हैया खूब जानता है!'

'तो यह क्या कम है?' उसी तरह हाथों को देखती हुई उमा बोली।

'ओ मैया री।' उमा की बात सुनकर ज्योत्स्ना बोल उठी। किंतु उमा का ध्यान उस ओर न था; बोली—'बोलना तो ब्राह्मण का काम है ही, पर हँसाना उस्तादों का काम है!'

'तो यूँ क्यों नहीं कहती कि सारी काल्पी में तेरी आँखों में बस वही एक उस्ताद है! अच्छी बात है, बिठाये रख उसे सिर पर!...'

किंतु ज्योत्स्ना और कुछ कहे उसके पहले ही बुढ़ापे और अकाल क्रोध से काँपते हुए पं. रमानाथ का काँपता-सा स्वर सुनाई दिया—'लात मार कर निकाल बाहर करूँगा....जा निकल जा! अपनी लड़की मैं तुझे दूँ? तुझ जैसे कंगाल दरिद्री के घर अपनी लक्ष्मी बेटी भेज दूँ?'

किंतु महेश ने अपने स्वभावानुसार शांतिपूर्वक विनोदी स्वर में कहा—'पण्डितजी, आपही ने तो एक दिन वह शास्त्रोक्त वाक्य मुझ से कहा था कि लक्ष्मी बहुधा दरिद्री पुरुषों को ही पसन्द करती है; मैं दरिद्री हूँ, लक्ष्मी को मेरे घर अवश्य आना चाहिए!'

'मेरी पुत्री का विवाह राजा से होगा; कंगाल...दरिद्री....' पण्डित जी पंचम-स्वर में बोल रहे थे, महेश को भय हुआ कि कहीं वे स्वर को

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और ऊँचे न चढ़ा ले जाएँ; वह अचानक चीख उठा—'पण्डितजी, पीछे साँप है !'

रमानाथ बलात् कुछ बोलते बोलते रुक गया; पीछे देखकर पुनः महेश की ओर देखने पर उनके क्रोध की मात्रा बहुत घट चुकी थी। महेश चाहता था कि पण्डितजी अब और कुछ न बोलें; उन्हें रोकते हुए वह बोला—'साँप नहीं, साँप जैसा ही कुछ दिखाई दिया था। ख़ैर, अब कुछ न बोलिएगा !' कहकर महेश जाने लगा। रमानाथ के शब्द मुँह में ही अटक कर रह गये; महेश यकायक कुछ दूर जाकर रुक गया और ज़ोर से पण्डितजी को सुनाते हुए बोला—'लेकिन पण्डितजी, याद रहे ! विद्याधर भी राजा नहीं है !'

पण्डितजी के शरीर की तरह ओंठ भी काँपते रहे; उमा कुछ न बोली, ज्योत्स्ना भी चुपचाप यह सब देखती रही।

जब महेश घर पहुँचा वहाँ कुछ और ही रंग दिखाई दे रहा था। विद्याधर, यज्ञ की समिधा लेकर पण्डित रमानाथ के पास जाने का समय बीत चुकने के कारण लाल-पीला होकर वहाँ बैठा था, और उसके आसपास गाँव के अधेड़ और वृद्ध मुखिया भी आसन जमाकर बैठे थे; लखिया भी सिर का पल्ला कुछ खींचकर एक ओर खड़ी थी।

....और एक तरफ़ एक अँधेरे कोने में, महेश का गँजेड़ी चाचा अपनी चिलम कहीं छुपा कर दुनिया से ऊबा हुआ किसी ध्यान में बैठा था। महेश ने दबे पैरों घर में जाने की कोशिश की लेकिन लखिया की आँखों से न बच सका। महेश सब कुछ समझ गया था। इस छोटे से गाँव की पंचायत जब उसके टूटे हुए घर की चौपाल में इकट्ठी हुई देखा तो महेश को विश्वास हो गया कि परिस्थिति अवश्य विकट है !

'इधर आ, भागता कहाँ है ?' लखिया चिल्लाई और एक कोने से महेश का हाथ पकड़ कर उसने पंचायत के बीचोबीच ला खड़ा किया।

'एक शब्द भी मुँह से न निकालना....' लखिया ने सबों को सुनाते हुए, महेश से कहा—'ये पंडित जी कहते हैं कि तू इनकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होने वाली पत्नी को भगा लाना चाहता है!... सच बात है? मैंने कहा, तुझे ज़रा भी लाज नहीं आती? किसी की होने वाली...'

'अरे वह तो होने वाली है, अभी हुई कहाँ? कुमारी कन्या सबकी बहू, शास्त्र प्रमाण है!' कोने में बैठे हुए चाचा जी अचानक बोल उठे!

'चुप रहो!' चाची चिल्लाईं और चाचा अपनी चिलम छुपाते हुए दूसरी ओर देखने लगे। गाँव वालों के लिए चाचा-चाची का ऐसा तमाशा नया नहीं था। चाची के क्रोध की ज्वाला कम न हुई थी, बोली—'महेश, तेरे बाप, दादा, परदादा सबों ने घर को उजाड़ कर पढ़ाई की और घर का बोझ बहुओं ने सँभाला। देखले अपने चाचा को, सारे दिन गाँजा पीकर सो रहते हैं और सारी रात गाँव को पुराण सिखाते फिरते हैं और मुझे काम चलाना पड़ता है! चार महीने हुए तुझे काशी और मथुरा से पढ़ लिख कर लौटे, क्या किया तूने, एक दमड़ी की भी कमाई की है? नहीं! इस घर के पुरुषों का शाप है, हम जन्म जन्मान्तर के दरिद्री, निर्धन ठहरे, किसी सुखी घर की लड़की को लाकर क्या करेंगे? पहले एकबार मुझे तो पालकी में बिठा, फिर किसी लखपती की लड़की को ब्याहने की बात सोचना!'

अन्तिम वाक्य पूरा करने के पहले ही इस देहातिन का कंठ भर आया, अनपढ़ होते हुए भी उसे अपने कुटुम्ब पर गर्व था। अनेक दुःखों को सहन करते हुए उसे कठोर शब्द बोलने का अभ्यास-सा हो गया था किंतु फिर भी अपने गँजेड़ी पति और पुत्रवत् भतीजे के लिये उसका हृदय प्रेम से ओतप्रोत था। आज अपनी चाची को, भरी पंचायत में इस तरह बोलता देख कर पंडित महेश का विनोद क़ाफ़ूर हो गया। अपने कुल के गौरव का ध्यान आते ही उसका युवक-हृदय चीत्कार कर उठा; चेहरे पर हँसी की जगह कठोरता हो गई; शांति और दृढ़ता पूर्वक गंभीर-स्वर में चाची की ओर देख कर वह बोला—चाची, मुझे मंजूर है; अगर तुझे पालकी में न घुमाऊँ और पंडित,

Library

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रमानाथ की ही पुत्री से ब्याह न करूँ तो इस घर में पैर भी न रखूँगा !'

चाची ने हतप्रभ-सी होकर देखा कि महेश ने आगे की ओर कदम बढ़ा दिया है। विद्याधर को अपनी मूर्खता दिखाने का अच्छा अवसर मिला; उसने मज़ाक में पूछा—'ज़रा ठहरो पंडितजी; ज़रा कहो तो किस तरफ़ जाने की ठानी है ?

'आगरा !' स्वर में घृणा भर कर महेश ने जवाब दिया—'देखते क्या हो...हाँ, हाँ, आगरा जा रहा हूँ। अकबर बादशाह मेरे मित्र हैं !'

यकायक सब के सब हँस पड़े; विद्याधर ने गंभीर मुँह बनाकर कहा—'मित्र !... तुम गरीब होकर...'

'वे ग़रीब परवर हैं...' महेश ने दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया।

'आप तो कवि हैं !' एक अधेड़ देहाती बीच ही में बोल उठा।

'हाँ, कवि और हाथी की शोभा दरबार में ही होती है !' महेश ने तत्क्षण उत्तर दिया।

'वाह बेटा !' कोने में बैठे हुए चाचा अचानक धुन में आकर चिल्ला उठे फिर अचानक कुछ सोच कर चिलम घुमाते हुए चुप हो गए। चाची ने विद्याधर की ओर घूम कर कहा—'पंडित जी, जाइये वह आपही की बहू है !' फिर वह महेश को पकड़ने के लिए बाहर आई; सब लोग चाची और भतीजे को देख रहे थे। और घर के बाहर वाले नीम के नीचे महेश का गँजेड़ी चाचा महेश का हाथ पकड़ कर चिल्लाते हुए समझा रहा था—'बेवकूफ, हमारे घराने के किसी भी युवक ने कभी अपनी बहू को दूसरों के हाथों में नहीं जाने दिया। महेश चाचा की बात अनसुनी कर के आगे बढ़ने लगा, किंतु दो कदम भी न बढ़ सका; क्योंकि पीछे से किसी ने उसके कंधों को, उसके निश्चय से भी अधिक दृढ़ता से रोक लिया था।

वह लखिया थी, जो अपने उसी गर्व भरे लहज़े से चिल्लाई—'ठहर; मेरे घर से अन्न-जल लिए बग़ैर कहाँ जा रहा है ? अगर एक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

डग भी आगे बढ़ा तो अपना ख़ून पैरों में छींट दूँगी ! पहले खाना खा ले, फिर जहाँ तेरा जी चाहे चला जा—आगरा जा, हिमालय चला जा !'......

गद् गद् देहातिन और अधिक न बोल सकी; मुँह दूसरी ओर फेर लिया ।......और महेश से चाची के मुँह फिराने का कारण छुपा न रहा ।......

धीरे से उसने चाची का आँसू भरा चेहरा अपनी ओर घुमाया और बहुत ममता से पूछा—'चाची, तू मुझे 'माँ' क्यों नहीं कहने देती ?'

'शरमाती है !' नशे से चौंक कर चाचा ने कारण बताया ।...... लखिया चिढ़ाई गई सिंहनी की तरह खीझ कर बोली—'क्या कहा ? फिर एक बार सुनूँ तो !'

'मैं कहता हूँ, भोजन किये बग़ैर घर से निकलना अपशकुन माना जाता है !'......और चाचा अपनी चिलम की खोज में जाने कहाँ अदृश्य हो गया ।

चाची, महेश का हाथ पकड़ कर उसे घर में ले गई; चलते चलते महेश ने फिर एक बार चाची से कहा—'चाची, मुझे आगरा जाना ही होगा; अब मैं नहीं रुक सकता ।'

'चले जाना, मैं नहीं रोकूँगी !' चाची ने संक्षेप में उत्तर दिया । यह पहला ही अवसर था जब लखिया अपने जीवन में एक बार में इतना कम बोली थी ।

(४)

......यहाँ ईरान और हिन्दुस्तान नृत्य में प्रतिद्वन्दिता करते हैं; जिसकी धुन में सारा दरबार डोलता है—बादशाह भी डोलता है, दरबारी भी; सिर्फ़ अकेले मौलवी अब्दुल्ला को छोड़ कर ! गंधर्वों की दुनिया को अकबर के दरबार में चित्रित करने के लिए ईरान

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

की नाज़नी हूरें और कर्नाटक, बनारस की अप्सराएँ अपनी संपूर्ण कला का परिचय दे रही हैं।......सितार और सरिन्दे, मृदंग और ईरानी तबले एक साथ ताल दे रहे हैं!......धीरे धीरे नर्तकियों के दोनों विभाग एक समूह में सम्मिलित हो जाते हैं और संगीत नृत्य के साथ मिलकर वातावरण को डुलाने लगता है—ईरान और हिन्दुस्तान की कला, दूध में शक्कर की तरह मिल जाती है। देखते ही देखते नर्तकियाँ और वाद्यकार भी उसी तरह अनेक से एक हो जाते हैं। अकबर बादशाह की वह कृतकृत्य आकांक्षा जिसने मंदिर और मस्जिदों, महलों और दुर्गों के साथ साथ मनुष्यों और उद्यानों में भी ईरानी और भारतीय संस्कृति का एकीकरण किया था, यहाँ नृत्य-संगीत का सम्मिलन देखकर और अधिक प्रफुल्ल होती है!......किन्तु वातावरण के साथ भी मौलवी अब्दुल्ला उस कला से प्रभावित नहीं होता!......

यकायक राजसिंहासन पर से बादशाह का आश्चर्य में डूबा गंभीर स्वर सुनाई दिया—'क्यों मौलवी साहब, सारे-सारे दरबार की 'वाह-वाह' के साथ 'आह-आह' क्यों निकल रही है?'

संगीत समाप्त हो चुका था, इसलिए बादशाह के इस गंभीर प्रश्न को सुनते ही सबों का ध्यान मौलवी अब्दुल्ला की ओर गया। मौलवी साहब ने खड़े हो कर सिज़दा किया और दबी हुई आवाज़ में कहा—'आलीजाह, दिमाग़ परेशान हो रहा है; बहुत सोचने पर भी कुछ समझ में नहीं आता; एक मुक़द्दमे में इन्साफ़ का रास्ता ढूँढ़े नहीं मिलता!'

'हाज़िर किया जाय!' मौलवी साहब के पशोपेश को समझ कर उसी क्षण बादशाह ने हुक्म दिया।

मौलवी अब्दुल्ला क़ाज़ी (न्यायाधीश) थे, उनकी असाधारण बुद्धि पर लोगों की श्रद्धा थी। बादशाह के अनेक राजरत्नों, यहाँ तक कि फ़ैज़ी, ख़ानख़ाना, टोडरमल, तानसेन, राजा मान और राजा भगवानदास आदि में भी मौलवी साहब की बुद्धि को सम्मान प्राप्त था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मौलवी साहब की बात सुनकर सभी दरबारी एकटक उन्हीं की ओर देखने लगे। वे जानते थे कि अनेक कठिन गुत्थियों को सरलता से सुलझाने की क्षमता अकेले मौलवी साहब में थी ! आज वे ही लाचार हो गये तो बात जरूर असाधारण होनी चाहिए। इस घटना की नवीनता की कल्पना करके सारे दरबार का कौतूहल इस मुक़दमे को जानने के लिए बहुत बढ़ गया।...यही कारण था कि बादशाह का हुक्म होने पर अपराधियों को उसी समय प्रस्तुत किया गया। दो युवक और एक युवती, बादशाह के सन्मुख सिर झुकाकर खड़े हो गये। मौलवी ने बताया—

'आलीजाह, इन दोनों पुरुषों का दावा है कि यह उनकी स्त्री है। यह लड़की ब्याह के बाद पहली बार ससुराल जा रही है, इसलिए अपने पति को यह भी नहीं पहचानती। अब यह समझना है कि यह स्त्री किसे सौंपी जाय ?'

यह सुनते ही दोनों फरियादियों में छोटा दिखनेवाला बोल उठा—'खता माफ़ हो गरीब परवर; मैं ही इस स्त्री का स्वामी हूँ ! जब मैं उस किनारे से जमना पार करने नाव पर बैठा तो यह बदमाश भी मेरे पास आ बैठा और मेरी स्त्री को घूर घूर कर देखने लगा। जैसे ही हम लोग नाव से उतरे, इसने मेरी स्त्री का हाथ पकड़कर कहा 'यह मेरी स्त्री है, और—'

'यह सब झूठ है हुजूर !' दूसरा पुरुष, जिसकी उम्र कुछ अधिक मालूम होती थी, और जो दूसरे जैसा ठेठ देहाती मालूम नहीं होता था, बीच ही में बोल उठा—'हुजूर, यह मेरी स्त्री है; मैं जवान नहीं हूँ इसलिए यह मेरी स्त्री उड़ा ले जाना चाहता था; यह मेरी ही पत्नी है मालिक !'

दूसरे पुरुष के बोलने में इतनी नम्रता और क्षोभ भरा था कि दरबार के कई असाधारण विद्वान् भी सोच में पड़ गये। बादशाह की रसवृत्ति, ऐसी कठिनाइयों के आने पर और बढ़ जाती थी; बादशाह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

की इस रसवृति के क्षेत्र में राजदरबार और रणमैदान दोनों समान थे, बोले—'साहब, आप बेफिक्र रहिए, हमारे दरबार के अनेक आलिम विद्वानों की हाजिरी में इस इन्साफ के लिए ज्यादा देर नहीं लग सकती !—क्यों यूसुफ ?'

····और राजदरबार में जिस वक्त इस अतिगंभीर उलझन को सुलझाने का प्रयास एक साथ कई अभ्यासी मस्तिष्क कर रहे थे, उसी समय राजमहल के राजद्वार पर खड़े हुए विशालकाय हब्शी पहरेदार से काल्पी का लघुकाय महेश ब्राह्मण भीतर जाने के लिए विनती कर रहा था। घर से निकलते वक्त गड़बड़ी में महेश चाची लखिया से बादशाह की दी हुई अँगूठी लेना भूल गया था। अँगूठी न होने के साथ ही पहरेदार द्वारा इस सख्ती से रोके जाने का एक खास कारण महेश ब्राह्मण की अकिंचन पोशाक भी थी! भरसक प्रयत्नों के बाद भी पंडित महेश, विशालकाय हब्शी के हृदय में मृदु भावना जगाने में असफल ही रहा। उसने दूसरा उपाय आजमाया; आँखों में आँसू और गले में सिसकियाँ भर कर बोला—'सच कहता हूँ, दरबानबाबा ! बादशाह सलामत भी मुझे देखते ही पहचान जाएँगे मुझे जाने दो, यह मेरा जीवन-मरण का सवाल है! इसी पहिचान के लिए बादशाह सलामत ने मुझे अपनी अँगूठी दी थी, लेकिन जल्दी जल्दी में मेरी चाची ने जाने कहाँ रख दी कि ढूँढने पर भी कहीं न मिली !'

'तो उस अँगूठी के साथ तेरी चाची ने तुझे भी क्यों कहीं खो न दिया ?' हब्शी ने विनोद किया; उसी के साथ आसपास खड़े हुए दूसरे दरबान भी खिल खिलाकर हँस पड़े। अब महेश को अनुभव हुआ कि 'हब्शी' में कोमल भावनाएँ जगाने का प्रयत्न बिलकुल व्यर्थ है! उसने और अधिक विनम्र होकर कहा-'बड़े मियाँ, मैं कई आपदाओं का मारा, एक गरीब ब्राह्मण हूँ... सुनो तो !' कहकर उसने सिर ऊँचाकर के ताड़वृक्ष जैसे हब्शी के कान में धीरे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

से कहा—'मुझे दरबार में से जो भी कुछ मिलेगा, उसमें से आधा तुम्हारा, बस ? वचन ले लो !'

अचानक दरबान का स्वर बदला; कौन कहता है कि हब्शी में हृदय नहीं होता ? उसने अधखुले ओठों से बुदबुदाया—'आधा हिस्सा ? सच !'

'बिलकुल सच ! यह ब्राह्मण का वचन है !! महेश ने भी उसी ढंग से जवाब दिया । पहरेदार का ध्यान दूर से महल की ओर आते हुए पंडित-समूह की ओर गया; उसने ऊँची आवाज़ से उनका सत्कार करना शुरू किया और जानबूझ कर महेश की ओर ध्यान न दिया; महेश भी पंडितों की टोली के साथ अन्दर चला गया और पीछे की तरफ़, कोई देख न सके वैसे बैठ गया ।

दरबार में अभी तक उस झगड़े का निर्णय न हो सका था; और बादशाह जल्द से जल्द उसका इन्साफ़ कर डालने के लिए उत्सुक हो रहा था; सभी दरबारी अपनी समस्त शक्ति से सोचने में मशग़ूल थे; आख़िरकार यूसुफ़ को कहना ही पड़ा—'जहाँपनाह, लड़की के गाँव हमारे आदमियों को भेज कर हाल मँगाना होगा !'

'नहीं !' बादशाह ने खीझ कर कहा—'ऐसा इन्साफ़ तो मामूली आदमी भी कर सकेगा; हम, यहीं, इसी वक्त निर्णय कर डालना चाहते हैं ! हमारे इतने बड़े दरबार में अनेक आलिम बैठे हैं; क्या किसी को एक भी तरकीब नहीं सूझती ? क्या इतने बड़े दरबार में कोई भी विद्वान् इन दो में से किसी एक को गुनहगार ठहराने की सामर्थ्य नहीं रखता.......कोई भी नहीं ?'

बादशाह ने दरबार के एक कोने से दूसरे कोने तक को संबोधित कर के यही सवाल पूछा, किन्तु सभी इतने गहन विचार में मग्न थे कि कोई भी उनके सवाल का जवाब न दे सका; सारा दरबार नीरव था । उसी समय दूर के एक खम्भे के पीछे से आवाज़ आई—'हुज़ूर, अगर हुक्म हो तो.......!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सबों ने चौंक कर उस ओर देखा—वह महेश था। बादशाह ने आवाज़ में खुशी भर कर कहा—'शाबाश, आओ, सामने आओ!'

महेश धीरे धीरे बादशाह के सम्मुख आ कर खड़ा हो गया; बादशाह ने अपने ऊँचे तख़्तताऊस से नीची निगाह कर के देखा और आश्चर्य से बोल उठा—'अरे, तू तो वही......'

'हुज़ूर, मैं वही कालपी का ब्राह्मण हूँ!'

सारा दरबार आँखों में अचरज भर कर उस कंगाल ब्राह्मण को देखता रहा! महेश ने अदब के साथ झुक कर कहा—'हुज़ूर, एक जल्लाद को हुक्म दिया जाय!'

......और हुक्म के साथ ही जल्लाद, महेश के सामने आ खड़ा हुआ; सबों का कौतूहल काफ़ी बढ़ चुका था। महेश जल्लाद का हाथ पकड़ कर उन दोनों दावेदारों के पास गया और हुक्म दिया—'दीवार की तरफ़ मुँह कर के खड़े रहो!'

तीनों ने मुँह फिरा लिया। बादशाह भी मूँछों को सहलाता हुआ यह सब देखता रहा। महेश ने जल्लाद का तलवार वाला हाथ पकड़ रखा फिर ज़ोरों से चिल्लाया—'जल्लाद, देख क्या रहा है? उड़ा दे बदमाश का सिर!'

यकायक बड़ी उम्रवाले आदमी ने घबरा कर पीछे देखा; छोटी उम्रवाला पुरुष उसी तरह स्थिर खड़ा रहा। महेश ने बड़े का हाथ पकड़ लिया और बादशाह के सामने खड़ा करके कहा—'हुज़ूर, यही है गुनहगार!'

अचानक बादशाह के मुँह से अनजाने ही उद्‌गार निकल पड़े—'आफ़रीन! शाबाश पंडित, शाबाश! बंद करो इस बदमाश को, और जाने दो उन दूल्हे-दुलहिन को! पंडित, आगे आओ: आज तुमने हमारे दरबार की इज़्ज़त रख ली है! माँग ले ब्राह्मण, मान, दौलत—क्या चाहिए तुझे? इस वक़्त मैं बहुत ख़ुश हूँ! क्या चाहिए?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'जहाँपनाह, इस वक्त तो सिर्फ़ पचास राठोड़ी देहाती जूते मुझे मारने का हुक्म दिया जाय !'

सभी इस बात से चौंक उठे ! कोई पागल तो नहीं बोल रहा ? —बादशाह, महेश के मन की थाह लेने के लिए उसे एक टक देखने लगा। आज भी छोटी छोटी बातों पर से बड़ी समस्याओं के निराकरण करनेवाले बादशाह ने महेश के इन मूर्खतापूर्ण शब्दों में छुपे हुए महान् किंतु विनोदी हृदय को पलक मारते ही पहचान लिया। लेकिन यूसुफ़ को इस विचित्र माँग से, विश्वविजेता अकबर के दरबार की तौहीन होती दिखाई दी—उससे न रहा गया; खड़ा हो कर बोला—

'अरे पण्डितजी, यह भी कोई बात....'

'ठहरो !' बादशाह बीच ही में बोल उठा; फिर कठहरे पर झुक-कर विनोदपूर्ण किंतु चुनौती के ढंग से पूछा—'पण्डित, तुम्हारी माँग मंज़ूर की जाती है, हाँ अब बताइये, इसकी वज़ह क्या है ?'

महेश ने भी निस्संकोच होकर तत्त्क्षण जवाब दिया—'हुज़ूर, शाही महल का ख़ास पहरेदार भी इसमें मेरा हिस्सेदार है !

बादशाह महेश का मन्तव्य समझकर चौंक पड़ा; आँखें फैलाकर उसने पूछा—'हमारा ख़ास पहरेदार ? शाही महल का ख़ास दरवान ?'

'जहाँपनाह, दीये तले हमेशा अँधेरा ही होता है !'

'ख़ूब !' इस बार भी बादशाह अनजान ही बोल उठा ! दूसरी चुनौती को भी उसने सहन कर लिया; क्रोध को बरबस छुपाकर उसने यूसुफ़ की ओर देखकर हुक्म दिया—'यूसुफ़, इस अँधेरे को दूर करना ही होगा; दरवान को बुलाकर उसे गिन गिन कर पचास देहाती जूते लगाये जायँ !'

बादशाह के हुक्म की तामील होने में ज़रा भी देर न लगी; हब्शी मियाँ ने भरे दरबार में पच्चीस जूते खाये; छब्बीसवें जूते के उठने के साथ दरवान को हटाकर महेश उसकी जगह आ खड़ा हुआ। तत्त्क्षण बादशाह ने रोककर कहा—'ठहरो, ये पच्चीस जूते इस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ब्राह्मण के नाम से खज़ांची के पास जमा करा दो; वक्त आने पर ब्याज के साथ चुका दिये जायँगे !'

इस बार बादशाह के इन शब्दों को सुनते ही सबसे पहले महेश चौंका; उसे लगा कि समय, वातावरण और मनुष्य का पारखी यह शीघ्रबुद्धि बादशाह ख़ुद उसे ही खिला रहा है ! निमिष भर में बादशाह की वह मूर्ति महेश के हृदय पर उद्धृत हो गई—निर्निमेष दृष्टि से वह बादशाह को देखता रहा।

उसका ध्यान तब हटा, जब बादशाह ने स्वर में मिठास भर कर महेश को अपने समीप बुलाकर पूछा—'कहिए पण्डित, आगरा आने की कोई ख़ास वज़ह... ?'

'पेट ही तो, ग़रीब परवर !'

'क्या काम करोगे ?'

'जो हुक्म हो जाय ब्राह्मण जो ठहरा !'

'पहेली बूझोगे ?' बादशाह ने अपनी दाहिनी ओर वाले पण्डितों में से एक को लक्ष्य करके कहा—'पण्डित देवीमिश्र, आप ही अपना कलवाला प्रश्न पूछिये; देखें, ये पण्डित क्या जवाब देते हैं !'

उसी वक्त पण्डित देवी मिश्र ने महेश से पूछा :—

"कहा न अबला कर सके ? कहा न सिन्धु समाय ?
कहा न पावक से जले ? कहा काल नहिं खाय ?"

और तत्क्षण महेश ने उत्तर भी प्रस्तुत कर दिया:—

"सुत नहिं अबला कर सके, मन नहिं सिन्धु समाय;
धर्म न पावक से जले, कीर्ति काल नहिं खाय।"

'वाह, वाह ! ख़ूब !!' बादशाह से न रहा गया; दूसरे रसिक दरबारी भी मुस्करा उठे। पण्डित देवी मिश्र भी अतीव आश्चर्य से इस नवागंतुक महेश को एकटक देखने लगे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'अब आप पूछिये शेखजी !' समस्याओं और रसिकता के रंग में डूबकर बादशाह ने इस बार शायरों के शायर शेख़ फ़ैज़ी पर दृष्टिपात किया।

शेख़जी अभी तक चुपचाप इस नये पण्डित को मुग्ध बनकर देख रहे थे। अकबर बादशाह के विद्वान-समूह में प्रमुख, अद्वितीय फारसी और संस्कृत साहित्यज्ञ शेख़जी ने इस बार सीधी सादी हिन्दी में पूछा:—

"कौन चहे है बरसना, कौन चहे है धूप ?
कौन चहे है बोलना, कौन चहे है चूप ?"

महेश ने भी तुरन्त उत्तर दिया:—

"माली चाहे बरसना, धोबी चाहे धूप;
शाह जो चाहे बोलना, चोर जो चाहे चूप।"

लेकिन आलीज़ाह !...

"अति का भला न बरसना, अति की भली न धूप;
अति का भला न बोलना, अति की भली न चूप।"

'वाह ! वाह !!' प्रशंसा में डूब कर बादशाह प्राय: चिल्ला ही उठा; उसका हाथ अपने गले पर मोतियों की माला पर पड़ा। किंतु शेख़जी ने उसी वक्त दूसरा प्रश्न कर ही दिया:—

"चम्पा, तुझ में तीन गुन, रूप, रंग अरु बास;
एक अवगुन ऐसो भयो, भ्रमर न आवे पास।"

और महेश का उत्तर था:—

"चम्पक वरणी राधिका, भ्रमर हरी के दास;
इस कारन आवत नहीं, भ्रमरहु चम्पा पास।"

"वाह, वाह ! खूब, पंडित, खूब !' बादशाह और फ़ैज़ी के साथ इस बार तो अति-अल्पभाषी राजा मान और टोडर भी बोल उठे ! चारों ओर से इस नये कवि के स्वागत के उद्गार बरस पड़े। केवल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सूफ़ी मियाँ के मुँह से एक शब्द भी न निकल सका। इतने अल्प समय में महेश ने बादशाह के हृदय में अपना विशिष्ट स्थान प्राप्त कर लिया था। एक नई और विचित्र रसिकता और प्रसन्नता की भावना से रंजित होकर कठहरे पर हाथ रख कर झूम उठा; महेश ऊँचे सिंहासन के सामने नीचा सिर किये जैसे हुक्म सुनने के लिए तैयार ही खड़ा था। शाह ने एक टक उसकी ओर देख कर फिर पूछा—'बोल पंडित, तू ग़रीब क्यों? मैं बादशाह क्यों?'

महेश ने पलक मारने के पहले ही जवाब दिया:—

'महाबली,

राम झरोखे बैठि कै, सबका मुजरा लेत;
जैसी जाकी चाकरी, वैसा वाको देत।"

'वाह, कवि धन्य हो!' इस बार विनय और अदब का बंधन छोड़ कर बादशाह के पहले शेख़ जी ही बोल उठे!

बादशाह की मोतियों की माला उछल कर जब महेश के हाथों में पड़ी तब महेश चौंक उठा, और साथ ही लोगों को भी बादशाह की कृपा का अंदाज़ हुआ। सभी दरबारियों ने परस्पर देखते हुए महेश की महत्ता को आश्चर्य और अनुमान से मापना शुरू किया। अकबर के तत्कालीन दरबार में अनेक रत्नों—यहाँ तक कि एक सौ बयालीस प्रकांड पंडितों और अनेक प्रखर कवियों के होते हुए भी महेश का अपनापन उन से भिन्न, एक अनोखी विशिष्टता लिए, सभी उपस्थित दरबारियों के हृदय पर मस्तिष्क में घर करने लगा। आज इस अकिंचन विद्वान् ब्राह्मण की उपस्थिति, अपनी संपूर्ण महत्ता से प्रसारित होकर सारे दरबार में कुछ ही क्षणों में घहराती हुई राजा मान से प्रारंभ हो कर हँसमुख शायर फैजी, हुज़ूरियों में अतग़ और कल्याण से लेकर चौबदार तक पर मँडराने लगी। सबों को स्पष्ट अनुभव हो रहा था कि महेश ने आज बादशाह की उस प्रच्छन्न विनोदवृत्ति और रसाकांक्षा के साथ उनके हृदय को भी अपने तईं वश

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में कर लिया था, जिसे इन दरबारियों में से किसी ने भी अब तक देखने को सोचा भी न होगा।

यूसुफ एकाएक जल उठा! आज सारे दरबार, और खास करके अपनी पराजय का उसे तीक्ष्ण अनुभव हो रहा था और स्वभावानुसार अपने सिवा किसी दूसरे को बादशाह का स्नेहभाजन होता देख वह यों ही लाल पीला हो जाया करता था—आँखों में तीक्ष्णतम द्वेष की सम्पूर्ण ज्वाला भरकर वह महेश की प्रत्येक क्रिया को देखता रहा!....

…किंतु राजदरबार बर्खास्त होने पर भी महेश राजमहल से बाहर पुनः पैर न रख सका; बादशाह ने जब व्यक्तिजीवन में प्रवेश करके हरम में प्रवेश किया तब भी महेश उसके साथ ही था। गंभीरता ने विनोदवृत्ति का स्थान ले लिया और तब भी बादशाह की प्रश्नावली की संख्या बढ़ती गई और उसके प्रत्येक प्रश्न का, महेश अपने ढंग से जवाब देता रहा। आज बादशाह को जाने क्यों अनुभव हो रहा था कि वह सचमुच अपनी महत्ता-प्रदर्शन और आडम्बर के बोझ को दूर फेंककर बरसों से बिछड़े हुए अपने निकटतम मित्र के सम्मुख अपने मन का सारा गुबार निकाल कर सचमुच हलका हो रहा है! उनके प्रश्नोत्तर का ताँता टूटता ही न था; दोनों ओर से, समानरूप से, मानो एकमेव मैत्रीभाव का प्रश्नोत्तर के बहाने आदान प्रदान हो रहा था। वेश-परिवर्तन के उपरांत भी अकबर की प्रश्नावली में बहुत से प्रश्न शेष थे; उसने महेश से पूछा :—'अच्छा, पंडित महेश, सत्य और असत्य में कितना अंतर है, बताइये तो?'

'सिर्फ चार ही अँगुलियों का अंतर है हुजूर...!'

'कैसे?'

'आँख और कान में चार ही अँगुलियों का तो फर्क है जहाँपनाह! यह तो सभी जानते हैं हुजूर, कि आँखों देखी जितनी सत्य होती है, उतनी कानों सुनी नहीं!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'बिलकुल ठीक कहा, पंडित! वाह!!' अकबर ने हर्षोल्लास से मुस्कराकर अपनी अँगूठी की मुद्रा निकाल कर महेश के हाथ में पहना दी; उसकी आँखें मानो अभी कही हुई महेश की बात को प्रत्यक्ष करती हुई स्नेह से अभिभूत थीं!

अपनी स्मरण-शक्ति पर पूरा जोर डालकर सोचने पर भी, बादशाह के आठों पहर के साथी हुजूरियों और उसके व्यक्तिगत मंत्री यूसुफ को याद न आया कि आज से पहले भी बादशाह किसी व्यक्ति पर इतना खुश हुआ होगा जितना इस कंगाल ब्राह्मण पर! और वह भी तब, जब कि उसने अपनी जिंदगी में किसी राजदरबार का मुँह पहली ही बार देखा होगा! सारा दरबार इस घटना से आश्चर्य चकित था। महल और हरम में भी कानाफूसी का मुख्य विषय भी इसी कंगाल ब्राह्मण की भाग्यशालिता थी!

यह तो सभी बखूबी जानते थे कि अकबर किसी दृष्टि से 'अपव्ययी' नहीं हो सकता! उसके भेंट पुरस्कार भी व्यक्ति की गुणज्ञता को माप कर ही दिये जाते थे। यद्यपि उसका अधिकांश जीवन युद्ध में व्यतीत हुआ था, तथापि ललित-कलाओं का भी वह उतना ही तीक्ष्ण पारखी था जितना किसी वीर के वीरतापूर्ण शस्त्र संचालन का! यही कारण था कि अकबर का दरबार शिल्पियों, चित्रकारों और संगीतज्ञों से परिपूर्ण था!—किंतु आज महेश से मिलने पर अकबर के हृदय की प्रसन्नता, आवेश और विनोदवृत्ति जिस तरह उन्मुक्त होकर बह रही थी, यही सब के आश्चर्य का विषय था। और जब महेश अंत में अपने सभी भेंट-पुरस्कार लेकर महल से बाहर निकला, तब तो मानों सभी के आश्चर्य की कई गुनी वृद्धि के साथ उस पर प्रशंसा और सत्य की छाप भी पड़ गई, सभी कर्मचारी अपने आश्चर्य के केन्द्र महेश को जाते हुए एकटक देखते रहे!

 CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

किंतु यूसुफ़ और उसके साथी मुख्य दरबारियों के हृदय में यही आश्चर्य अपनी स्थिति का ध्यान आते ही, द्वेष और क्रोध की ज्वाला से धधक उठा ! और उस ओर, बादशाह के हृदय का आनन्द-प्रवाह मानो रोके न रुक रहा था ! आज अकबर का यह अप्रत्याशित रूप, अंतःपुर वासियों के लिए पहले से भी अधिक अगम्य हो गया !... सचमुच अकबर को उसके असली स्वरूप में पहिचानना उसकी पट्टरानी और अनन्य सेविका जोधाबाई के लिए भी बहुत कठिन था। कोई उसके भविष्य के रुख का अनुमान नहीं कर सकता था क्योंकि उनका मानसिक व्यक्तीकरण क्षण क्षण में परिवर्तनशील था; वह एक ही समय में अति मृदुल भी बन जाता और अति कठोर भी; क्रोध की ज्वाला से अरुण बनी हुई उसकी आँखें दूसरे ही क्षण स्नेह-रस से शराबोर भी हो जातीं, कोई भी उसकी अनपढ़ सी बातों को यकायक विद्वत्तापूर्ण स्वरूप में बदल जाने का अनुमान नहीं कर सकता था ! यही कारण था कि उसकी स्वभाव की ऐसी विचित्रता को लेकर उसके दुस्साहस, शक्ति और बुद्धिमत्ता का सभी दरबारी सम्मान करने के साथ साथ उससे भय भी खाते थे । जोधाबाई, अकबर की इस प्रसन्नता को मापने के लिए कौतूहल से उसे अर्थभरी दृष्टि से देखने लगी।

'महारानी, सब से पहले मैंने एक दिन ख़ानख़ाना से पूछा था; उसके बाद एक एक करके वकील, वज़ीर, मौलवी, बख़्शी, काज़ी सबों से पूछ डाला, लेकिन इतने बरसों में किसी ने भी मुझे सत्य और असत्य के अन्तर का सही जवाब न दिया, सबों ने कोशिश की पर कामयाब कोई न हुआ आज वह व्यक्ति मुझे मिला—ब्राह्मण बीरबल !...कितना साफ और कितना सही जवाब ! ज्यों ज्यों सोचता हूँ, त्यों त्यों अर्थ निकलता है...क्या कहूँ।

चतुर जोधाबाई ने इस प्रभाव की गहराई को और साफ़ तौर से जानने के लिए प्रश्न किया—'लेकिन आपने तो उसका नाम ही एकदम बदल कर बीरबल रख दिया है ! इसकी कोई ख़ास वज़ह ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अक़बर अचानक जैसे आस्मान से ज़मीन पर उतर आया; इस प्रश्न से अति गम्भीर होकर उसने उत्तर—महारानी, वह पण्डित कल से दीवाने-ख़ास में बैठेगा; उसके पास दिमाग़ है, और दिमाग़ वहाँ भी काम करता है जहाँ तलवारधारी को भी रुक जाना पड़ता है, वहाँ वही आगे बढ़ सकता है जिसके पास दिमाग़ हो...यही वज़ह महेश को वीरों का भी वीर बना सकती है—वीरवर—बीरबल !'

अन्तिम शब्द के साथ अकबर खड़ा हो गया और स्वगत-सा बोलने लगा—'वह हास्य की ओट में जूते भी मार सकता है और मज़ाक के तौर पर ज़िन्दगी की बड़ी से बड़ी बात को चुटकियों में समझा सकता है। शाही दरबार जिस समस्या को पाकर सिर धुनता है, जहाँ मैं भी मज़बूर हो सकता हूँ वहाँ यह सही रास्ता दिखलाने की सामर्थ्य रखता है...' अकबर बोलते बोलते अचानक कुछ सोचने लगा; क्षणभर मौन रहने के बाद फिर वह एक विषादमय मुस्कान के साथ बोला, शब्दों में पुट था—'बादशाह के सेवक सभी बन जाते हैं, मित्र कोई नहीं बनता ! बीरबल मेरा पहला मित्र है और मित्र ही रहेगा !...यह मुफ़लिस और बादशाह की दोस्ती होगी—अन्तर और आडम्बर की !'

जोधाबाई सतत दृष्टि से बादशाह को देखती रही—सुनती रही; उस अदृष्ट के प्रति रानी को भी श्रद्धा उत्पन्न हुई, जिसने बादशाह के हृदय को आकर्षित कर लिया था; बादशाह के जिस एकाकीपन को, जो कभी कभी अत्यधिक उभर आता था और जिसे उसका सम्पूर्ण आत्म दान भी तृप्त नहीं कर सका था उसे आज उसने अकबर में परितुष्ट होते देखा। स्वामी का हाथ पकड़ कर झरोखे के पास ले गई। नीचे के चौक में कई सुन्दरी दासियाँ शतरंज के प्यादों की पोशाक पहनकर चाल चलने के इंतज़ार में खड़ी थीं !...

बादशाह और जोधाबाई शतरंज खेलने लगे और नीचे के संगमर्मर के शतरंजपट पर मूर्तियों की तरह सुन्दरियाँ उनके इशारों पर नाचने लगीं !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'भूलिए नहीं, आप कौन हैं—आप वे हैं......!' यूसुफ़ की द्वेषाग्नि में घी उँड़ेला जा रहा था। शाही बग़ीचे के एक सुनसान कोने में नसीरख़ाँ मानो यूसुफ़ के सोये या खोये हुए महत्त्व की ओर संकेत कर के उसे उभाड़ने की कोशिश कर रहा था।......'जिसकी शादी बादशाह सलामत ने अपने हाथों कराई थी; यह न भूलिए आप छोटी बेगम के भाई होते हैं, चाहे वह दूर का ही रिश्ता क्यों न हो—यहाँ तक कि बादशाह आपको अपना दामाद समझ कर पेश आते हैं, फिर भी मैं दो महीनों से देख रहा हूँ कि वह दो कौड़ी का बीरबल बादशाह को आप के नज़दीक से खींचता ले जा रहा है; और आप की जगह हथियाता चला जा रहा है!'......सब से बड़ा अचरज तो इस बात का है कि जहाँ बड़े से बड़ा सरदार पैर रखना जान की जोखिम समझता है, उस ज़नानख़ाने में भी यह हिन्दू बिना किसी रुकावट के घुस जाता है! तोबा! छोटी बेगम तक ने उससे पर्दा करना छोड़ दिया है! तोबा, सरदार तोबा! और अब तो यह भी आप से छुपा नहीं सरदार, पर्दा तो दूर; छोटी बेगम और मरियम बेगम बड़े ही प्यार से उसकी बातें भी सुनती हैं! पर मेरा कहा भी याद रखना ख़ाँ साहब, यह बीरबल पाजी ही नहीं शैतान है, जादूगर है और उसी हुनर से उसने बादशाह सलामत को अपने बस में कर लिया है!'

'बस में क्यों न करे?' यूसुफ़ के इस व्यंग में उपेक्षा से अधिक द्वेष था; नासीर जो दो सौ घुड़सवारी मनसबदार था, और सैयद होने के कारण 'इमाम' बनने का स्वप्न देखा करता था, और कुछ कहने की इच्छा होते हुए भी यूसुफ़ के व्यक्त भावों से अपने अव्यक्त भावों की तुलना का गौरव लेने लगा। यूसुफ़ उसकी ओर बिना देखे ही कहता रहा—'वह विद्वान्, आलिम, कवि जो ठहरा! किसी भी मुश्किल से मुश्किल सवाल का जवाब वह चुटकियों में देता है जिससे बादशाह सलामत खिलखिला कर हँस पड़ते हैं और ख़ान-ख़ाना भी बड़े ही ज़ुनून से कहते हैं कि बादशाह को हँसी की खिलखिलाहट से खिला देनेवाला सिर्फ़ बीरबल ही है!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'पत्थर ! आप भी शायद उस क़ाफ़िर की शह में खिचते नज़र......!'

'मैं ? मैं उस क़ाफ़िर की......मैं क्या करूँगा, यही तुम सबों को दिखाना बाक़ी है !'

'क्यों न हो सरकार, क्यों न हो ! आप, बस आप ही हैं...' चाटुकारी को और बढ़ाते हुए नासीरख़ाँ बोलता रहा—'अब आप से क्या छुपा है, हमें अफ़सोस इस बात का है कि सब कोई, यहाँ तक कि शेखजी, मौलवी, काज़ी, तानसेन, लाल कलावंत सबों की नज़र बीरबल पर ही लगी रहती है ! ख़ाँ साहब, ख़ुदा की कसम, यह बीरबल जैसी मजाकिया बातें करता है, वैसी तो मैं दिन में हजार सुनाऊँ, पर कहें किसे ? दिये तले तो हमेशा अँधेरा ही होता है !'

'अब इस अँधेरे को दूर करना ही होगा !....' दो महीने पहले भरे दरबार में बादशाह के कहे हुए इसी वाक्य को, इस समय यूसुफ़ किसी विचित्र आनंद का अनुभव करके बोल उठा !...

अचानक उसकी नज़र बादशाह की ओर पड़ी, दूसरे अमीर उमरावों के साथ वह उसी ओर आ रहा था। यूसुफ़ फौवारे से हटकर चुपचाप बादशाह की मजलिस में शामिल हो गया।

उस वक्त शाही महल के बाहर किसी कुम्हार का एक गदहा रेंकना छोड़कर नाच रहा था। बहुत सी महत्त्वपूर्ण राजनीतिक बातों पर विचार विमर्श करके अभी बादशाह अपनी मजलिस के साथ बगीचे में सैर करने निकला था। इन दो महीनों में बादशाह पर बीरबल की विनोदवृत्ति का बहुत कुछ असर हो चुका था, इस वक्त भी बीरबल उसके साथ ही चल रहा था; गदहे की ओर देखकर बादशाह को मजाक सूझी; कविता में ही उसने बीरबल से पूछा :—

"किस कारन यह नाचे गदहा ?"

बीरबल ने तत्क्षण दूसरा चरण जोड़ दिया :—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

"आगे नाथ, न पीछे पगहा ;
इस कारन ये नाचे गदहा !"

'वाह कविराज !' अकबर का विनोदी हृदय नाच उठा ! अचानक उसकी दृष्टि यूसुफ़ की ओर गई। बहुत पहले यूसुफ़ ने बादशाह के सामने नासीरख़ाँ की बहुत तारीफ़ की थी। निस्सन्देह, नासीरख़ाँ अरबी और फ़ारसी का धुरन्धर विद्वान् था, साथ ही पैतृक परम्परा के नियम के आधार पर सारा क़ुरान उसे कंठस्थ था। वह स्वयं अपने आप को बहुत बड़ा विद्वान् समझता था और हर वक्त यही प्रयत्न करता रहता था कि किसी तरह बादशाह की कृपादृष्टि उस पर भी पड़ जाय। 'इमाम' बन जाना उसका अन्तिम ध्येय था। अचानक बादशाह को यूसुफ़ द्वारा की गई नासीरख़ाँ की प्रशंसा याद आई; उसने मुस्करा कर आलिम नासीरख़ाँ से पूछा:—'आलिम, ज़रा बताइये तो मेरी हथेली में बाल क्यों नहीं उगते ?'

नासीरख़ाँ, बादशाह के सामने अपनी विद्वत्ता दिखाने के लिए हमेशा इतना उतावला रहता था कि अचानक बादशाह का यह विचित्र प्रश्न सुन कर उसकी जीभ हिल भी न सकी; बाहर न दिखाई दी हो सो बात नहीं, मुँह के भीतर भी क्रियाशील न रही !......यह भी कोई सवाल था ?.......लेकिन सभी उत्सुकता से उसकी ओर देख रहे थे। तब बादशाह ने उसी विनोदी प्रश्नमय दृष्टि से बीरबल की ओर देखा; बीरबल ने कहा—'जहाँपनाह, आप इन दोनों से इतना अधिक धन इनाम देते रहते हैं कि द्रव्य से घिसते रहने से आप की हथेली में बाल उग ही नहीं पाते !'

'तो आप के हाथ में क्यों नहीं आते ?'

'रोज़-ब-रोज़ आपसे इनाम लेने से हुज़ूर !'

'तो हम सबों के हाथों में भी क्यों नहीं आते ?'

'हुज़ूर, रोज़-रोज़ मेरे इनाम को देख-सुन कर बहुत से खुश हो कर और बहुत से जल-ज़ल कर अपने हाथ मलते रहते हैं और सोचते

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहते हैं कि हमें भी ऐसा इनाम कब नसीब होगा? सबों के लिए तो यही वजह है जहाँपनाह!'

बादशाह खिलखिला कर हँस पड़ा; सारी मजलिस में क़हक़हे छूट पड़े; नासीर और यूसुफ़ को भी दिखावे के लिए हँसना पड़ा। धीरे धीरे बादशाह के साथ सारी मजलिस बग़ीचे के एक किनारे पर आ पहुँची। फ़ौवारे से कुछ ही दूर एक छोटा सा गड्ढा था, और उसके पास ही दो मरे हुए पत्ती पड़े थे। बादशाह ने भी यह देखा और शायर ने भी। शायर फ़ैज़ी की ओर संकेत करके अकबर ने पूछा—'शेखजी, ज़रा कवि से पूछिये, शाही बग़ीचे में यह क्या माजरा है?

फ़ैजी ने उसी वक्त कवितामय प्रश्न किया—

झुक्यो न देखो पारधी, लग्यो न देखो बाण;
मैं तोहे पूछों बीरबल, कैसे त्यागे प्राण?"*

बीरबल एकटक उन मृत पत्ती-युगल को देख रहा था, बहुत गंभीरता से उसने उत्तर दिया—

"जल थोड़ो नेहा घणो, लगे प्रीति के बाण;
तूं पी तूं पी, कर मरे, या विधि त्यागे प्राण!॥

'ख़ूब कवि, ख़ूब कहा!' बादशाह चिल्ला उठा; सारी मजलिस ने 'वाह, वाह' की ध्वनि से बादशाह का समर्थन किया; बादशाह ने फिर बीरबल की ओर देख कर पूछा—'पंछियों में इतना प्रेम होता है लेकिन मनुष्यों में......'

---

*यहाँ बहेलिया भी दिखाई नहीं देता और न बाण ही लगे हैं; बीरबल, तब बताइये; किस वजह से दोनों पक्षियों ने प्राण छोड़ दिये?

॥इस गड्ढे में पानी बहुत कम था किन्तु दोनों के हृदय में प्रेम अत्यधिक था; प्यास से आहत होते हुए भी दोनों एक दूसरे से 'तू पी—तू पी' करते रहे और इसी में दोनों ने प्राण छोड़ दिये।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'बहुत होता है, जहाँपनाह !' बीरबल ने बादशाह का अधूरा वाक्य पूरा किया; बादशाह निमिष भर बीरबल को एक टक देखते रहने के बाद बोला—'बीरबल, प्रेम का मतलब क्या है ?'

'रामायण, हुज़ूर...' बीरबल ने बाअदब जवाब दिया—'माता का प्रेम, पिता का प्रेम, भाई-बहन, पति-पत्नी, दास, मित्र सबों के प्रेम का ऊँचे से ऊँचा उदाहरण केवल रामायण में ही प्राप्त होता है—रामायण ही 'प्रेम-धर्म' का दूसरा नाम है !'

'हम उसे सुनेंगे !' कुछेक क्षण मौन रहने के बाद बादशाह ने गंभीर और निश्चयात्मक स्वर में कहा।

'तो कल ही मैं पंडित देवी मिश्र को आप की आज्ञा.......'

'आज ही क्यों नहीं बीरबल ?' बीच में बात काट कर बादशाह ने पूछा !'

'जो आज्ञा !' बीरबल ने कुछ सोच कर उत्तर दिया।

'आप चुप क्यों हैं शेखजी ?' शेख फ़ैज़ी को देख कर बादशाह ने पूछा—'आप ने भी तो पढ़ी होगी !

'सोने पर रंग चढ़ाना फ़िज़ूल है आलीजाह; कविराज ने ठीक ही कहा; रामायण ही 'प्रेमधर्म' का दूसरा नाम है !'

साँझ हो रही थी; नमाज़ के वक्त का खयाल आते ही धीरे धीरे बादशाह के सभी साथी चले गये।

बीरबल वहाँ से सीधा पंडित देवी मिश्र के पास गया और उन्हें बादशाह की इच्छा से अवगत करा दिया।—और उसी रात को बादशाह शाही महल के खास झरोखे पर बैठकर गंभीरतापूर्वक रामायण सुनने लगा।

अधिकतर रात का समय बादशाह, विविध पुस्तकों के अध्ययन में ही व्यतीत करता था। आहार और निद्रा दोनों की उसे कम आवश्यकता होती थी। शनैः शनैः उसकी राज्यपिपासा की तरह ज्ञानपिपासा भी बढ़ने लगी। वह प्रतिदिन नियमपूर्वक शाहनामा,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हफीज, सूकसीमी और दूसरे फारसी शायरों के ग्रन्थों में उद्धृत उपदेश सुनता था फिर भी उसकी ज्ञानपिपासा की तृप्ति नहीं होती थी। अरबी और तुर्क भाषा के प्रसिद्ध ग्रंथों का फारसी में अनुवाद करवा कर उसने अपने पुस्तक भंडार को समृद्ध बनाया था; अकबर की यही ज्ञानपिपासा, उस समय के सर्वश्रेष्ठ विद्वानों, कवियों, चित्रकारों और शिल्पियों को उसके आसपास नक्षत्रमाला की तरह एकत्रित करने में सफल हुई थी। कुछ ही दिन पूर्व बादशाह ने महान् चित्रकार अब्दुल सैयद और उसके दुष्यन्त से 'शाहनामा' ग्रंथ की एक चित्रमय फारसी नकल तैयार कराई थी, जिसे उसने काश्मीर-निवासी मुहम्मद हुसैन 'ज़रीक कलम' द्वारा लिखवाकर पुस्तकालय में रखा था। अकबर सब कुछ देखना चाहता था, जितना देखने की उसमें सामर्थ्य थी; सब कुछ जानना चाहता था; जितनी जानने की उसकी शक्ति थी!—जोधाबाई की अनन्य देव-भक्ति और टोडर-मल के कट्टर कर्मकांड ने उसके हृदय में हिन्दू-शास्त्रों के आंतरिक मर्म को जानने की उत्कण्ठा जाग्रत की थी जिसे बीरबल के सहवास ने और उत्सुक बना दिया था। बादशाह की एक खास आदत यह भी थी कि एक बार हाथ में लेने पर उसे पूरा किये बग़ैर उसे चैन नहीं होता था और काम पूरा होते ही वह अपने प्रिय झरोखे में आ बैठता था। आज भी झरोखे के भीतर की ओर कुछ नीचे आसन पर आ कर के बैठ गया।...

...बीरबल जैसे बहुत कम अपवादों को छोड़कर किसी भी व्यक्ति को शाही जनान खाने में प्रवेश करने का हुक्म नहीं था, इसलिए राव को सुनने के लिए विशेष प्रबन्ध किया जाता था; आज भी कथा सुनाने वाले पंडित देवी मिश्र के लिए भी वैसा ही प्रबन्ध किया गया था। शाही महल के बाहरवाले बरामदे में एक डोली रखी हुई थी; देवी मिश्र उसमें आ बैठे और वह डोली खींच ली गई। तब अकबर के प्रसिद्ध झरोखे से कुछ ही दूर लटकती हुई डोली में उसके चारों कोनों में लगी हुई मशालों के जगमग प्रकाश में पंडित

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

देवी मिश्र ने रामायण के ग्रंथ का अनावरण किया। उन्हीं दिनों, अकबर की ही राज्य-सीमा के किसी अनजान कोने में गोस्वामी तुलसीदासजी मौन रूप से अपने उसी महान्-ग्रंथ की लेखन-साधना कर रहे थे, इसलिए पंडित देवी मिश्र के पास आदिकवि वाल्मीकि की रामायण थी। ✗

पंडित ने ग्रंथ का पाठ शुरू किया और बादशाह लीन होकर सुनने का प्रयास करने लगा। महल के ऊपर वाले झरोखे में चिक की ओट में जोधाबाई भी बैठी थी और उसी के दूसरे हिस्से में छोटी बेगम, अनिच्छा होते हुए भी कुतूहल से यह रामकथा सुनते बैठी थी।.... वहाँ से कुछ ही दूर यूसुफ़ भी बैठा ओंठ काट रहा था, अभी भी उसके मस्तिष्क में नासीरखाँ के शब्द गूँज रहे थे—'इस शैतान बीरबल से सम्हल कर रहना!...' कुछ देर तो वह ज़ब्त करके बैठा रहा किन्तु मस्तिष्क के निरन्तर आघात को सहन करनेकी अधिक क्षमता उसमें न रही और वह उठकर चला गया!...

कथा में एक स्थान पर युवराज राम के असीम पितृ-प्रेम का उल्लेख आया और बादशाह पंडित देवी मिश्र द्वारा कही जाने वाली टीका को ध्यान से सुनने लगा और बादशाह की मानसिक स्थिति, उस स्थान विशेष पर, बीरबल से छुपी न रही और बादशाह की गुप्त आंतरिक विभेदों पर भी प्रकाश पड़ने की बीरबल ने कल्पना की।

अध्याय पूरा होने पर देवी मिश्र ने आशीर्वचन कहे किन्तु उस ओर ध्यान न रहा। उसकी सारी विचारधारा पंडित के कहे हुए एक ही वाक्य पर केन्द्रित हो रही थी; उसी उद्विग्नता में वह आसन पर से उठ खड़ा हुआ और चलते-चलते कुछ सोच कर रुक गया। पंडित देवी मिश्र दक्षिणा की आशा में पालकी के भीतर अधर में लटका हुआ था। बादशाह ने कुछ देर उसी तरह सोचते रहने के बाद गंभीरतापूर्वक बीरबल से पूछा—'कविराज, क्या यह सच है कि बाप से बेटा सवाया होता है?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'महाबली' बादशाह की मानसिक गहराई की थाह पाते हुए बीरबल ऊपरी अदब को क़ायम रखते हुए बोला—' एक कहावत है—जैसा बाप वैसा बेटा किन्तु, राम ने तो बाप से भी अधिक प्रगति की थी—फिर भी राजधर्म को निभाने में बहुत से कटु और विकट अनुभव होते रहते हैं; इसीलिए भगवान् कौटिल्य ने कहा है...

'क्या कहा है ?' उत्सुक होकर बादशाह ने बीच ही में पूछ लिया।

यही कि राजा के लिए, दुश्मनों को साम, दाम, भेद और दण्ड के द्वारा वश में करना सीखना और अपने युवराज को सिखाना आवश्यक है। इन नीतियों के अभाव में राज्य नहीं चल सकता !' बादशाह उसी उत्सुकता से सुन रहा था; बीरबल ने उत्साहित होकर कहा—'किन्तु महाबली, आपने एक बात सोची ?...साम, दाम, भेद और दंड में आचार्यों ने दण्ड को ही आखिरी रक्खा है !'

'इसकी वजह ?' बादशाह ने जानबूझ कर पूछा।

'जहाँपनाह, पहली तीन नीतियों के अवलम्बन से शत्रु को हराते भी उनकी इज़्ज़त रक्खी जा सकती है और साथ ही हमारी विजय भी चिरस्थायी होती है; दूसरा सब से बड़ा लाभ, सेना की प्राण हानि होने से बच जाती है।'

बीरबल की बातों ने बादशाह को स्तब्ध कर दिया; कनखियों से बीरबल की ओर देख कर उसके पास आकर बोला—'कविराज, परसों ही हुसैन कुली ख़ाँ मुलतान की फ़तह के लिए कूच करेंगे, तुम भी उनके साथ चले जाना !'

अकबर में यही एक विशिष्टता थी; वह युद्धजीवी था और उस का साहस भी सैनिकों की ही तरह तत्क्षण निर्णय पर आ जाने का अभ्यासी था; निर्णय के बाद किसी बात पर अमल करने में उसे समय नहीं लगता था; उसका यही स्वभाव अनेक युद्धों में सफलता का कारण था। उसके सभी कर्मचारी, बादशाह के स्वभावानुसार युद्धक्षेत्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में और राजक्षेत्र में उसके तत्काल निर्णय को जानते थे। उन्हें मालूम था कि एक बार अकबर के निश्चय के विरुद्ध व्यवहार करने का एक ही विचार था—प्राण-दंड !...इस समय बादशाह का यह अप्रत्याशित हुक्म सुन कर बीरबल स्तब्ध हो कर भी विचलित न हुआ, शांतिपूर्वक उत्तर दियाः—

'लेकिन जहाँपनाह, मैं तो तलवार पकड़ना भी नहीं जानता ?'

'फिक्र नहीं, तलवार का काम हुसैन कुली खाँ के जुम्मे रहेगा, तुम्हें तो उन्हें साम, दाम और भेद को पहचान कर राय देनी होगी; तुम्हारे शास्त्रों में आखिरी उपाय दंड बताया गया है, वक्त आने पर उसमें भी संकोच न करना; तुम्हें तलवार सिखाने में हुसैन खाँ को वक्त नहीं लगेगा; तुम्हारे लिए वह भी कठिन नहीं है !'

'जो आज्ञा !' बीरबल ने अधिक कुछ न कह कर, अकबर के हुक्म को बाअदब मंज़ूर कर लिया क्योंकि बादशाह के स्वभाव को वह बखूबी जानता था।

'खुदा तुम्हें क़ामयाब करे !' बादशाह ने बीरबल की ओर दुआ की ! बीरबल आज्ञा लेकर बाहर जा ही रहा था कि अचानक बादशाह ने उसका हाथ पकड़ कर धीमे स्वर में पूछाः—कवि, क्या यह बात सच है, जैसे बाप वैसा ही बेटा ?'

इस प्रश्न ने बीरबल को किंकर्तव्य विमूढ़ कर दिया; कुछ क्षणों तक वह उसी तरह बादशाह को देखता रहा—अकबर की ज्योतिर्मयी आँखों के पीछे कोई अकथनीय कथा उल्लसित हो रही थी ! इस क्षण-वर्ती दृष्टि के आदान-प्रदान में अकबर ने बीरबल और बीरबल ने अकबर की अनुभूतियोंको पहचान लिया। बीरबल ने दृढ़ता पूर्वक कहा, 'हुज़ूर कम से कम राजवंश में तो यह कहावत सच्ची ही होती है ! चग़ताई वंश को ही देख लीजिये। दादा बाबर से अधिक प्रगति बाबा हुमायूँ ने की और उनसे भी ज्यादा उन्नति उनके बेटे अकबर ने की। भविष्य में भी इसी तरह होता रहेगा...जरूर होगा जहाँपनाह ! हज़ारों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अनुभवों से बनी हुई और सैकड़ों वर्षों से प्रचलित कहावत कभी झूठ नहीं हो सकती हुज़ूर !' और अधिक सोचने का अवसर न देकर बीरबल अदब कर के चला गया। पंडित देवी मिश्र अब तक उसी डोली में बैठे, दक्षिण की आशा में त्रिशंकु की तरह लटक रहे थे ! यकायक ध्यान आते ही अकबर झरोखे में आया और वहाँ सोने के थाल में से रुपयों की मुट्ठियाँ भर भर कर पंडित देवी मिश्र को देने लगा, और पंडित अचानक बादशाह के इस उत्साह का कारण न जानते हुए भी शाही इनाम को सत्कारित करता रहा !

(६)

आनन्द और आवेश में पंडित रमानाथ का सारा शरीर काँप रहा था और उसके सामने बैठा हुआ पंडित देवी मिश्र, उनसे भी अधिक आवेश में आ कर अपनी वाक्धारा को तीव्रतम वेग से प्रवाहित कर रहा था ! किन्तु पास ही के कक्ष में बैठी हुई उमा के उपेक्षाभाव से मालूम होता था जैसे उसे उन दोनों वृद्धों की केवल व्यावहारिक बातों में ज़रा भी रस नहीं आ रहा था।.......अचानक आश्चर्य, आनन्द और आवेश की मिश्रित अनुभूति को जैसे सह नहीं सकते, इस तरह पंडित रमानाथ चौकी पर से उठ खड़े हुये और पंडित देवी मिश्र ने भी मानो श्रोता की भावनाओं की तीव्रता को दूर रखना उचित न समझ पण्डित रमानाथ का ही अनुसरण किया; खड़े खड़े भी पण्डित देवी मिश्र की वाक्धारा पूर्ववत् जारी रही—'...यहाँ तक पण्डितजी कि वहाँ उसका असली नाम भी कोई नहीं जानता; वहाँ पहुँचने के दूसरे ही दिन से वह दरबार में कविराज बीरबल के तौर पर पहचाना जाता है...सचमुच अद्भुत व्यक्ति निकला पण्डितजी ! ऐसा कोई विषय नहीं, जिसे बीरबल न जानता हो, और ऐसा कोई सवाल नहीं जिसका जवाब बीरबल के पास न हो ! सारा दरबार उसके चुटकलों और हाज़िर जवाबी पर वार गया है ! कितनी विशाल बुद्धि, कितनी समझ-दारी ! वाह !!...सच कहता हूँ पण्डितजी, उसका गम्भीर व्यक्तित्व,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

संस्कृत नाटकों के चतुर विदूषकों से तिलभर भी कम नहीं। तिस पर तारीफ़ यह कि अपने स्वाभिमान और गम्भीरता पर इन बातों से ज़रा भी आँच नहीं आने देता!...फिर अगर शाहंशाह उस पर मुग्ध ही हो गये तो इसमें आश्चर्य किस बात का? अब बीरबल बादशाह का सेवक नहीं, मित्र बन गया है; ऐसा मित्र, जिसके बिना बादशाह को क्षण भर भी चैन नहीं...क्या कहूँ? बीरबल ने कहा नहीं कि बादशाह उस बात को मान ही लेता है! बस बीरबल के ज़रा से कहने पर ही जब बादशाह रामायण भी सुनने लगे तो अब क्या रह गया पण्डित-जी!...अब और क्या कहूँ?'

'किंतु पण्डितजी, हमारी वह ख़ास बात तो बातों ही में रह गई...हाँ, फिर उसका क्या हुआ?' पण्डित रमानाथ को आख़िरकार धीरज छोड़ना ही पड़ा! 'अरे; वह तो मैं भूल ही गया! पण्डितजी, बीरबल के बारे में बोलकर सभी जब भूल बैठते हैं तो फिर उसका मित्र...नहीं नहीं; अब तो सम्बन्धी होकर मैं ही क्यों न भूल जाऊँ?...' और पण्डित देवी मिश्र को अचानक कहीं भूली हुई हँसी भी याद आ गई और वे खिलखिला कर हँस पड़े; साथ ही साथ पण्डित रमानाथ को भी अपने पोपले मुँह से मुस्कराना पड़ा।

फिर शान्ति से बैठते हुए पं. देवी मिश्र ने रमानाथ की उत्सुकता और अधिक बढ़ाते हुए कहा—'क्या कहूँ पण्डितजी, पहले तो आपका नाम लेते ही उसने साफ़ इन्कार कर दिया लेकिन मैं भी उसको वैसे ही छोड़ देने वाला नहीं था, लाख बीरबल हुए तो क्या हुआ? मैंने भी आपके कुल, विद्या, धन और पाण्डित्य का और उमा की सुयोग्यता का ऐसा पाठ पढ़ाया कि फिर बीरबल को छूटकने के लिए तिल भर भी जगह नहीं मिली। मैंने उन्हें यह भी कहा कि उमा मेरी सगी भानजी है; उसके बारे में मैं ज़िम्मेदार हूँ...'

'हाँ, फिर...फिर...वे..,' रहा सहा धीरज खोकर पं. रामनाथ ने देवी मिश्र के पास बैठते हुए पूछा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'फिर ?'...देवी मिश्र को पंडित रमानाथ का आवेश कम होने देना स्वीकार नहीं था; उसने पुनः खड़े होकर कहा—'फिर रह ही क्या गया पंडितजी ! मैंने कल ही शुभ दिन, शुभ मास और शुभ मुहूर्त देखकर उमा के नाम का श्रीफल, आपकी ओर से उसके हाथ में रखवा ही दिया !... आज सवेरे ही वह युद्ध के लिए मुलतान को प्रस्थान कर चुका है; उसके लौटते ही उमा के हाथ पीले कर दिये जाएँगे !...'

'वाह, धन्य !...' रमानाथ का खोया हुआ आवेश फिर लौट आया; खड़े होते हुए उसने कहा—'धन्य, उमा के मामा जो ठहरे, कहने जैसी कोई बात ही नहीं छोड़ी ! बच्ची के सौभाग्य और क्या ? हाँ, जामाता तो आपके कहे अनुसार .....'

'अगर मेरे शब्दों में विश्वास न हो तो, सूर्य चन्द्र पर भी विश्वास करना छोड़ देना...जल, पवन, आत्मा सबों को झुठला देना...'

'इत्यलम्, देवी इत्यलम् ! शुभं भवतु, सुखीनो भवतु...' उसी आवेश को पंडित रमानाथ आशीर्वचन में व्यक्त कर उठे !...

उमा से अब और अधिक सहा न गया; महेश को सर्वस्व समर्पित करके हृदय, उसके शारीरिक विनिमय की विपरीत चर्चा सुनकर अतिशय व्यग्र हो उठा ! उमा तेज़ी से बगीचे की ओर चली गई !...

...सोचती थी, यद्यपि उस निकटतम की निर्धनता उसके मान-गौरव को आघात पहुँचाती है किंतु, इससे अधिक उस 'किसी' के विषय में क्या सोचा जाय, जिसको भावनाओं भरी एक ही दृष्टि में अपना तनमन समर्पित करके उसकी तुलना में सारे संसार को तृणवत् बना रहने दिया है।... आज उसे गये महीनों बीत चुके हैं, किंतु इस समय की दूरी से उसका क्या वास्ता ? वह तो किसी भी कारण को बहाना बनाकर लखिया चाची के पास महेश का स्थान और आगमन ज्ञात करने जाती थी, किन्तु वहाँ जाने पर ज्ञात होता कि अब तो जैसे बिलकुल ही अजनबी बन गया है—अपनी, नहीं, अपने स्नेह की, सुध-बुध न लेने की उपेक्षा से उसे वेदना और निराशा होती। अभी, कुछ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ही क्षण पहले पिता और मामा के निश्चय को जानकर उसकी व्यग्रता और भी बढ़ गई... यही सब विचार करती हुई वह उसी मेंहदी के पौधे के पास आ पहुँची, जहाँ महीनों पहले प्रतिदिन, वह उसी मेंहदी की-सी अरुणिमा का अपने हृदय, आँखों और देख न सकने पर भी अनजाने में मुखड़े पर भी अनुभव किया था।...और स्मृति जैसे साक्षात् होने को हुई, हृदय की सुकुमार भावनाओं की मूर्तिमती आर्द्रता जैसे कानों में भी सुधा-सिंचन करने लगी—कोई चिर-परिचित स्वर संगीत के वाहन में दूर से निकट से निकटतर आने लगा—अति-निकट। अब अनुमान का अवकाश न था; हृदय की तीव्रता और आँखों की ज्योति के साथ उसके पैर भी मानो उस धुन पर ताल देते हुए आगे आगे बढ़ने लगे, निकट पहुँच कर उसे प्रत्यक्ष करने के लिए—उसकी कल्पना को यथार्थता से डर हो रहा था, कोई और...? दृष्टि धरती पर थी, यथार्थ पर! किन्तु जब चरण, किसी की आहट पाकर अचानक रुक गये तो दृष्टि ऊपर को उठाई; देखा—कल्पना और स्मृति का एकमात्र आधार सचमुच प्रत्यक्ष होकर उसके सामने खड़ा था!.... 'तुम?...तुम आ गये? कब? कैसे?' पैरों को अब संगीत पर ताल देने का धीरज न था; दौड़ कर उमा झूमती-सी पूछ बैठी।

'अभी ही तो! रानी, तुम इतनी उदास क्यों हो?' विनोद को छिपाने का प्रयत्न करते हुए महेश ने उमा के प्रश्न को पुन: लौटा दिया; किंतु उमा के पास उत्तर न था, वह खोई-सी खड़ी थी। सहसा महेश ने उमा को अपने निकट खींचकर धीरे से कान में कहा—'रानी सावधान! दरिद्री के पास अब लक्ष्मी आ पहुँची है!'

किंतु महेश के स्पर्श से रोमांचित होकर भी उमा के मुख पर प्रसन्नता का नाम-निशान भी दिखाई न दिया! महेश को आशा ही नहीं, विश्वास था कि उसके ख़ानदान की प्रसिद्ध निर्धनता दूर होने की बात सुनकर उमा हर्षाश्रु में रँजित होकर उसके गले से लिपट जाएगी, मीठे शब्दों से रूठ कर, कड़ुए शब्दों से मनुहार करेगी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

किंतु वैसा कुछ न हुआ। महेश का हाथ छोड़कर बहुत ही गिरे हुए स्वर में उसने कहा—'हमारा विवाह नहीं हो सकता !'

'हैं? क्यों कल ही तो मैंने....' किंतु आवेश में निकलते हुए सत्य को उसने गले में ही रोक लिया; देवी मिश्र से की हुई बात का संकेत् देना इस समय उसने उचित न समझा। किंतु उमा ने उस की लाज रखते हुए, बीच ही में कह दिया—'मेरा विवाह होगा, बीरबल के साथ !'

'बीरबल ?' महेश अपना नाम सुनकर यकायक चौंक उठा; यह घटना मानो उसके लिए अप्रत्याशित थी; असह्य वेदना को मुँह पर लाते हुए बैठ गया जैसे मस्तिष्क शून्य हो गया था। फिर उठकर उमा के पास जाकर धीमे-स्वर में पूछा—'कौन है बीरबल ?'

'अकबर बादशाह का हुजूरिया !' दाँतों से ओंठ काटकर उमा ने कहा; महेश ने जैसे लहू का घूँट पिया !

'ठीक है, जैसी भगवान् की इच्छा! यद्भावी तद्भवतु—' निःश्वास डालकर महेश ने उद्गार व्यक्त किया—जैसे इस निराशा के आगमन के साथ उसका सर्वस्व चला गया हो। उमा से, महेश की यह कायरता सही न गई; अतिशय क्रोध में वह बोली—'लाज नहीं आती तुम्हें, यह कहते ? तुम्हारी जगह कोई दूसरा होता तो जहर पी लिया होता !'

'किंतु, रानी, मेरी समझ में पुरखों की इज़्जत ज़हर से ज्यादा कीमती है !' जरा भी उद्विग्नता न दिखाते हुए महेश ने कहा; घृणा से सिहरकर उमाने मुँह दूसरी ओर फेर लिया; घृणा जैसे उसकी वाणी में मूर्तिमती होकर बोल रही थी—'निर्लज कहीं के !'

महेश ने उमा के और निकट आकर मृदु स्वर में पूछा:—'उमा, तूने मुझसे प्रेम किया था; था न ?'

बी. ६

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लज्जा और घृणा से अभिभूत होकर उमा ने दोनों हाथों में अपना मुँह छुपा लिया; उसके दोनों हाथ काँप रहे थे।

'बहुत प्रेम का ऐसा ही परिणाम होता है—अकारण रोना।' अति गंभीरता पूर्वक बोलते हुए महेश ने कहा—'शाकुन्तल पढ़कर हम दोनों जान चुके हैं कि प्रेम का परिणाम क्या और कैसा होता है उमा, तू विदुषी है। क्या कर्त्तव्य के आगे प्रेम को कुचल डालना तेरे लिए संभव नहीं ? कुचल दे प्रेम को फिर चाहे वह तड़पता ही क्यों न रहे !'

'ओह ! मुँह से स्वर निकालने की इच्छा न होते हुए भी उमा के हृदय से आह निकल ही गई; बोली, 'तो आप क्या करेंगे ?'

'मैं ? मैं विवाह करूँगा तो तुझसे ही, नहीं तो आजन्म अविवाहित रहूँगा ! तू खुश रहना !' सर्वस्व का बलिदान कर दिया हो इस भाव से महेश ने वहाँ और न ठहर सकने का अभिनय किया और चला गया।

उमा जोरों से सिसकी बाँध कर रोने लगी, किंतु इस निर्बलता को कहीं कोई देख न ले इस डर से उसने बलात् मुँह को हाथों से बन्द कर दिया। उसी समय घर की ओर से उसके मामा की आवाज़ सुनाई दी—'ओ हो, कविराज बीरबल, तुम यहाँ ?'

उमा तो जैसे सब कुछ भूल गई, तेजी से दौड़कर वह एक पौधे के पीछे छुप गई यह देखने के लिए कि यह बीरबल कौन है ? महेश ने अपने हाथों देवी मिश्र का मुँह बन्द कर दिया था। निमिष भर में उमा सब कुछ समझ गई।

महेश ने उस गुलाब के पौधे की ओर कनखइयों से देखा, जिसके पीछे छुपकर उमा कनखइयों से देख रही थी; फिर देवी मिश्र को उसी गुलाब के पास खींच ले जाकर घबराहट से कानाफूसी की आवाज़ में कहा— 'पंडितजी, जरा धीरे बोलिये; मैं यहाँ गुप्त रूप से आया हूँ !'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'वाह, कविराज ! गुप्त रूप से आकर अपने ससुरे के घर पर ही रास्ता भूल बैठे ? यही तो उनका घर है ! चलो, उमा को दिखाता हूँ; देखोगे तो देखते ही रह जाओगे—कन्या नहीं, देवकन्या है !'

'सो तो ठीक है; और आपकी बात पर मुझे पूरा विश्वास है। मैं यहाँ जरा शाही काम से छुपे तौर पर आया हूँ। एक ही पहर बाद मुझे यहाँ से चले जाना होगा; लौटते वक्त मिल लूँगा और यों भी विवाह तो निश्चित है ही।' बनावटी हँसी हँसकर महेश पंडित रमानाथ की अट्टालिका की ओर देखने लगा। उसका हृदय जोरों से धड़क रहा था।

'अब ये अभिनय रहने दीजिये कवि ! कन्या को ही देखना है न ? तो चलो इधर, इस तरह हवेली की ऊँचाई देखने पर से कन्याएँ नहीं दिखाई देतीं...'

'नहीं, नहीं पंडितजी, यह बात नहीं ! कन्या को क्या देखना है जब आपने....' किंतु वाक्य पूरा करने के पहले ही एकाएक महेश के मुँह से जोरों की चीख निकल पड़ी !

'क्या हुआ ?' घबराकर देवी मिश्र बोल उठा।

'ओह, पैर में काँटा चुभ गया है; इसी गुलाब का होगा !' कहकर महेश काँटा निकालने के लिए नीचे झुका।

महेश के पैर में जोरों से काँटा चुभाकर उमा, गुलाब के पीछे निकलकर पास ही के दूसरे पेड़ के पास छुप गई थी; महेश उसे न देख सका। काँटा निकालकर उसने हँसकर कहा—पंडितजी, कवि हो, गुलाब लेने आये हो तो काँटे ज़रूर चुभेंगे—जरा सम्हलना !

देवी मिश्र हवेली की ओर जाने लगा और महेश घबराहट में इधर उधर देखकर कि कहीं उमा ने न सुन लिया हो, सीधा घर की तरफ चल पड़ा !

आज पैरों में एक कम्पित उत्साह था और हृदय में उमंग ! गुनगुनाता हुआ चल दिया—'क्यों रे, आज भी पूरब की तरफ से ही आ रहा है न ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चौंककर महेश ने कुछ संकुचित होकर कहा—'हाँ, चाची !....' फिर कुछ देर सोच कर कहा—'चाची, अब ये जेवर वग़ैरह पहन लो और कपड़े-लत्ते भी सँभाल लो। अब ज्यादा समय नहीं है—कल सवेरे ही चाचा को लेकर तुम्हें आगरे के लिए रवाना हो जाना होगा !'

'तेरी लाई हुई पालकी में ही न?'

'हाँ, हाँ, उसी शाही म्याने में बैठकर जाना होगा....' महेश ने चाची की उपहासवृत्ति का उत्तर निश्चय में दिया।

'शाबाश बेटा....' एक कोने में बैठा हुआ चाचा, सहसा चिलम दूर करके चिल्ला उठा !

'मूरखराज !....' आज, जीवन में पहली बार चाची ने चाचा पर रोष प्रकट न करते हुए महेश से कहा—'हमारे वंश के किसी भी युवक ने क्या हाथ में आई हुई कन्या को यों जाने दिया है? सुन रहे हो जी ! अब क्यों नहीं बोलते? जीभ तो मुझसे भी लंबी है !' अंतिम वाक्य पुराणी चाचा को संबोधित करके चाची ने झपटकर महेश की ओर फिर कर कहा—'तू मुझे क्या समझता है? कल का दिन निकलने दे, एक बार उस रमानाथ पंडित के मुँह में मुहरें भरूँगी तब ही पालकी पर बैठूँगी—समझा ?'

'देखा, म्याने में बैठनेवाली का जोश !' चाचा फिर चिल्ला उठा और चौंककर चाची ने शेष का सारा अभिनय भरकर लाल आँखों से चाचा की ओर देखा। महेश ने वहाँ खड़े रहना ठीक न समझा; वह अपने कक्ष की ओर जाने लगा।

आज महेश को अपना बचपन याद आ रहा था—आज अपनी बुद्धिमत्ता, समझदारी और सुधबुध खोकर उसका हृदय आनंद से मत्त हो रहा था–शायद अपने कक्ष में एकाकी पाकर वह नाचने भी लगता....किंतु, वहाँ पैर रखते ही वह अचानक रुक गया। पिछले दरवाज़े से आकर उमा वहाँ बैठी हुई थी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'रानो, तू इस समय यहाँ ? क्या बात है ?' उत्साहित होकर महेश बोल उठा; कुछ ही समय पहले उमा के साथ किये जाने वाले अभिनय का उसे जरा भी ध्यान न रहा !

'महेश !' स्वर में अत्यधिक गंभीरता और दुःख भरकर उमा ने बहुत धीरे से कहा—'तुमने सच ही कहा था, बड़े बूढ़ों की प्रतिष्ठा को क़ायम रखना ही हमारा सच्चा धर्म है ! मैंने उन्हें देख लिया !'

'किसे ?' महेश ने चौंककर पूछा।

'मेरे भावी पतिराज को !....' अपनी गम्भीरता को और गहरी बनाकर उमा ने अभिनय ज़ारी रखा—'और उनका नाम बीरबल नहीं, भीरमल है !'

'भीरमल ? कहाँ ? कौन ? असम्भव...बिलकुल असम्भव ! उस विद्याधर की शरारत मालूम होती है !'

'नहीं, मैं उन्हें अभी अभी देखकर आ रही हूँ; वे विद्वान् हैं ! पण्डित हैं !!'

महेश का पुरुष-हृदय ईर्ष्या से उद्वेलित हो चला; अतिशय उत्तेजित होते हुए भी उसने क्रोध को वशीभूत करके, स्वर में व्यंग भर कर पूछा—'तो तुम्हारे 'वे', सुन्दर भी होंगे !'

'हाँ, सो तो है ही !' उमा ने उसी गम्भीरता से कहा।

'धनवान् भी होंगे !' क्रोध और द्वेष की बढ़ती हुई मात्रा को निकाल कर महेश ने पूछा

'जागीरदार हैं !' महेश के भाव को समझ न पा रही हो उस निर्दोषिता से उमा ने नीची दृष्टि कर के कहा।

'तब तो तुझे ज़रूर पसन्द आ गये होंगे !' प्रेम की स्पर्धा में बुद्धि गँवाकर कविराज ने वाक्य में सम्पूर्ण व्यंग भर कर पूछा।

'अगर धन और बुद्धि का ही विचार किया जाय तो कोई भी कन्या उनपर प्राण न्यौछावर कर सकती है !'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'मतलब यह कि तू भी उन पर प्राण न्यौछावर करने के लिए तैयार है, यही न ?' क्रोध, ईर्ष्या और खीझ के उद्वेलन से अवश होकर महेश दाँत पीसते हुए उमा की ओर झपटा किंतु उमा पर कुछ भी असर न हुआ; वह उसी तरह आँखें नीची करके शांतभाव से खड़ी रही; महेश यकायक कुछ न कर सका—जैसे सारा क्रोध अपने पर ही उतारकर, पैर पटक कर बोला—कमबख़्त ने मेरा नाम भी चुरा लिया है !'

'तुम्हारा नाम ? क्या कह रहे हो तुम ? उनका नाम भीरमल है, भीरमल !'

'पर मेरा शाही नाम बीरबल है !' महेश ने गौरव अनुभव करते हुए कहा।

'सच !'

'हाँ, हाँ ! महेश चीख उठा; कुछ देर सोचकर बोला—'रानी, तुझे पूरा विश्वास है कि उनका नाम बीरबल नहीं, भीरमल है ?'

'उनका नाम तो भीरमल है, लेकिन तुम्हारा नाम महेश है, उसका क्या ?'

'रानी, अब उस बात से कोई लाभ नहीं, मुझे बस एक ही बात जाननी है—तेरी अपनी इच्छा क्या है ? क्या तू उस गधे से विवाह करना चाहेगी ?'

'राजा, तुम उन्हें गधा कैसे कह सकते हो ?' उनके 'उस' नाम पर मानो अधिकार जमाकर उमा ने कहा।

'क्योंकि वह जागीरदार है, जागीरदार का बेटा है !' महेश पूरी शक्ति से चीख उठा; दूसरे ही क्षण अपनी हीनता न दीखे इसका ध्यान आते ही हाथ मलता हुआ चहलक़दमी करने लगा। हँसी को बड़ी कठिनाई से रोककर उमा धीरे से महेश के पास आ खड़ी हुई और मुँह पर प्रेम के महान् आत्मत्याग और दृढ़ता का भाव दिखाकर बोली—'राजा, तुमने मुझसे प्रेम किया था, सच है न !'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

महेश ने लज्जा और खीझ से सिर झुका लिया; उमा फिर बोली —'अतिशय प्रेम करने का यही परिणाम होता है !'

'अब शकुन्तला की बात रहने दे—मैं जानता हूँ !'

किन्तु उमा का अभिनय जारी रहा—'राजा, इतने बड़े विद्वान् होते हुए भी तुम कर्त्तव्य के सामने प्रेम को नहीं कुचल सकते ?...रौंद डालो उस प्रेम को जो कर्त्तव्य में बाधा उत्पन्न करता है, तड़पने दो उसे ! तुम्हारा कर्त्तव्य है कि—

'कि प्रसन्नता से मुझे अपनाने वाली कुमारी को पराये पुरुष की पत्नी हो जाने दूँ, यही न ? हाँ, हाँ, कह दे न अपने ही मुँह से ! आज मैं तुझे पहचान गया हूँ—स्त्री, स्त्री ही रहेगी !...बड़ों के बचन कभी मिथ्या नहीं होते !

'...तू क्यों न कहेगी ?... धनवान् पंडित की पुत्री, भीरमल की भावी पत्नी जो है !....जाओ, सुखी हो !'

क्रोध की निर्दम ज्वाला में दग्ध महेश अधिक समय उमा के सामने खड़ा न रह सका। चाची के पास पहुँचने पर भी आँखों की ज्वाला शान्त न हो सकी; चाची ने हृदय की वेदना को पहचान कर पूछा—'क्या हुआ बेटा ?'

'चाची !....' महेश के क्रोध का उफान, चाची की सान्त्वना से और अधिक उभड़ आया;—'तुम कहो तो मैं पहाड़ों को निगल जाऊँ, समुद्र को पी जाऊँ, किन्तु एक बात मैं सहन नहीं कर सकता....'

'उमा का बाप तेरे पास आया था ?' चाची ने अपनी हार्दिक इच्छा को जैसे विश्वास में बदल कर पूछा। महेश के लौटने के बाद ही उसे रमानाथ को सैकड़ों खरी-खोटी सुनाने का उत्साह उमड़ रहा था। पूरे विश्वास से चाची ने भौंहें चढ़ाकर कहा—'तू अब चिन्ता न कर ! मैं सब कुछ समझ गई हूँ। देखती हूँ, मेरे यहाँ रहते, गाँव की कन्या को कौन आकर ले जा सकता है ! उमा आज से मेरी बहू है, समझा ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'चाची, तुम पर मुझे भगवान् से भी अधिक भरोसा है ।' महेश ने अतीव नम्रता से चाची के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त की, क्योंकि वह चाची को अच्छी तरह समझता था, किन्तु अचानक कुछ सोचकर डरते हुए बोला—'चाची' पर, अब तो बात ही बदल गई है; उमा ने उसे पसन्द कर लिया है.!'

'तू चुप रह।' चाची ने कड़क कर महेश का मुँह बन्द कर दिया—'स्त्री की भी कहीं पसन्द होती है ? तुझे तो पसन्द है न ? बस, चला जा !'

'चला जा; सावधान ! रणचंडी ने आज तलवार हाथ में ली है; विजयी हो !...' गाँजे की धुन में चाचा जोर जोर से गुनगुना उठे !

चाचा के इस उद्गार से चाची की हुंकार कुटिल भृकुटियों में बदल गई; चाचा और चाची के बीच किसी नए विवाद के लक्षण देखकर महेश अपने कक्ष में चला आया। उसका क्रोध, चाची की सान्त्वना के पश्चात् भी हृदय के किसी कोने में पराजित होकर छुपा बैठा था—एक कोने में पड़ी हुई पुस्तक को ज़ोरों से फेंक कर उसने अपना क्रोध निकाला—'बीरमल-भीरमल ! बहुत सुन्दर होगा ?—पत्थर !...' कुछ देर सोच कर उसने पहनने के लिए अँगरखा हाथ में लिया किंतु जाने क्या सोच कर उसे भी एक ओर फेंक कर बड़बड़ाया—'और पंडित भी है, विद्वान् भी ! छिः !'...वह कुछ सोचता हुआ लेट गया।

कक्ष के बाहर, वातायन के पास छुप कर खड़ी हुई उमा, बड़ी कठिनाई से हँसी रोक कर महेश के ये विचित्र उद्गार सुन रही थी; दबे पैरों वहँ बाहर चली आई और जो गीत कुछ समय पहले बगीचे में महेश ने गाया था उसी की कुछ कड़ियाँ गुनगुनाती हुई घर की ओर चली गई।

—❀—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(७)

उस दिन अकबर बादशाह के दीवाने-आम में बैठने के लिए तिल भर भी स्थान न बच पाया था ! तख़्त के सम्मुख नीचे की ओर हुसैन कुलीख़ाँ और कविराज बीरबल बा-अदब खड़े थे। तख़्त की बाँई ओर वज़ीरे सल्तनत टोडरमल, ऊँची आवाज़ में बादशाही फ़रमान पढ़ कर सुना रहे थे—

'......इसलिए मुल्क मुल्तान को इतनी जल्द जीत लेने की ख़ुशी में हुसैन क़ुलीख़ाँ को "ख़ानेजहाँ" और कविराज बीरबल को "मुसाहिबे दानिशमन्द" (बुद्धिमान अमात्य) की उपाधियाँ प्रदान की जाती हैं !'

फ़रमान के पढ़े जाने के बाद उसी समय दोनों को ज़रीन पोशाकों से भरे हुए थाल और तलवारें भेंट में दी गईं।

बादशाह की अनुमोदना में सारा दरबार 'वाह वाह' की ध्वनि से गूँज उठा, केवल यूसुफ़ और उसके नासीर आदि साथियों के आडम्बरमय व्यवहार को छोड़ कर। बादशाह की आज्ञा पाते ही हुसैन क़ुलीख़ाँ ने कृतज्ञतापूर्वक कहा—'आलीजाह, मुल्तान को इतना जल्द पराजित करने का ज़्यादा से ज़्यादा श्रेय कविराज बीरबल को है। इनकी बुद्धिमानी और कूटनीतिज्ञता ने ही मुलतान के मिर्ज़ा को इतना जल्द सुलह करने पर विवश किया, जिससे उसका सारा राज्य नष्ट-भ्रष्ट होने से बच गया और हमारी फ़ौज को भी अधिक नुक़सान नहीं उठाना पड़ा। आलीज़ाह, मुलतान के शाहज़ादे और राजदूत द्वारा भेंट की हुई इस सौग़ात को स्वीकार करें !'

'मुलतान की प्रजा बहादुर है और बादशाह बहादुरों का सच्चा दोस्त है। उनकी दी हुई सौग़ात के बदले में शाही सौग़ातें बा-इज़्ज़त मुलतान की तरफ़ रवाना की जायँ !'

'हुक्म देने के बाद बादशाह ने बीरबल की ओर देखा जो बा-अदब खड़ा था। कुछ सोच कर बादशाह ने टोडरमल और फ़ैज़ी को

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ओर कनखइयों से देखा और बीरबल की ओर देख कर धीरे से कहा—'दिमाग़ ···हूँ·······'

'नहीं हुज़ूर साम, दाम और भेद···' अचानक बीरबल ने सिर उठा कर बादशाह की शंका का समाधान किया।

मुस्करा कर अकबर कुछ सोचने लगा; आज उसका कवि एक परीक्षा में उत्तीर्ण हो चुका था। मुल्तान से युद्ध के दरमियान; उसने अपने गुप्तचरों से पहले ही जान लिया था कि कविराज बीरबल कितनी सावधानी से हुसैन क़ुलीख़ाँ के द्वारा अनायास ही युद्ध के दाँव-पेंच सीख रहा था, और उस ज्ञान के पारंगत होने में अब उसे अधिक देर नहीं थी। आज भेंट के रूप में जो तलवार बीरबल को मिली थी, बादशाह जानता था कि शीघ्र ही उस तलवार का सदुपयोग बीरबल के हाथों होगा।

दरबार बरख़ास्त हुआ।

राजमहल के मुख्यमार्ग के एक कोने में ईर्ष्या से दग्ध यूसुफ़ अपना सिर धुन रहा था और उसकी इस ज्वाला को और अधिक प्रज्वलित करने के लिए नासीर पास ही में खड़ा हो कर दाढ़ी पर हाथ फेर-फेर कर सुलग रहा था—'जनाब' आप याने आप! लेकिन, जैसे आज कल दरबार में आप की कोई गिनती ही नहीं··कोई बिसात ही नहीं! ···लेकिन मैं कहे देता हूँ आप से, मुझे इसमें कोई बहुत बड़ा ख़तरा दिखाई देता है, यह ब्राह्मण·······!' यकायक कुछ सोच कर वह रुका और धीमी आवाज़ कर के यूसुफ़ के और समीप पहुँच कर कहा—'यह ब्राह्मण, बादशाह सलामत को भी ब्राह्मण बना देगा!'

'अजी जनाब, क्या रखा है इस बात में? अच्छा, कहाँ हैं वे कविराज! आज उन "मुसाहिबे दानिशमन्द" से हमारी भी दो-दो बातें हो जायँ!'

मियाँ जम्मू वाक्य पूरा करने के पहले ही अपने विचित्र ढंग से खिलखिला उठा!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ख़ुदा ने मियाँ जम्मू के चेहरे की बनावट में शायद अपनी ख़ास करामातें आज़माई थीं। जब जब मियाँ जम्मू हँसते तो उनका चेहरा गंभीर दिखाई देता था और जब वे सचमुच गंभीर हो कर मुँह बन्द कर लेते तो मालूम होता था कि वे रो रहे हैं। उन्हें बीरबल का मज़ाक उड़ाने की ख़्वाहिश हमेशा बनी रहती थी।

यकायक उन्होंने बीरबल को बाहर की ओर जाते देखा; मियाँ नासीर भी बीरबल को देखकर कुछ सोचने लगे; अकबर के दरबार में रह कर दरबारी व्यवहार और आडम्बर करने में वह निपुण था। बीरबल कुछ ही क़दम बढ़ा पाया होगा कि उसे नासीर की आडम्बर मयी आवाज़ सुनाई दी—'मुबारक हो, कविराज मुबारक हो!' बीरबल ने पीछे घूम कर देखा—नासीर जम्मू मियाँ को कोहनी से इशारा कर के पूछ रहा था—'अरे जम्मू मियाँ, रोते क्यों हो?'

'इनकी सूरत ही ऐसी है!' बीरबल ने उसी समय जवाब दिया! मियाँ जम्मू को बीच में बोलने का अवसर भी न मिला; उसका सारा अभिमान चूर चूर हो गया; आहत की तरह उसने बीरबल की ओर देखा। बीरबल ने मियाँजी की हालत पर तरस खाकर मुस्करा कर कहा—'मेरा मतलब है, आप नहीं रोते, आप का चेहरा ही ऐसा है!'

'क्या कहने हैं! बिलकुल ठीक कहा आपने!' जम्मू ने समझ-बूझ कर जवाब दिया; फिर धीरे से पूछा—'कविराज, सुना है आप की बीबी साहबा बहुत ख़ूबसूरत हैं!'

'जी हाँ!' बीरबल ने मुस्करा कर कहा—'मेरा भी ऐसा ही ख़्याल था; लेकिन जब आप की बेग़म साहिबा को देखा, तब विश्वास हो गया कि मेरा ख़्याल बिलकुल ग़लत था!'

सात-आठ मनसबदार जो अभी अभी आ कर इकट्ठे हो गये थे, खिलखिला कर हँस पड़े; यूसुफ़ भी हाथ मलता ज़बरन उस हँसी में सहयोग देने लगा। रतनसिंह नामक राजपूत ने तब अर्थ भरी दृष्टि से बीरबल को देख कर पूछा—'तो क्या आप की शादी हो गई है?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'शादी ?' नासीर बोल उठा—'अरे ख़ुदा की मेहर से पलने में एक लड़का भी झूलता होगा !'

'बस एक ही ?' रतनसिंह ने पूछा ।

मियाँ जम्मू, बीरबल के विनोद से पराजित हो कर, ऐसे ही विनोद की ताक में थे; यकायक बीरबल की ओर देख कर बोले—'देखिए न कविराज, हमारे ये रतनसिंहजी आप ही की उम्र के हैं, फिर भी चार बच्चों के बाप हैं !'

'जी हाँ, आप सबों का क्या कहना...' बिलकुल निर्दोष मुँह बनाकर बीरबल ने कहा—'आप सबों के यहाँ सिपाही हैं, और मैं तो बिलकुल अकेला हूँ, मैं आप लोगों की बराबरी कैसे कर सकता हूँ ?'

इस तीखी चोट से सबों की विनोदवृत्ति चूर चूर हो गई; रतनसिंह ने आँखें तरेर कर पूछा : 'क्या इसे ही कहते हैं, साम, दाम और भेद ?'

'नहीं जी, यह तो है विनोद का वेद !' नासीरखाँ दाँत पीसकर और ओंठ काटकर बुदबुदाया ।

यूसुफ भी, जो अभी तक चुपचाप खड़ा था, श्वास खींचकर बोला—'अभी तक पूरी तरह सीखा नहीं है, ज़रा सीखना पड़ेगा !'

किन्तु यूसुफ़ के इस वाक्य के प्रारम्भ होने के पहले ही बीरबल वहाँ से विदा हो चुका था ।

अपनी हवेली में पैर रखते रखते बीरबल उत्सुक हो उठा था कि सम्भवतः आज उसे अपने चाचा और चाची के दर्शन होंगे । किन्तु, देहली के भीतर पैर रखने तक दोनों में से कोई भी दृष्टिगोचर न हुआ; बल्कि वह दो क़दम ही बढ़ा होगा कि किसी के अनजाने हाथों ने उसके चरण पकड़ लिये !

'हें, हें ! ठहरिये, खड़े होइये—अरे यह क्या ? कहाँ से पधारे हैं आप...? बीरबल ने अतीव आश्चर्य और घबराहट भरे स्वर में उस अनजान व्यक्ति को दोनों हाथ पकड़ कर उठाया ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'मैं केशवदास हूँ !'

'कौन, कवि केशवदास ?' बीरबल के नेत्र आश्चर्य से विस्फारित हो गये !

'कवि केशव ! "प्रवीण-सागर" ग्रन्थ के महान् रचयिता, कवि केशवदास ? कवि, आप मेरी कुटिया में ? और आपको यह क्या सूझा महाकवि ! मेरे पैर छूकर तो आपने मुझे महापाप का भागी बना दिया ! पधारिये, अब इस महापाप का प्रायश्चित करने के लिए आपको कुछ दिन यहीं रहना होगा। धन्य, धन्य ! सचमुच नर्तकी रायप्रवीण को आपने अपनी लेखनी से अमर बना दिया है !'

'कहाँ ?' बीरबल के वाक्-प्रवाह को रोकने के लिए केशवदास ने अति नम्रता पूर्वक प्रतिरोध किया,--'नहीं कविराज, मैं उसे अमर न बना सका; आज वह मरने जा रही है, उसे बचाने ही के लिए तो मैं आपके पास आया हूँ, इधर देखिये मैं उसे आपकी शरण में लाया हूँ !' केशवदास ने बीरबल की पीठ की ओर संकेत् किया।

बीरबल ने देखा, ओरछा नरेश की अति प्रसिद्ध नर्तकी रायप्रवीण उसके सम्मुख नत मस्तक होकर खड़ी थी। आज अकबर के साम्राज्य के एक कोने से दूसरे कोने तक उसके अप्रतिहत सौन्दर्य और ललित नृत्यकला की प्रशंसा के पुल बँध रहे थे। बीरबल रायप्रवीण को अपने प्रांगण में एकटक देखता रह गया। कुछ देर ठहर कर मुस्करा कर बोला—

'पधारिये, ललित कला की सौन्दर्य-मूर्ति, आज अचानक इस ब्राह्मण के घर में ?'

'साम, दाम और भेद की सहायता पाने के लिए !' रायप्रवीण ने मृदु स्वर में बीरबल का अभिवादन किया।

कवि केशव ने बीरबल के समीप आकर तनिक घबराहट से कहा—

'बीरबलजी, आज मैं राजदरबार में ही था। आपने जिस कुशलता से मुलतान के मिर्ज़ा की लाज रख ली, उसी तरह आज ओरछा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नरेश महाराज इन्द्रजीत की लाज भी आप ही के हाथों में है !'

'आप मुझे ज़रा समझाकर बताइये तो ?'

'बीरबलजी, यूसुफ़ खाँ ने, महाराज इन्द्रजीत की तुच्छ भूल को महत्त्व देकर, उदार हृदय बादशाह को बहका दिया है। बादशाह ने महाराज पर एक लाख दंड किया है और रायप्रवीण को सदा के लिए शाही-जनानख़ाने में भेज देने का फ़रमान निकाला है।...और रायप्रवीण के एकमेव प्राणाधार ओरछा नरेश ही हैं !'

'और रायप्रवीण भी ओरछा नरेश की एकमेव प्राणाधार है, यह बात सारा संसार जानता है !' बीरबल प्रेत मुग्ध-सा बोल उठा।

'मुसाहिबे दानिशमन्द ! ओरछा को इस समय आप ही बचा सकते हैं; रायप्रवीण और महाराज इन्द्रजीत की लाज आज आप ही के हाथों में है !'

बीरबल गंभीरता-पूर्वक कवि केशवदास की बातें सुन रहा था, और कवि तथा रायप्रवीण बीरबल के इस मनोमन्थन को शीघ्रातिशीघ्र जान लेने को उत्सुक हो रहे थे। बीरबल की आँखें रायप्रवीण के मुख की ओर थीं; सहसा तनिक मुस्करा कर बीरबल ने कहा—'आज अनेक राजा केवल रायप्रवीण के नाम पर प्राण न्यौछावर करने को तैयार हैं, तो अकबर बादशाह भी तो एक राजा ही हैं !....तो सुन्दरी ! कल निश्चत समय पर तुम राजदरबार में उपस्थित होकर, एक ऐसे नृत्य का प्रदर्शन करो, जिसमें तुम्हारे जीवन की समस्त कलाएँ सम्मिलित हों !,...

'उसके बाद ?' बहुत धीमे स्वर में धीमी गति से बीरबल के घर में प्रविष्ट होकर, संगीत-सम्राट् तानसेन ने प्रश्न किया।

'ओह, तानसेन जी ? पधारिये, पधारिये !....तो आप अपनी शिष्या से मिलने पधारे हैं !'

'नहीं, आप से मिलने के लिए; मेरे यहाँ तो ये लोग ठहरे ही हैं। हाँ बीरबलजी, नृत्य के बाद क्या—?' उस्ताद ने अपनी शिष्या

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के विषय में अति-आतुरता से पूछा।

'उसके बाद ? सुन्दरी, सौंदर्य और कला नष्ट करने के लिए न सही, निहारने के योग्य तो अवश्य हैं; बादशाह को भी जी भर कर अपने को निहार लेने दो। देखते हैं, उसके बाद हमारे कवि-मित्र बादशाह सौन्दर्य को नष्ट करने की ओर जाना चाहते हैं या सौन्दर्य और कला के विकास की ओर! अब आप बिलकुल निश्चिन्त रहिए! हाँ एक बात....' बीरबल ने निमिष भर रुक कर और मुस्करा कर कहा—'देखिए न, कितने भाग्यवान हैं ओरछा नरेश!'

'इस समय तो मैं भाग्यवान हूँ कि आप जैसे....'

'हाँ, हाँ!...' रायप्रवीण की कृतज्ञता के प्रकट होने से पहले ही बीरबल ने टोक दिया—'सुन्दरी, मुझ से सँभल कर रहना; अभी तक कुँवारा ही हूँ!'

कवि, कविता और संगीत एक साथ खिलखिला उठे!

उसी रात को, आगरा शहर की एक संकरी और गन्दी गली में जिसका अन्धकार, एक टूटी हुई दीवार के कोने में टिकी हुई मन्द मशाल से और अधिक भयानक हो रहा था, बादशाह और उसका सखा बीरबल मलिन वेष में, उसी मशाल के नीचे खड़े होकर कुछ सोच रहे थे। बादशाह की दृष्टि मशाल की स्थिर ज्वाला की ओर लगी थी, जिसके समीप आ आकर बहुत से पतंगे अपने जीवन को भस्म कर देते थे। कुछ क्षण उधर देखते रह कर बादशाह ने बीरबल से पूछा—'परवाने, शमा में जल जल कर क्यों मरते हैं?'

'हुज़ूर बेवकूफ़ हैं!'

'कौन, मैं या परवाने?' कुछ चौंक कर बादशाह ने तिरछी नज़र से बीरबल की ओर देखा।

'परवाने, हुज़ूर!' बीरबल ने तनिक मुस्करा कर कहा!

'क्यों?' बादशाह ने क़दम बढ़ाते हुए प्रश्न किया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

Beauty is ... flower ... art ...

'हुज़ूर, ज़िन्दगी का उद्देश्य जीते रहना है, मर जाना नहीं !'

'हुज़ूर नहीं, जमाल कहो !' एक धोबी को अपनी ओर आते देख कर बादशाह ने बीरबल को सावधान किया।

'हाँ, जमाल मियाँ !' बीरबल ने कमाल के रूप में जमाल मियाँ से कहना शुरू किया—'खूबसूरत औरत एक शमा है, जिसे छूने से इन्सान बेवक़ूफ़ हो जाता है—मर जाता है। बहुत से इन्सान शमा की वज़ह से इन्सानियत को खो बैठते हैं ! शमा हमेशा से सिखाती आई है कि खूबसूरती को दूर से देखो, उसे छुओगे तो जल मरोगे !'

'वाह भैया वाह !' ज़ोर से बीरबल की पीठ ठोंक कर एक अहीर चिल्ला उठा—'भैया, तू तो बीरबल के मुक़ाबले का मालूम होता है। अरे दरबार में जा, बादशाह तुझे मोहरों से मढ़ देंगे !

अहीर, उन दोनों के बिलकुल समीप खड़ा था; उसके इस व्यवहार से बीरबल घबरा उठा किन्तु बादशाह शांतिपूर्वक खड़ा खड़ा मुस्करा रहा था। यकायक बीरबल ने सचेत हो कर, शमा की बात भुला देने के लिए, अति उपेक्षापूर्वक अहीर को दुतकारा—'अबे, रहने दे ! देख लिया तेरे बादशाह को…!'

'क्या कहा मरदूद ? हमारे बादशाह को तू क्या…?' वह हिन्दू अहीर बादशाह के अपमान करनेवाले कमाल पर क्रोधित हो कर उसे दोनों हाथों से खींचने ही जा रहा था कि उसने पास खड़े हुए जमाल को देखा—चकित हो कर एक क्षण वह जमाल को देखता ही रहा ! बादशाह को इस भेष में देख कर वह जान ले कर भागा। पागल की तरह चीख चीख कर उस ने सारे मुहल्ले में धूम मचा दी—'अरे सुनो भाइयो !...मुन्शीजी, अनवर मियाँ, उधर देखो ! बाहशाह सलामत यहाँ...'

देखते ही देखते गली के बूढ़े, बच्चे और जवानों ने गली के कोने की ओर दौड़ लगा दी, अन्धेरे में एक दूसरे से टकराते हुए वे बेचारे बादशाह को अपने वेश में देखने के लिए बेचैन हो रहे थे, और इधर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कमाल-जमाल का सारा खेल बिगड़ने जा रहा था। जमाल मियाँ के सौभाग्य से एक ढोली ढोल लेकर अहीरों की बस्ती की ओर जा रहा था; चालाकी से ढोली से ढोल छीन कर दिल्ली का बादशाह वहीं ज़मीन पर बैठ कर, सिर हिला हिला कर ताल-बेताल ढोल पीटने लगा और उसका "मुसाहिबे-दानिशमन्द" मन्त्री बीरबल कमर मटका-मटका कर नाचने का प्रयत्न करने लगा।

बादशाह के दर्शन को उत्सुक जनता, बादशाह के बदले इन ढोलियों को देख कर उस अहीर को कोसने लगी—'घटोरी! अरे गड़रिया सो गड़रिया, अक़्ल भी चरने गई होगी उसकी! कहाँ अकबर बादशाह और कहाँ ये...!'

लोग अपनी बुद्धि के अनुसार तरह तरह के उद्गारों से उस 'ये' के अधूरे वाक्य को पूरा करने लगे; कुछ लोग धुन में आकर ढोल की ताल पर सिर हिलाने लगे। बादशाह, लोगों के विचित्र उद्गारों से क्षुब्ध होकर फिर स्वस्थ हो चला; क्योंकि छद्म-वेश में रह कर नगर चर्चा सुनने के लोभ में मान-अपमान का ध्यान रखना असंगत था। बादशाह ढोल की तेज़ आवाज़ में शमा को भूलने का प्रयत्न कर रहा था।

दूसरे दिन नियत समय पर दीवाने-आम के सभामंडप में तानसेन के संगीत का कम्पन लेकर, तानसेन की शिष्या रायप्रवीण ने अपने नृत्यकौशल से सारे दरबार को भ्रमित करना प्रारम्भ किया। तानसेन की शिष्या का अवलम्ब उसके उस्ताद के संगीत का जादू था, और ओरछानरेश की प्रेयसी की दृढ़ता, उसके प्रियतम की लाज बचाने के लिए प्रस्तुत उसके तन-मन की मनमोहक नृत्यकला थी। रायप्रवीण का मनोवेधक अंगविन्यास अकबर के लिए अपूर्व था; उसकी आँखें सौंदर्य के प्रत्यक्ष प्रभाव से मदमाती होने लगीं। रायप्रवीण का अंग अंग, दरबारियों के मन की उमंगों की तरह नाच रहा था, और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वे रायप्रवीण की नृत्यकला के शारीरिक कम्पन को अर्धोन्मीलित नयनों से निर्निमेष निहार निहार कर, नर्तकी के नयनों, भौंहों, उँगलियों और नखशिख की अपने भावों की अस्थिरता से तुलना कर रहे थे। संगीत-सम्राट् तानसेन के कंठ ने अपनी शिष्या के नृत्य को निहाल कर के मानो स्वर्ग को दरबार में ला खड़ा किया था।

अकबर बादशाह की राजधानी आगरा में अकबर का दरबार और दरबार के दरबारी लोग सब कोई, सब कुछ भूल कर, रायप्रवीण को झूमती हुई देख कर अपनी आँखों को सार्थक कर रहे थे। अकबर को, अपनी आँखों में प्रतिबिंबित रायप्रवीण एक क्षण, बहिश्त की हूर परी और दूसरे क्षण, दोज़ख़ की प्रज्वलित शमा के रूप में प्रतिभासित होने लगी। नृत्य के अन्त में रायप्रवीण और शमा एक दूसरे में सम्मिलित हो गये!

नृत्य समाप्त होने पर जब रायप्रवीण बादशाह के तख़्त के सामने क़दमबोशी के लिए झुकी, तो सारा दरबार जैसे आसमान से ज़मीन पर उतर आया। शमा बुझ गई। बादशाह ने रायप्रवीण की झुकी हुई आँखों को अपनी ओर उठती देख कर; प्रसन्न होकर कहा—'वाह, रायप्रवीण, वाह! बहुत खूब! बोल, क्या चाहती है?'

'जहाँपनाह! हुज़ूर की मेहरवानी पाकर, रायप्रवीण अर्ज़ करना चाहती है कि ओरछानरेश का ज़ुर्माना माफ़ कर दिया जाय!...' अवसरवादी बीरबल ने, अचूक अवसर देख कर उसी क्षण रायप्रवीण के उद्गारों को अपने शब्दों में व्यक्त किया।

'माफ़ किया जाय!' बादशाह ने उसी ध्वनि में मस्त हो कर कहा—'और क्या अर्ज़ है?' नृत्य का प्रभाव, बादशाह के मस्तिष्क में उसी तरह छाया हुआ था! तब रायप्रवीण, बीरबल का संकेत और प्रोत्साहन पाकर, बीरबल के शब्दों को अपनी वाणी में बदल कर कहने लगी—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बिनती रायप्रवीण की, सुनिए चतुर सुजान !
जूठी पातर भखत हैं, बारी, वायस, श्वान !*

बादशाह के हृदय पर जैसे किसी ने बज्राघात किया, किन्तु हज़ारों आघातों के अनुभवी बादशाह ने, इस आघात को बिलकुल शान्तिपूर्वक सहन कर लिया। उसी समय अपने कंठ की हीरा जटित माला रायप्रवीण पर निछावर करके बादशाह उठ खड़ा हुआ; बोला—'तानसेन जी, आपकी यह शिष्या आपके नाम को रोशन करेगी। दो दिन के लिए ओरछा नरेश के यहाँ जाने की आपकी अर्ज़ मंज़ूर की जाती है। अगर आप कल ही रायप्रवीण के साथ यहाँ से रवाना होना चाहें तो राजदरबार आपकी खुशी में कोई रुकावट नहीं डालेगा!'

'जय हो महाबली अकबर!' आँखों में आँसू भर कर रायप्रवीण बोल उठी।

'अमर हो कृपानिधान !!' धीमे स्वर में तानसेन ने सराहा।

'धन्य हो कृपानिधान !!!' अति मन्द-स्वर में बीरबल ने व्यक्त किया।

बीरबल की ओर एक बार दृष्टि डाल कर बादशाह चला गया; बीरबल सिर झुकाकर एक ओर खड़ा था! एकान्त में इस तरह खड़े हुए बीरबल को सारे दरबार के साथ यूसुफ खाँ भी देख रहा था किन्तु दरबारियों से विपरीत, उसकी आँखों से आग निकल रही थी!

अपनी ही मानसिक ज्वाला से दग्ध यूसुफ़ खाँ को; बाबर का वह शाही बाग़ भी शान्त न कर सका जो ग्रीष्म ऋतु में भी सावन की बहार की तरह शीतल रहता था। शनैः शनैः उसकी मानसिक आग अब्दुल्ला, नासीर और रतनसिंह आदि का उत्तेजन पाकर ज्वालामुखी का रूप ले रही थी!

---

* चतुर, ज्ञानी बादशाह! आप रायप्रवीण की विनती सुनिए कि जूठे भोजन को केवल बारी (भिखारियों की एक जाति-विशेष) कौवा और कुत्ता ही ग्रहण करता है!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'आप याने आप ही...' नासीर ने अपना वही पुराना राग अलापना शुरू किया—'हुज़ूर मेरी बात मानिये, मर जाऊँगा तो हुज़ूर याद करेंगे! मैं कहता हूँ, बादशाह सलामत अब साँई बनते जा रहे हैं। देखिये हुज़ूर, कितनी मुश्किलों और परेशानी के बाद हमने ओरछा के मुँहफट राजा का सिर झुकाने की तैयारी की थी, और लाखों में एक ऐसी हूर को पेश किया था जो सिर्फ शाही महल में रहने के लायक है! लेकिन यहाँ कुछ नहीं! बादशाह सलामत को पसन्द न सही, आप को तो वह पसन्द थी! आपको तो हुज़ूर अपना दामाद समझते हैं!'

'यह ब्राह्मण, इस्लाम की शान को ख़तरे में डालेगा!' अपनी कमज़ोर हिम्मत को शब्दों से उत्तेजित कर के रतनसिंह बोला—'अब उसे ठीक करना ही पड़ेगा सरकार!' अपनापन पूर्णरूप से गँवा कर, पेट की ज्वाला से दग्ध रतनसिंह गाँव जलाने निकला। उसमें विनोद करने और समझने की शक्ति न थी। कुछ दिन पूर्व बीरबल की मज़ाक को गम्भीर बात समझ कर वह उस दिन से उसका कट्टर शत्रु हो गया था।

...किंतु इतनी तीव्र उत्तेजना के बाद भी यूसुफ़ खाँ के मुँह से एक शब्द भी न निकला। दूसरे दिन उसने अपने ख़ास ख़ास आदमियों को बुलाया। तीसरे दिन उसके ख़ास आदमियों ने अपने ख़ास आदमियों को आमन्त्रित किया।

चौथे दिन बहुत से छोटे छोटे सरदार, हजूरिये और खुशामद परस्त, यूसुफ़खाँ के यहाँ एकत्रित हुए और उन सबों ने मिल कर निश्चय किया कि बादशाह सलामत की भलाई के लिए बीरबल को हमेशा के लिए निकाल बाहर करना चाहिए। बहुत से समझदार सरदारों ने समझाया कि सोच समझ कर काम किया जाय। बादशाह की खास बेग़म से लेकर पहरेदार तक सब इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि गुस्सा होने के बाद बादशाह किसी के नहीं रहते। तब निर्णय किया गया कि किसी तरकीब से इस काँटे को दूर किया जाय।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तब पाँचवें दिन अब्दुल्ला ने, बीरबल का नाम छुपा कर, विनोदी मौलवी दोप्याज़ा से कोई अच्छी तरक़ीब सुझाने को कहा। मौलवी दोप्याज़ा से तरक़ीब की कुंजी जान कर अब्दुल्ला और रतनसिंह ने यूसुफ़ खाँ को उसे आजमाने की सलाह दी।

और छठे दिन यूसुफ़ ख़ाँ ने बादशाह के ख़ास हज्जाम कालिया को बुलाया। उसे पचास हज़ार की रिश्वत देना तय हुआ, जिसमें से दो हज़ार नक़द देते हुए यूसुफ़ ने सब सरदारों के सामने उसे सुनाकर कहा—'देख कालिया, हम जैसे तुझे कहें, वैसा ही, बादशाह सलामत की हजामत करते वक्त तुझे कहना होगा! बस, हम सब तेरी मदद को तैयार हैं। ख़बरदार, किसी को इस बात की कानोंकान ख़बर न हो, नहीं तो...'

'नहीं सरकार, नहीं मालिक!' कपाल पर पसीने की धारा को पोंछ पोंछ कर कालिया ने कैफ़ियत दी—'आप बेफ़िकर रहिए, अगर किसी को तनिक भी ख़बर हुई तो मैं ख़ुदकुशी कर लूँगा!' पचास हज़ार का नाम सुन कर कालिया बोलने का संयम खो बैठा था वह घबराहट में जल्दी जल्दी दो हज़ार की थैली उठा कर विक्षिप्त की तरह बाहर चला गया।

---

(८)

'रास्ता छोड़ दो!' उमा की मधुर-तीक्ष्ण वाणी सुन कर भी विद्याधर टस से मस न हुआ। उसी तरह लेटा रह कर आकाश की ओर देखते हुए बोला—'कदापि नहीं! मैं यहीं सोया रहूँगा……!' विद्याधर ने अपनी समस्त मानसिक शक्ति का ज़ोर लगा कर यह प्रण किया था।

'तो सोये रहो, मुझे जाने में और सहूलियत होगी!' काली माता के मंदिर की अंतिम सीढ़ी पर यह तमाशा होते देख, उमा ने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शब्दों में रोष और खीझ भर कहा। तीन दिनों से विद्याधर उसे जो तरह तरह की धमकियाँ दे रहा था, उसका यह क्रियात्मक रूप देख कर उमा को कुछ-कुछ हँसी भी आ रही थी।

उमा की इस उपेक्षा ने विद्याधर को चकित और त्रस्त कर दिया; गिड़गिड़ा कर बोला—'तो तुम मेरे पेट पर पैर रख कर जाओगी ?'

'यदि तुम्हारी यही इच्छा है, तो वह भी करूँगी !' गंभीर मुँह बना कर उमा ने कहा; वह जानती थी कि उसके थोड़े-से गंभीर शब्द विद्याधर को आकाश से धरती पर ला सकते हैं!

'नहीं, नहीं, उमा ! मेरी इच्छा तो ज़रा भी नहीं है !' विद्याधर का जोश कुछ कम हो रहा था।

'तो मुझे जाने दो विद्याधर ! देर हो रही है; पिताजी मेरी बाट देख रहे होंगे !'

किन्तु उमा की आँखों में, विद्याधर के लिए आई हुई दया को, विद्याधर क्रूरता समझ बैठा। अपने खोये हुए जोश को पुनः अपने शब्दों में भर कर वह चिल्लाया—'मैंने आज निश्चय कर लिया है उमा, भले ही बातों में मैं तुम्हें न जीत सकूँ, पर मैं सच कहता हूँ कि मेरे हृदय के उद्वेग और मेरी कोमल भावनाओं की गहराई तक तुम भी नहीं पहुँच सकती !' अपने सारे पांडित्य का प्रयोग करते हुए विद्याधर ने, गंभीरतम ढंग से कहा।

उमा, विद्याधर के इस मूर्खतापूर्ण प्रदर्शन को देख कर अपनी हँसी न रोक सकी; वह जानती थी कि पंडित विद्याधर बन्दरों की तरह नाच-कूद कर उसे रोकने का हरचन्द प्रयत्न करेगा। उस मूर्ख के साथ तर्क करना व्यर्थ समझ, वह काली माता की पूजा का थाल लिए मुस्कराती हुई मंदिर की अंतिम सीढ़ी पर बैठ गई। विद्याधर के इस कर्तृत्व ने उसे एक विचित्र उलझन में डाल दिया। सोचने लगी—प्रेम का यह पागल-प्रदर्शन और दांभिक आडम्बर दिखाने में पुरुषमात्र एक समान क्यों हो जाते हैं ? अपने पैरों में सोये हुए पंडित विद्याधर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और ईर्ष्या की ज्वाला में दग्ध, "भीरमल" के नाम पर दाँत पीस पीस कर पुस्तकें पछाड़नेवाले अपने पंडित महेश में उसे तनिक भी अन्तर नहीं दिखाई दिया ! अन्तर केवल इतना ही था कि विद्याधर का अभिनय उसे नीरस प्रतीत होता था और महेश का अभिनय उसके हृदय की धड़कनों को बढ़ा देता था; बस ! हाँ, पहले वह प्रतिदिन काली माता के दर्शन को नहीं आती थी, इन दिनों नियमित रूप से आती है, केवल महेश का स्मरण कर के ही तो······और क्या ?·······

···और यही कि कालीमाता के मंदिर की यह भूमि उसके लिए एक ऐसे वातावरण का सृजन करती थी जो उसे बरबस महेश का स्मरण करा देता था जब कि वे दोनों इसी मंदिर के प्रांगण में या पृष्ठभूमि पर अथवा इसी भूमि पर टहलते-टहलते धर्मशास्त्र, नीति-शास्त्र और "प्रीति-शास्त्र" पर वाद-विवाद किया करते थे और प्रायः महेश की उक्तियों से उमा पराजित हो जाती थी। ·······हाँ, इस मंदिर की ये पंक्तियुक्त सीढ़ियाँ, इसके प्रांगण में झूलनेवाले ये ऊँचे-ऊँचे वृक्ष और वृक्ष के पल्लवों की सरसराहट में गुनगुनाता हुआ मलय-पवन महेश की स्मृति को प्रत्यक्ष अवश्य कर देता था ! ······यहाँ आने से उसकी भावनाओं का बोझ कुछ कुछ हलका अवश्य हो जाता था।

आज पुनः उसका हृदय किसी अव्यक्त वेदना से बोझिल हो रहा था। यों उसे किस बात की कमी थी ? माता न थीं, किन्तु मातृ-स्नेह-पूरित पिता तो थे ? और क्या नहीं था; धन था, रूप था, यौवन था, कला थी, ज्ञान था, कुलीनता थी और इनसे सर्वोपरि प्रेम भी तो उसके पास था ! फिर भी न जाने क्यों, आज उसे सब कुछ सूना-सूना लग रहा था। आज वह अपने को अनजाने ही एकाकिनी और निराधार अनुभव कर रही थी। विद्याधर का यह मूर्ख-प्रलाप आंशिक रूप से आज उसे महेश का स्मरण करा रहा था, इसीलिए वह खीझ कर भी विद्याधर के प्रलाप को धैर्यपूर्वक मुस्करा कर सुन रही थी।

यही होता तो ठीक रहता, किन्तु आज विद्याधर पंडित प्रेम-प्रदर्शित करने में आपे से बाहर हो रहा था। उमा जानती थी कि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गाँजा-अफ़ीम ग्रहण करना विद्याधर की शक्ति के परे है; भंग भी उसने नहीं पी थी, फिर भी वह आज प्रेम के उन्माद में इतना उत्तेजित क्यों हो रहा है ? यही बात उमा को, बहुत कुछ सोचते हुए भी बार-बार उलझन में डाल रही थी।

कुछ देर तक दोनों में से कोई कुछ न बोला, दोनों एक दूसरे को विचित्र अर्थ भरी दृष्टि से बारी बारी से देख रहे थे, यद्यपि उमा की दृष्टि में कौतुक था और विद्याधर की दृष्टि में मूर्खतापूर्ण उत्कण्ठा। जब उमा उपर्युक्त दृष्टि से विद्याधर को देखती तो वह अपनी आँखें धरती में गड़ा देता था, और जब विद्याधर तत्पर हो कर एकटक उमा को देखने लगता, तो उमा अपनी गर्दन एक अर्थभरी मुस्कान से झुका लेती थी; वह विद्याधर को "आँखों के खेल" खिला रही थी, और इस खेल में विद्याधर के हृदय में रक्त की जगह घोड़े दौड़ने लगते थे। सहसा इस नीरस वातावरण से ऊब कर उमा उठ खड़ी हुई, किन्तु उसी तत्परता से विद्याधर भी उमा का मार्ग रोक कर खड़ा हो गया।

'विद्याधर, हम इस तरह मंदिर की सीढ़ियों पर बैठ कर बातें करें, यह तो ठीक नहीं मालूम होता !'

'तो आओ उस बड़ के पेड़ तले बैठ कर बातें करें ! आज मैं तुम्हें यों नहीं जाने दूँगा; तुम्हें मेरी सब बातें सुननी ही होंगी !' विद्याधर ने बालक की तरह मान भरे स्वर में कहा।

'तुम्हारी सब बातें सुन लूँगी तो भी नहीं जाने दोगे ?' अर्थपूर्ण कटाक्ष से विद्याधर को देख कर उमा ने मृदु-स्वर में पूछा !

'नहीं। जब तक तुम न्याय की देवी न बन जाओगी, मैं तुम्हें नहीं जाने दूँगा !'

'पंडित, न्याय करना तो न्यायाधीश का काम है, और देवी का काम है बिना बोले पूजा स्वीकार करना !' उमा ने मुस्करा कर पंडित विद्याधर को भ्रमित करने का प्रयत्न किया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'धन्य, धन्य ! यही तो मैं कहना चाहता था । ! तुम पूजा स्वीकार करो—स्वीकार किये जाओ ?' पंडित विद्याधर ने अचानक दो अंगुल उछल कर कहा !

'परन्तु मैं तो न्यायाधीश भी नहीं हूँ देवी भी नहीं !'

'उमाजी…!' विद्याधर ने दृढ़निश्चय से कहा—'तुम भले ही अपने आप को हलकी बताती रहो, पर मैं तुम्हारी बातों में ज़रा भी विश्वास नहीं करता !'

'मुझे पूरा विश्वास है !' बड़ के चौतरे पर बैठती हुई उमा बोली।

'तो फिर उमा…' व्यंग को प्रशंसा समझ कर, विद्याधर, उमा से सट कर बैठते हुए बोला।

'"तो फिर" क्या…?'

'उमा, हमारे विवाह के बारे में पंडितजी इतने हिचकिचाते क्यों हैं ?'

'मुझे नहीं मालूम !' उमा ने ऊब कर कहा।

'मैं इसका कारण अच्छी तरह जानता हूँ ! पंडितजी हमारे ब्याह के लिए नहीं हिचकिचाते, तुम ही उन्हें मना करती हो ! उमा, महेश में ऐसा क्या है और मुझ में क्या नहीं है, बताओ ?' विद्याधर ने चीख़ कर उमा से प्रश्न किया, मानो चीख़-चिल्ला कर वह अपना हृदय-भार हलका कर रहा हो। उमा को भी उसी स्वर से उत्तर देने की इच्छा हुई, किन्तु इतनी देर तक विद्याधर को बहलाने-भरमाने के बाद उसे और अधिक मूर्ख बनाने की उमंग न रही थी। रसिक, कलाप्रिय, विदुषी उमा को मूर्ख विद्याधर पर क्रोध से अधिक दया आई। महेश की ईर्ष्या में अत्यधिक मूर्ख—केवल मूर्ख—दिखाई दे रहे विद्याधर की ओर, बरबस मुस्करा कर देखती हुई उमा बोली—विद्याधर, यह सोचना तुम पुरुषों की बुद्धि के बाहर की बात है कि स्त्रियाँ, किसी को, क्यों और किसलिए चाहने लगती हैं ? जब स्वयं स्त्रियाँ, अपने आपको नहीं समझ सकतीं तो पुरुष उन्हें कहाँ से समझ लेंगे ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'तो इसका अर्थ यह है कि मैं कभी कुछ न कहूँ ?' विद्याधर ने यह प्रश्न इतनी स्वाभाविक निर्दोषिता से पूछा था कि उमा के पास उसे समझाने का कोई उपाय शेष न रहा और वह हँस पड़ी !

'तो कह दो न कि आज मैं मूर्ख बन कर तुम्हारे सामने हँसता था और तुम देखती रहती थी; मैं बड़बड़ाता था और तुम दो क्षण के विनोद के लिए मुझसे खेलती थी ! कदाचित् मैं तुम जैसा विद्वान् नहीं हूँ, इसलिए कोई भूल कर बैठा हूँगा, परन्तु एक बात में मुझे तनिक भी सन्देह नहीं कि तुम निष्ठुर हो ! तुम्हारे हृदय में भावना, प्रेम, स्नेह बिलकुल भी नहीं है ।'

'मेरे हृदय में तो बहुत स्नेह है !' मुस्करा कर उमा ने विद्याधर का विरोध किया ।

'किसके लिए ?...मेरे लिए...??' आवेश में पुनः खड़े होकर विद्याधर ने पंचम-स्वर में पूछा ।

'हाँ !' उमा ने "बालक" के सामने "मिठाई" परोसना शुरू किया ।

'उमा !' आँखें नींबू की तरह फैलाकर, "बालक" आनन्द में उछल पड़ा ।

'मैं तुम से प्रेम करती हूँ !' उमा ने "मिठाई" मुँह के पास ले जाते हुए कहा ।

'उमा, मैं मूर्ख हूँ; स्त्री को बिलकुल नहीं पहचानता । एक बार फिर से कहो !'

'मैं तुम से बहुत प्रेम...' "मिठाई" ओठों के पास आ गई; "बालक" ने मुँह खोला ।

'उमा !' अचानक कोई "तीसरा" बीच ही में बोल उठा । विद्याधर, जो उमंग की तरंग में आकाश में उड़ा जा रहा था, अचानक धरती पर आ गिरा । "बालक" की "मिठाई" अदृश्य हो गई । उसने आगन्तुक को लाल लाल आँखों से देखा—वह गाँव का चौकीदार नूरखाँ था ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उमा आँधी की तरह दौड़ कर उस के पास पहुँच गई। नूरखाँ ने अपनी फटी हुई बंडी में से, एक कागज़ का टुकड़ा निकाल कर मुस्कराते हुए उमा के हाथ में रख दिया; उमा हृदय के वेग की उपेक्षा कर पढ़ने लगी—

प्रेम सत्यं तयौरेव, ययोर्योगवियोगयोः।
वत्सरा वासरीयन्ति, वासरीयन्ति वत्सराः॥*

उमा की उमंगों के उतार चढ़ाव और पत्र की मधुर प्रतिक्रिया को वृद्ध नूरखाँ क्षण भर में पहचान गया। उसने भी वैसे ही विनोदमय ढंग से महेश के कुशल समाचार कहे। बूढ़े के सौभाग्य से आगरा वहाँ से बहुत दूर था, नहीं तो यह प्रेम बावरी बेचारे नूरखाँ को सप्ताह में दो बार महेश के समाचार लेने के लिए भेजती।

'बेटा, अब तो पंडित बड़ा आदमी हो गया है। ख़ुदा ख़ैर करे, लेकिन अब उसे बहुत दूर रखना ठीक नहीं है!' बूढ़े ने जैसे महेश के सही समाचार कहना अब प्रारम्भ किया हो; फिर अपनी सफ़ेद दाढ़ी को सहलाता हुआ बोला—'बेटा, बुज़ुर्गों का कहना है, घोड़े की लगाम में ढील देने से घोड़ा सरपट दौड़ने लगता है, और जिस घोड़े के लगाम ही न हो, वह मनचाही जगह दौड़ता है!' बूढ़ा मुस्करा कर दाढ़ी सहलाता हुआ चला गया; उमा ने पहले से ही इस ग़रीब बूढ़े को इनाम दे दिया था।

उमा यहाँ तक पहुँच चुकी थी? विद्याधर अवाक् होकर उमा को देखता रहा; नूरखाँ के चले जाने के बाद दाँत किटकिटाता हुआ वह उमा के समीप आकर, मुँह पर सम्पूर्ण घृणा लाने का प्रयत्न करते हुए बुदबुदाया—'निष्ठुर! विश्वास घातक!! निर्दय!!!'

'क्या हुआ पंडित?' उमा ने पुनः "मिठाई" परोसना प्रारम्भ किया।

---

* उन्हीं का प्रेम सत्य होता है, जिन्हें योग में वर्ष दिन के समान और वियोग में दिन वर्ष के समान प्रतीत हों!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'मेरे सामने ढोंग न कर; मैं बालक नहीं हूँ जो तेरे मीठे शब्दों में भरमा जाऊँगा ! ओह, निर्दय ! अभी दो क्षण पहले कहती थी, तू मुझ से बहुत प्रेम करती है....'

'अब भी करती हूँ !' उमा ने शब्दों में स्नेह भर कर कहा।

'अब भी यही कहती है ? तो यह संदेशा किसने भेजा है ? मैं जानता हूँ, महेश ने ! फिर भी कहे जा रही है—मैं तुम से प्रेम करती हूँ। निर्दय कहीं की...निष्ठुर !'

'सचमुच पंडित ! मैं बिलकुल सच कह रही हूँ !' उमा ने अति मृदुता से कहा; "बालक" फिर मुँह खोलने जा रहा था कि सावधान हो गया, क्योंकि "मिठाई" मिथ्या थी। "मिठाई" का प्रलोभन छोड़ कर विद्याधर केवल मूर्ख बन कर बोला—'उमा, लज्जा स्त्रियों का आभूषण है, और विनम्रता स्त्रीत्व है, इन दोनों को अपने से अलग न करो !'

'पंडित, तुम मेरी पूरी बात तो सुनते ही नहीं ? तुम से मैं बहुत प्रेम करती हूँ, जिस तरह छोटे भाई का चिढ़ना, हँसना, बोलना, और सरलता बहन के हृदय में सदा ही प्रेम उत्पन्न करती है, वैसे ही मैं तुम से प्रेम करने लगी हूँ !'

'उमा...!' विद्याधर अनबोले ही बोल उठा; मूर्ति की तरह अविचल विद्याधर आँखों की चमक और जिह्वा की वाणी खो बैठा था। उमा और तमाशा देखने के लिए खड़ी न रह कर, उमंग की तरंग में विद्याधर के हाथों को बहुत प्रेम से छूती हुई चली गई।

'इतना बड़ा आघात मैं कैसे सह सकूँगा ?....' अपने गत स्वर को शक्ति भर ऊँचा करके विद्याधर स्वगत बोला, किन्तु उमा कुछ भी न सुन सकी।

'विवाह कर लो न ! ब्याह के बाद सब आघात ठीक हो जाते हैं !' किसी कल-कंठ ने विद्याधर के कानों को सुनने की शक्ति दी। उसने चौंक कर पीछे देखा—ज्योत्स्ना थी, उमा नहीं ! उमा, विद्याधर और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ज्योत्स्ना तीनों बचपन में साथ साथ खेले थे। ज्योत्स्ना की मधुर उपस्थिति का आभास विद्याधर को तब हुआ, जब वह मन्द गति से चलती हुई कनखइयों से देखती और अपनी कोमल हथेली से फूल के पौदों को सहलाती हुई धीरे धीरे दूसरी ओर जाने लगी थी। विद्याधर उसी ओर एकटक देखता रहा; उसे उमा का वह वाक्य याद आया, जो उसने स्त्रियों की अगम्यता के बारे में कहा था कि पुरुष स्त्रियों को कभी नहीं समझ सकते! एक ही क्षण में उसे एक अनोखा ज्ञान प्राप्त हो गया। जिह्वा की वाणी, आँखों की चमक और पैरों की गति उसे पुनः मिल गई और उसी क्षण उमा का बावरा प्रेमी विद्याधर, गजगामिनी ज्योत्स्ना के पीछे दौड़ चला।

उमा घर तो पहुँची, किन्तु घर के भीतर न जा सकी क्योंकि वहाँ गाँव की एक छोटी-सी पंचायत आ डटी थी। उमा ने द्वार की ओट में खड़ी होकर जाना कि भीतर नये नये गहनों से विचित्र ढंग से सजी हुई लखिया चाची ज़ोरों से हाथ हिला हिला कर पण्डित रमानाथ को सैकड़ों खरी खोटी सुना रही थी और उसके पिता सारे शरीर से काँपते हुए उसे उत्तर दे रहे थे—"मेरी विदुषी इकलौती पुत्री को, तेरे उस पथ चलित, पदचलित पुरुषार्थ हीन छोकरे से ब्याह दूँ? नहीं, कदापि नहीं!'

'हाँ, हाँ, हज़ार बार ब्याहोगे! संस्कृत में जितनी गालियाँ देना हो, दे लो! पंडित जी, मैं फिर से कहे देती हूँ, तुम्हारे उस बीरबल का मुँह न रँग दूँ तो, ब्राह्मणी नहीं! लहू छींटूँगी, हाहाकार मचा दूँगी!! पर ब्याह महेश से ही होकर रहेगा!'

'पर लखिया बाई, पहले महेश को तो आ जाने दो, फिर ब्याह की बात कर लेना; कन्या कहीं भागी थोड़े ही जाती है!' एक समझदार ने समझाया।

'कल ही महेश को यहाँ लिवा लाती हूँ! पंचो! ये पाँच सौ नगद देती हूँ; सारा गाँव सजाओ; जिसे जो चाहिये दो! सात दिन के भीतर मेरा महेश इन पण्डित की लड़की से ब्याह करेगा! देखती हूँ,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कौन रोकता है मुझे ?' चुनौती देकर, भतीजे के बल पर कूदती हुई लखिया एक विचित्र अदा से बाहर चली गई; सारी पंचायत विस्मय से अवाक् होकर देखती रही !

बाहर आने पर भी लखिया का क्रोध शांत नहीं हुआ था। गुलाब के पास से गुज़रती हुई वह, महेश के कल्पित प्रतिद्वन्द्वी को उसी तरह कोस रही थी—'मुए कमबख़्त का नाम तो देखो—बीरबल ! हें ! होगा कोई—'

'हँ, हँ ! चाचीजी—' उमा ने अचानक पीछे से आकर लखिया के मुँह पर हाथ रखते हुए कहा—'आगे कुछ न बोलना उन्हीं का नाम बीरबल है। वे तुम्हें जल्दी जल्दी में बतलाना भूल गये होंगे !'

'वाह बिटिया !' यकायक झुरमुट के पीछे से कोई बोल उठा। लखिया समझ गई कि महेश के गँजेड़ी चाचा ही हैं ! उसने आँखें फाड़ कर देखा—'अरी छोकरी मुझे नहीं मालूम, और तू जानती है ? उसने मुझसे क्यों नहीं कहा ?' और झाड़ियों में छुपे हुए अपने पतिदेव को सम्बोधित करके चिल्लाई—'अजी सुनते हो ? इधर आओ ! हमें कल ही आगरा जाना पड़ेगा ! मुझे इस लड़के के लच्छन ठीक मालूम नहीं होते !'

लखिया ने पति का हाथ पकड़ कर उसे झाड़ी में से निकाला। गँजेड़ी चाचा स्नेह से उमा की ओर आँखें मटकाता हुआ देखने लगा और लखिया के साथ साथ खिंचने लगा !

—❀—

(६)

'हाँ हुज़ूर ! अगर आप हुक्म दें तो मैं अपने पंचों को बुलवा कर उनसे क़ुबूल करवा दूँ; यह तो बहुत बड़ा चमत्कार है जहाँपनाह !' हज्जामों के मुखिया कालिया ने अकबर की दाढ़ी के अधपके बालों को दाहिने हाथ के अस्तुरे से साफ़ करके बायें हाथ की हथेली पर पोंछते

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हुए कहा। उसे अब विश्वास हो गया था कि शाही बग़ीचे की बेलों में लगनेवाले गोल गोल खट-मिट्ठे अंगूरों की तरह उसकी खट-मिट्ठी बातों ने भी बादशाह के मुँह में पानी ला दिया है, और इसीलिए अब तक बादशाह उसकी बातों में तनिक भी रुकावट न डाल कर चुपचाप ध्यानपूर्वक सुन रहे हैं। अपनी 'हज्जामी' बुद्धि के अनुसार, बादशाह की इस प्रतिक्रिया से और अधिक उत्साहित हो कर कालिया कहने लगा—'ग़रीब-परवर! हमारी पंचायत के पाँचों मुखियाओं ने अपनी आँखों से अपने रिश्तेदारों को स्वर्ग में जाते देखा है; यह तो आँखों देखा चमत्कार है हुज़ूर! कालभैरव की कृपा से इन्सान, बिना किसी रुकावट के स्वर्ग में पहुँच कर, अपने सगे-सम्बन्धियों के कुशल-समाचार ले कर वापस आ सकता है!'

'तो फिर सब लोग इस चमत्कार को अमल में क्यों नहीं लाते?' दाढ़ी सहलाते हुए बादशाह ने पूछा।

'हुज़ूर वैसे तो इस चमत्कार के जाननेवाले बहुत मिल जाएँगे, लेकिन गुरु की आज्ञा के बिना कोई, किसी को यह बात नहीं कह सकता, और न कोई पूछ ही सकता है! पूरे साल भर से मैं गुरु की आज्ञा के लिए तरस रहा था। आज ही गुरुजी ने प्रसन्न हो कर मुझे वह मंत्र अमल में लाने की आज्ञा दी है और इसीलिए मैंने हुज़ूर के सामने यह अर्ज़ पेश की है!'

'अच्छा! तू ख़ुद ही ज़िन्दे आदमी को स्वर्ग में भेजने का मन्त्र जानता है?' बादशाह ने आश्चर्य-चकित हो कर पूछा।

'सब कालभैरव की कृपा है, आलीजाह!' लजाते हुए कालिया ने उत्तर दिया।

'बहुत अच्छा! हाँ, तो कालिया तू ही हमारे पुरखों की राजी-ख़ुशी के समाचार लेने स्वर्ग में चला जा.......!'

यकायक कालिया काँप उठा—क्या बादशाह ने "उसकी जूती उसी के सर लगाने" का विचार किया है? घबराहट से उसका दाहिना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हाथ काँपने लगा जिसमें अस्तुरा था। बनावटी हँसी के बहाने उसने अस्तुरा बायें हाथ में ले लिया और घबराहट छुपाने के लिए दाँत निपोर कर बोला—'हुज़ूर मैं तो वह मन्त्र पढ़ सकता हूँ, स्वर्ग में जाने के लिए कोई पूरे बत्तीस लक्षणोंवाला पुरुष चाहिए !'

'ओह…!' कुछ सोचते हुए बादशाह ने कहा—'कालिया, हमारे यहाँ कोई ऐसा पुरुष मिलेगा ? ……ख़ास कर के दरबार में—?'

'हुज़ूर सचमुच भगवान ने आप के दिल में बैठ कर आप के मुँह से कहलवाया है…!' अपने सिर से बला टल जाने से कालिया ने साहस कर के कहा—'जहाँपनाह, आप के दरबार में ऐसा एक ही पुरुष है, लेकिन हुज़ूर….!'

'बोल, बोल ! सकुचाता क्यों है ! मैं ख़ुश हूँ……कौन है वह ?

'बीरबलजी, ग़रीब-परवर ! उन्हें ही स्वर्ग में भेजिए; वे अकेले ही स्वर्ग में जा सकते हैं !'

'ठीक कहा है तूने ! मैं भी कविराज बीरबल के बारे में ही सोच रहा था !' कह कर बादशाह किसी गहरे विचार में तल्लीन हो गया। कालिया भी कुछ वैसा ही सोचने जा रहा था कि बादशाह यकायक बोल उठा—'कालिया, बिलकुल सही बताया तूने; कविराज को ही स्वर्ग में जाना चाहिए।'

'ठीक है हुज़ूर, बिलकुल ठीक है ! बीरबल स्वर्ग में ज़रूर जाएँगे ! और हुज़ूर, वे ही तो एक बत्तीस लक्षणोंवाले हैं, जहाँप……'

और कुछ न सुन कर बादशाह खड़ा हो कर हमामख़ाने की ओर मुड़ा; अनेक दास-दासी पोशाक आदि ले कर उसके पीछे पीछे चले। कालिया ने भी अपनी सामग्री समेट कर ख़ुशी और भय की मिश्रित भावना से लम्बे-लम्बे डग भर कर घर का रास्ता लिया।

बादशाह के दौलतख़ाने में अमीर-उमरावों की मजलिस इकट्ठी हुई थी। मजलिस में फ़ैज़ी और अबुलफ़ज़ल भी थे और दूसरी ओर मौलवी दोप्याज़ा और यूसुफ़ के साथ उसके कुछ साथी भी किसी काम से

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वहाँ आ पहुँचे थे। केवल बीरबल की कमी थी, किंतु वह भी कुछ क्षणों में सबों की मुस्कराहट के बीच उपस्थित हो गया। कुछ सरदार सत्कार के लिए बोल उठे—'आइये कविराज, पधारिये !'

विनोदी मौलवी दोप्याज़ा ने, पास में बैठे हुए हकीमजी की मज़ाक उड़ाने के लिए कहा—'मुबारक हो बीरबलजी ! ये हकीम साहब कहते हैं कि हुज़ूरे-आला ने आज से आप को कुत्तों का अफ़सर मुक़र्रर किया है !'

'बहुत ख़ुशी की बात है मौलवीजी !' बीरबल ने क्षण भर भी देर न कर के कहा—'आज से आप सबों को मेरे ही हुक्म से चलना होगा !'

मौलवी खिसिया कर इधर-उधर देखने लगा। सब खिलखिला कर हँस पड़े। हकीम कट कर रह गया; उसने भी मौलवी दोप्याज़ा से बदला लेने की ठानी। लोगों की हँसी की परवाह न करके उसने बीरबल से कहा—'कविराज, दोप्याज़ा साहब ने मुझे अभी-अभी बताया कि कल रात को उन्हें ऐसा सपना आया, कि वे ख़ुद तो ईरानी इत्र के हौज में लेटे हुए थे, और सामने ही आप नरक के कुण्ड में पड़े थे !'

'वाह, क़ुदरत की भी अजीब माया है हकीम साहब !' बीरबल का जवाब हाज़िर था; सारी मजलिस जवाब सुनने को उत्सुक हो गई। बीरबल बोला—'मुझे भी कल रात को यही सपना आया। उसके बाद मैं नरक के कुण्ड में से, और दोप्याज़ा साहब इत्र के हौज़ में से बाहर निकल कर एक दूसरे से चिपक गये ! फिर तो ऐसा प्रेम उमड़ा हकीम साहब, कि दोप्याज़ा साहब मुझे, और मैं दोप्याज़ा साहब को चाटने लगे !'

'कमाल ! ग़ज़ब कर दिया आप ने तो कविराज !' फ़ैज़ी से भी प्रशंसा किये बिना न रहा गया। दौलतख़ाने में कई क्षणों तक हँसी की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

खिलखिलाहट गूँजती रही। दोप्याज़ा, हकीम को घूर घूर कर देख रहा था।

इतने ही में चौबदारों ने, बादशाह के आगमन की सूचना दी; सब सम्हल कर बैठ गये। बादशाह के आने पर सब दरबारियों ने बा-अदब तस्लीम की। बादशाह ने गद्दी पर बैठते ही फ़ैज़ी से पूछा—'शेखसाहब, क्या यह सच है "जहाँ न पहुँचे रवि, वहाँ पहुँचे कवि ?'

'जी आलीज़ाह! इस कहावत को बहुत से लोग मानते हैं।' अदब से सिर झुका कर फ़ैज़ी ने कहा।

'कविराज, आप क्यों नहीं बोलते ?' बादशाह ने बीरबल की ओर संकेत् कर के पूछा।

'हुज़ूर, हिन्दुस्तान के सब से बड़े शायर की बात बिलकुल सही है!' फ़ैज़ी को सम्मानित करने के लिए बीरबल ने कहा।

'तो कविराज, तुम ही स्वर्ग चले जाओ!' बादशाह ने ऐसी स्वाभाविकता से कहा मानो वह पास ही के किसी गाँव में जाने का हुक्म दे रहा हो!

'जहाँपनाह!' अबुलफ़ज़ल ने चौंक कर कहा। बीरबल कुछ क्षणों के लिए स्तब्ध रह गया। यूसुफ़ की द्वेषाग्नि ख़ुशी की हिलोरें लेने लगीं।

तब बादशाह ने मुस्करा कर कहा—'मुझे कालिया हज्जाम ने आज ही बताया कि उसके पास ऐसी ही एक विद्या है जो बहुत कामयाब साबित हुई है।' कुछ देर रुककर बादशाह ने अबुलफ़ज़ल की ओर देखकर शांतिपूर्वक कहा—'मुझे यह जानने की इच्छा बहुत दिनों से थी कि मेरे पुरखे स्वर्ग में क्या करते होंगे, इसलिए मैंने कविराज बीरबल से पूछा कि वे मेरे लिए स्वर्ग में जाने को तैयार होंगे? कवि के लिए तो कहीं भी रुकावट नहीं होती! क्यों कविराज, जाएँगे न आप?

'क्यों नहीं जहाँपनाह? आप जब भी हुक्म दें, जाने को तैयार हूँ!' बीरबल ने शान्तिपूर्वक कहा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यूसुफ़खाँ बड़ी कठिनाई से अपनी जीभ को सम्भाल रहा था; उसे उसी समय उठ कर बादशाह के पैर चूम लेने को जी चाहा। बादशाह ने यूसुफ़खाँ की ओर देख कर कहा—'कविराज, वहाँ भी ऐसे मनसबदार होंगे जो अपने पुरखों के समाचार जानना चाहते होंगे। अगर उन में से किसी की मुलाक़ात आप से हो जाय तो उनके भी कुशल-समाचार लेते आइएगा। क्यों यूसुफ़खाँ, ठीक कह रहा हूँ न मैं?'

'ज़रूर, ज़रूर जहाँपनाह! हुज़ूर बिलकुल दुरुस्त फ़रमा रहे हैं। यहाँ ऐसे बहुत से मनसबदार हैं, जो...हम...हम सबही तो हैं हुज़ूर!...' अपनी जीभ को ज़बरदस्ती रोक कर यूसुफ़ खाँ को बैठ जाना पड़ा। उसका कलेजा ज़ोरों से काँप रहा था।

आज की-सी उलझन हाज़िर-जवाब बीरबल के जीवन में कभी नहीं आई थी। आगरे आने और "मुसाहिबे-दानिशमन्द" होने के बाद आज तक बीरबल ने किसी भी कठिन से कठिन सामाजिक, नैतिक या राजनैतिक समस्याओं का तत्काल निराकरण करने के बाद इतनी गहराई से नहीं सोचा था। बादशाह और बीरबल अपनी विचित्र प्रश्नोत्तरी के समाधान को पाकर संपूर्ण रूप से सन्तुष्ट हो जाते थे किंतु आज का विनोद, अनुभव और सम्भावना की कसौटी पर खरा उतरना अत्यन्त कठिन प्रतीत होता था। किंतु बीरबल ने बाह्य और अन्तर में तनिक भी विचलित न होते हुए बादशाह से कहा—'आलीज़ाह यों तो स्वर्ग का रास्ता बिलकुल सीधा है लेकिन वहाँ का प्रवास बहुत खर्चीला होता है; फ़िलहाल पचास हज़ार की आवश्यकता होगी!'

बादशाह ने अपने स्वभावानुसार तिरछी दृष्टि से बीरबल की ओर देख कर—आँखों में आँखें डालकर—विश्वास कर लिया और हुक्म दिया—'वज़ीर साहब, ख़ज़ांचियों से कहला दो कि इसी वक्त पचहत्तर हज़ार रुपये कविराज की हवेली को रवाना कर दिये जायँ। कविराज, पच्चीस हज़ार और ले जाओ, स्वर्ग का रास्ता है, कहीं कुछ ज़रूरत लग जाय!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कुछ देर ठहर कर बादशाह ने अबुलफ़ज़ल की ओर देखकर हुक्म दिया—'रेवा-नरेश के नाम दूत भेजकर उन से कहला दो कि हम उन से मिलना चाहते हैं।'

अकबर की स्मरणशक्ति अतीव तीक्ष्ण थी। एक बार हाथ व मन में लिया हुआ काम छोड़ना उसके स्वभाव के विरुद्ध था। शायद सभी दरबारी या मन्त्रीगण रेवा-नरेश की बात को भूल चुके थे किंतु अकबर, उसके उद्दण्ड और स्वच्छन्द स्वभाव से मन ही मन क्षुब्ध होता रहता था। उस दिन दरबार की चर्चा का विषय रेवा-नरेश ही था।

किंतु आज की चर्चा में बीरबल तनिक भी रस नहीं ले रहा था। उसे एक क्षण में रेवा-नरेश और दूसरे ही क्षण स्वर्ग और उमा का ध्यान हो रहा था। दरबार समाप्त होते ही वह शीघ्रता पूर्वक घर को रवाना हुआ।

'यह सब तेरी ही दया है भगवान!' लखिया चाची सज धज कर भगवान से प्रार्थना कर रही थी।

'हाँ; चाची, सब कुछ भगवान की दया है! घबराना मत, मैं सीधा स्वर्ग को जा रहा हूँ!' बीरबल ने चाची को प्रणाम करते हुए कहा।

'स्वर्ग में जायँ तेरे दुश्मन! हें, स्वर्ग में क्यों, नरक ही में जायँ न कमबख्त। एँ यह क्या बक रहा है तू? ज़रा यह तो पूछा होता हम से, कि कब आये, कैसे आये? अरे, सारे गाँव का मुँह बन्द करके आई हूँ! मुए मेरे लड़के का मज़ाक उड़ाना चाहते थे!' तब बड़े स्नेह से बीरबल की पीठ को सहलाते हुए चाची ने बड़े ही स्नेह से कहा—'महेश, मैं रात दिन तेरी ही चिंता में जला करती थी बेटे! अब ज़रा शान्ति हुई। अब सोच-विचार न कर, इसी बुधवार को ब्याह है तेरा!'

'अब ब्याह की बात रहने दो चाची! इसी मंगलवार को तो मैं अकेला स्वर्ग में जा रहा हूँ—बिलकुल अकेला!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'तेरे चाचा सच कहते हैं; पढ़ लिख कर ब्राह्मण, धन को पचा नहीं सकता। तुझे भी धन का अजीर्ण हो रहा है क्या? लड़के, तेरा मस्तक तो ठिकाने है न?

'चाची, शाही ख़ज़ाने से अभी ही पचहत्तर हज़ार आयेंगे, वे सब लेकर तुम कल सवेरे ही चाचा के साथ तीर्थ यात्रा को निकल पड़ो और गंगातट पर किसी अच्छे ब्राह्मण से क्रिया-कर्म कराने के बाद, बाकी रुपये लेकर गाँव को चली जाना।' बीरबल ने गंभीरता-पूर्वक चाची को समझाया।

'बाबा हाथ जोड़ लिए तुझको! तू कवि है, मैं तेरी भाषा नहीं समझ सकती बस! तुझे स्वर्ग में जाना हो तो चले जाना, हिमालय की चोटी पर चढ़ना हो तो भी मैं नहीं रोकूँगी। पर यह सब व्याह हो जाने के बाद होगा, पहले नहीं!'

'चाची, सच कहता हूँ, मैं स्वर्ग में जाऊँगा!' अति गम्भीरता-पूर्वक बीरबल ने दुहराया।

'वाह बेटा, वाह!' कहीं से पुराणी चाची की चिल्लाहट सुनाई दी। बीरबल ने चौंक कर इधर-उधर देखा, कुछ ही दूर पर कोने के तले से धुआँ निकल रहा था।

लखिया चीखती हुई दौड़ कर वहाँ गई और जल्दी जल्दी में सूराख़ वाला लोहे का बड़ा ढक्कन फ़र्श पर से हटाया और देखा कि पुराणी चाचा शांतिपूर्वक अपनी चिलम से धूम्रपान कर रहे थे।

'कुत्ते की पूँछ सौ साल धरती में दबाओ फिर भी टेढ़ी! मैं कहती हूँ, यहाँ अँधेरे में बैठे क्या कर रहे हो? लाज-शरम नहीं है तुम में?'

'तुझे लाज न आये इसी लिए तो यहाँ छिपा बैठा हूँ!' चाचा ने उत्तर दिया।

'बाहर आते हो या नहीं?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'नहीं चाचा, तुम वहीं रहो !' ऊँची आवाज़ से, चाचा और चाची को असमंजस में डाल कर बीरबल ने सुरंग में उतर कर चाची को भी भीतर खींच लिया और दोनों के साथ शीघ्रता-पूर्वक पैर बढ़ाने लगा !

....और कुछ ही पलों के अन्तर ने उन तीनों को शाही महल की दीवार के सामने वाले मैदान में ला खड़ा किया। बीरबल की काल्पनिक सफलता ने उसके सशंकित आनन्द को उद्वेलित कर दिया—उन्मत्त सा होकर, बच्चों की-सी चपलता से वह चाची से चिमट गया और बुदबुदाया—'चाची, मंगलवार को मैं यहीं से स्वर्ग जाऊँगा। ...और, चाची, बुधवार के दिन उमा से मेरा ब्याह होगा !'

लखिया का सिर चकराने लगा। अब उसकी मौन सहन-शीलता सीमा पार कर चुकी थी। सिर पकड़ कर वह नीचे बैठ गई; उसे विश्वास हो चला था कि महेश का पागलपन बढ़ता जा रहा है। लखिया को इस तरह बैठी देख कर चाचा ने लपक कर उसका हाथ पकड़ लिया, और एकटक उसे देखने लगा, मानो उसकी चिलम को लखिया ने ही जान-बूझ कर कहीं छुपाया है।

उसी रात को, बीरबल ने ख़ास ख़ास अफ़सरों के सामने उसी सुरंग के ऊपर, अपनी चिता तैयार कराई। उस की विरागमयी स्वाभाविकता ने किसी के मन में तिल भर भी संदेह न होने दिया। निश्चित समय पर कालिया हज्जाम ने कम्पित हृदय और कंपित वचनों से अपनी बनावटी क्रियाएँ करनी शुरू कीं, जिसका एक शब्द भी उसकी समझ में नहीं आ रहा था और न किसी को समझने की पर्वाह थी। क्रियाएँ सम्पूर्ण होने पर बीरबल ने बादशाह को वन्दन करके स्वर्ग में जाने की आज्ञा माँगी।

बादशाह ने तनिक घबराहट के साथ बीरबल से, धीमे स्वर में पूछा—'क्यों कविराज, स्वर्ग में जाते हुए आपके शरीर को तो ख़तरा नहीं है न ?' मित्र की चिन्ता से कम्पित वचनों के मर्म को बीरबल समझ गया; आँसुओं के प्रवाह को बलात् रोक कर उसने अकबर के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पैर जोरों से पकड़ लिये; बोला—'जहाँपनाह, इस नश्वर संसार में किसका शरीर अमर रह सका है ? मनुष्य के गुण और कीर्ति ही अमर रह सकते हैं शरीर नहीं....और हुज़ूर, मुझे तो पूर्वजों के कुशल समाचार लेने जाना है, तो वापस आना ही पड़ेगा। जहाँपनाह, मैं ब्राह्मण हूँ, वैसे भी मेरे शरीर को कुछ नहीं होगा। आप निश्चिन्त रहें, और अब मुझे आज्ञा दें!

....और बादशाह और उपस्थित दरबारियों के साथ स्वयं कालिया हज्जाम को भी आश्चर्य के महासागर में डूबता-उतराता छोड़ कर, बीरबल चिता के बीचोबीच जा खड़ा हुआ। कुछ ही क्षणों में चिता सुलग उठी और उसकी गगनगामी प्रचण्ड ज्वालाओं ने अपनी कराल जिह्वाओं में बीरबल के शरीर को छुपा दिया।

ऐसा विनोद किसी ने अपने जीवन में नहीं देखा था। एक तो वैसे ही हज्जाम के पेट में कोई बात नहीं छुपती, तिस पर पचास हज़ार मिलने का आनन्द कालिया के मन में अलग हिलोरें मार रहा था; उसे अनुभव हो रहा था कि यदि वह यह बात किसी से नहीं कहेगा तो पागल हो जाएगा या उसे उदररोग हो जाएगा अथवा यह बात उसके प्राण ही लेकर बाहर निकल आएगी। इतने दिनों तक तो किसी तरह मन और जीभ को उसने दबाये रखा था किंतु अब तो......

उसकी चेतना मानो बीरबल की चिता की ज्वालाओं के साथ सुदूर आकाश में चली गई थी। उसके "अचेतन" शरीर को उसके दोनों पैरों ने किसी तरह घर के आँगन में ला खड़ा किया।

...और उसे घर के आँगन में अपनी उपस्थिति की सुध तब हुई जब कि उसकी बहू ने पानी का तीसरा घड़ा उसके सिर पर उँड़ेलना शुरू किया। उसे तब ही विश्वास हुआ कि सचमुच वह स्वर्ग में नहीं चला गया है।

वह निरुद्देश्य-सा एकटक अपनी पत्नी को देखने लगा, जो लगातार ठंडे पानी के घड़े, एक के बाद एक, उसके सिर पर उँडेलती जा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रही थी। एकाएक उसे देखते ही देखते वह ज़ोरों से खिलखिला उठा और दूसरे क्षण बेसुध हो कर फ़र्श पर लुढ़क गया। वह निश्चित रूप से अर्धविक्षिप्त हो गया था और एक ब्राह्मण को जीवित जला देने की बात उसकी विक्षिप्तावस्था को क्रमशः बढ़ा रही थी!

दो पहर रात बीतने पर बीरबल सुरंग के मार्ग से अपनी हवेली में आ पहुँचा और सुबह के धुँधलके में, काली पोशाक पहन कर अकेला ही पैदल जंगल की ओर निकल पड़ा। ....

......और इस तरह ठीक पाँच दिनों तक—स्वर्ग की खोज में तो नहीं—मुमुक्षु की तरह वन-ग्राम-नगरों में पैदल भटकते हुए कविराज बीरबल, छठे दिन अपने गाँव पहुँच पाया; इस बीच कहीं भी, किसी ने उसे रोका-टोका नहीं। चाचा और चाची तो छः दिनों से विवाह की सब तैयारियाँ कर के उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

गाँव की सीमा से अपने घर तक पहुँचने तक किसी ने उसे पहचानने की कोशिश भी नहीं की, और यदि पुराणी चाचा भी "वाह बेटा!" की पुकार से उसका स्वागत नहीं करता तो संभवतः लखिया चाची भी उसे नहीं पहचान पाती!

इन सात दिनों में उसकी दाढ़ी काफी बढ़ चुकी थी अथवा कह सकते हैं कि "स्वर्ग-मार्ग" की ज्ञान-प्राप्ति के लिए प्राचीन ऋषि-मुनियों की तरह बीरबल ने जानबूझ कर दाढ़ी बढ़ाई थी।......जब पूर्व सूचनानुसार सातवीं रात को तीसरे पहर, काली माँ के मंदिर के मन्द-प्रकाश में उमा ने "युग-युग" जैसी प्रतीक्षा के बाद, बीरबल... नहीं, महेश पंडित को अपने अति समीप आते देखा तो वह भी उसके वेश को देख कर क्षण भर के लिए चौंक गई। बहुत-सी "सार्थक" और "निरर्थक" बातों में दोनों ने अपने महीनों रुके हुए उद्गार व्यक्त किये किन्तु इस बीच न तो उमा ने उससे दाढ़ी बढ़ाने का कारण पूछा, न बीरबल ने बताया ही।

किन्तु उमा के प्रति, अपनी बढ़ाई हुई दाढ़ी के लिए, उत्तरदायी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

न होते हुए भी "कन्या" के पिता और समाज के लिए बीरबल अवश्य उत्तरदायी था।

विवाह-मुहूर्त्त से दो घड़ी पहले पंडित रमानाथ ने इसी बात पर सारे गाँव में कुहराम मचा दिया; पराजित क्रोध में, अपने काँपते हुए हाथों को उछाल कर वे चिल्लाए—'इस दाढ़ीवाले निकम्मे म्लेच्छ को मैं अपनी गुणवती कन्या सौंप दूँ! शास्त्र-विरुद्ध, बिलकुल शास्त्र-विरुद्ध है! यह विवाह नहीं हो सकता!'

बीरबल, अब तक आरोपों को सुनते हुए भी चुप बैठा था, किंतु "शास्त्र" का नाम सुनते ही वह उठ खड़ा हुआ—"पंडितजी, आप अपनी कन्या मुझे सौंपना चाहते हों तो इस दाढ़ी को भी स्वीकार करना होगा। क्या हमारे प्राचीन आचार्यों, विश्वामित्र, वशिष्ठ, अत्रि या जमदग्नि को दाढ़ी नहीं थी? क्या उन लोगों ने विवाह नहीं किये? मेरी दाढ़ी का अपमान करके स्वयं आप शास्त्र-विरुद्ध बोल रहे हैं!' बीरबल की इस दलील ने सबों के मुँह बन्द कर दिये।

चिरआकांक्षित उमा का हाथ, जब किसी ने, संसार के सामने पहली बार अपने हाथ में लिया तो उमा के सारे शरीर में सिहरन दौड़ गई, उसने कनखइयों से देखा—वर्षों से जिस सुकोमल मुख की आकांक्षा की थी वह इस समय दाढ़ी के बीच उससे कई गुना सुन्दर हो उठा था। तब आँखों और ओठों से मुस्कराकर उमा ने, मन ही मन "दाढ़ीसहित" बीरबल को स्वीकृत किया।

—❀—

(१०)

'पूरे चार महीने हो चुके बीरबलजी को गये······!'

'चार महीने और चार दिन!' अकबर ने जोधाबाई की ओर देखते हुए निश्चित मुस्कराहट से कहा, जो अकबर के अतिप्रिय गंगाजली

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

शरबत के पयमाने को, बादशाह के हाथों में थमा कर उसके समीप ही आ बैठी थी।

अपने अनुमान में "चार दिन" की भूल में जोधाबाई कुछ संकुचित-सी हुई; फिर भी बादशाह के चेहरे पर अपनी सलज्ज-विनोदमयी दृष्टि जमा कर तनिक मुस्करा कर बोली—'नाथ, वैसे स्त्रियाँ किसी के लिए "दिन गिनें" यह तो कई बार सुना है; पर कोई पुरुष किसी पुरुष के लिये "दिन-महीने" गिन सकता है,—आप जैसे बादशाह भी गिन सकते हैं—इस बात पर तो आँखों देखे भी विश्वास नहीं होता!'

'याने तुम आँखों से देखने पर भी मेरी बात नहीं मानतीं?' अकबर ने मुस्करा कर पूछा।

'आप की बात नहीं मानूँ, तब तो मुझे जीते-जी जमुना में समा जाना चाहिए·········!'

'बस, बस रानी, आगे एक शब्द भी न बोलना; अकबर राजपूतानियों से सचमुच बहुत डरता है।'

'इसे "डर" कहना तो आप का बड़प्पन है; आप वीरता का आदर करते हैं, डरते नहीं। चित्तौड़गढ़ की रक्षा के लिए शूरता से अपने प्राण निछावर करनेवाले वीर जयमल और वीर पत्ता की मूर्तियाँ अपनी राजधानी के द्वार पर बिठा कर, उनकी वीरता को पूजने का अद्भुत कार्य तो, आप जैसे "वीर-पूजक" ही कर सकते हैं, कृपानिधान!'

'·········ओह, पत्त! सत्रह साल का वह युवक!······' चित्तौड़ के समरांगण को स्मरण करते हुए अकबर बोला—'आह, कैसी वीरता थी उसकी!·····रानी, राजपूतों ने बहुत-से बलिदान दिये हैं, पर इस युवक ने तो सबों को मात कर दिया, वाह! सारी मुग़ल सेना में सब से ज़्यादा प्रशंसा उसी की, की जाती थी। धन्य हैं उसके माता-पिता!'

अंतिम वाक्य की मन्द-ध्वनि से बादशाह के चेहरे पर भी मन्द-मन्द विषाद छाने लगा, चतुर रानी बादशाह के मानसिक उतार-चढ़ाव

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

को एकटक देखने लगी । पत्त के स्मरण से बादशाह किसी गंभीर विचार में मग्न होने लगा था।

नियमित रूप से अकबर, दोपहर को भोजन के पश्चात् विश्राम लेता था, और नियमित रूप से सप्ताह के सातों दिन अलग-अलग वाद्य-यन्त्र, बादशाह के विश्राम को शांतिमय बनाने के लिए बजाए जाते थे। आज कर्नाटक की वीणा-वादिनियाँ, अपनी वीणा की कंपित रागिनी से बादशाह की निद्रा और महल के वातावरण को अधिक शान्तिमय बनाने का प्रयास कर रही थीं। किन्तु पत्त के स्मरण ने बादशाह की नींद को उचाट दिया था; वह स्वगत-सा बोला—'रानी, बीरबलजी कहते थे; बाप जैसे ही बेटे होते हैं; मैं भी कहता हूँ कि बेटा, बाप के समान ही होता है, और तुम भी यही कहती हो.....पर इसमें सचाई कितनी है ?'

'सचाई के आधार पर ही तो विद्वानों ने कहावतें बनाई हैं महाराज ! अनेक अनुभवों के बाद एक कहावत बनाई जाती है। कहावतें ज़्यादातर सच ही होती हैं !' अकबर के इस सशंकित विषय ने जोधाबाई को भी सशंकित कर दिया; उसके चेहरे पर भी विषाद ने अपनी हलकी छाया फैला दी।

बादशाह को सन्तानें होती थीं किन्तु जन्म लेते ही मर जाती थीं। इसके निवारण की ही आकांक्षा ले कर जब बादशाह, एक पहाड़ पर ठहरे हुए औलिया सलीम चिश्ती के दर्शनों को एक दिन पहुँच गये तो औलिया ने प्रसन्न हो कर बादशाह को तीन पुत्रों का पिता होने की दुआ दी। प्रकृति ने भी औलिया के वचनों को सिद्ध होने दिया। कुछ दिनों बाद जोधाबाई ने एक पुत्र प्रसूत किया और बादशाह ने सलीम चिश्ती की दुआ के नाम पर पुत्र का नाम भी "सलीम" रखा। सलीम के बाद बादशाह को और भी पुत्र हुए किन्तु बादशाह को सलीम के जन्म से ही विश्वास हो चला था कि सलीम ही उसकी वंश-परम्परा को जारी रखेगा। सलीम बचपन से ही बादशाह के अत्यंत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्नेह का पात्र था और स्नेहवश होकर बादशाह कई बार उसे "शेखू-बाबा" कह कर भी पुकारता था।

"शेखूबाबा" क्षत्रिय माँ का पुत्र और मुग़ल श्रेष्ठ पिता का कुल-दीपक था। एक सरदार के जन्मजात गुण उसकी नस-नस में विद्यमान थे। बचपन से ही उसे शिकार का शौक़ था। अनेक दृष्टि से वह पिता के स्वभाव से विपरीत स्वभाव ले कर मुग़ल वंश में पैदा हुआ था। यद्यपि विद्याध्ययन में उसकी बुद्धि तीव्र थी तथापि अकबर की-सी ज्ञान-पिपासा, साम्राज्य की विस्तृत महत्त्वाकांक्षा, वीरोचित उदारता और परायों को अपना बनाने की अकबर की-सी मृदुता और रीति-नीति का सलीम के स्वभाव में नाममात्र को भी प्रादुर्भाव नहीं हुआ था। अकबर बहुत सूक्ष्मता से सलीम की उम्र के साथ ही साथ एक स्वाभाविक निर्दयता और दम्भ को उसमें बढ़ता हुआ देख रहा था इसीलिए एक पिता के हृदय की महत्त्वाकांक्षा के अनुसार अकबर चाहता तो था कि उसका पुत्र उससे सवाया हो, किंतु सलीम के आचार-व्यवहार से कभी-कभी उसे घोर निराशा होती थी, इस बात को जोधाबाई की ही तरह बीरबल भी जानता और समझता था। इसलिए जब जब इस बात को सोच कर अकबर का हृदय विषादमय हो जाता था, तब तब कविराज बीरबल अपने विशिष्ट ढंग से उस बात को चालाकी से बहला कर बादशाह के विषाद को विनोद में बदल देता था। यह बात भी जोधाबाई अच्छी तरह से जानती थी, और यह भी जानती थी कि स्वयं उसमें बीरबल की-सी सामर्थ्य नहीं है!

और ऐसी ही अनेक दुश्चिन्ताओं के मर्म पर प्रहार करने की कुशलता बीरबल ही जानता था; बादशाह के दुःख के समय हँसाने और सुख के अवसर पर बुद्धिमत्तापूर्ण समस्याओं के निराकरण की कला ने बादशाह के मन-मस्तिष्क को सम्पूर्ण रूप से बीरबल के आधीन कर दिया था; यही उनकी अटूट मित्रता का सबसे बड़ा कारण था। आज यह स्वाभाविक ही था कि, जो बीरबल राजदरबार में और राज-दरबार के बाहर भी अकबर की असंख्य राजनैतिक और व्यक्तिगत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पहेलियों को चुटकियों में हल कर देता था, वह गत चार महीनों से उसके साथ नहीं है और इसीलिए अकबर को जिस कमी का तीव्र अनुभव हो रहा है, उसे जोधाबाई किसी भी तरह परिपूर्ण नहीं कर सकती; इस समय जोधाबाई, अकबर को एकटक देखती रहकर इसी बात का अनुभव कर रही थी।

यह भी सच था कि इन दिनों सलीम की उद्दण्डता और दम्भ शनैः शनैः बढ़कर एक भद्दा रूप धारण करता जा रहा था। साफ़ और सीधे तौर पर उसे समझा देना मर्यादा-वर्जित था और धमका कर समझाना और भी कठिन था। इन दिनों सलीम की यही समस्या बादशाह और जोधाबाई दोनों के लिए क्षोभ का कारण थी।

इस समय मेवाड़ी राजपुत्र पत्त की बात छिड़ने पर, बादशाह "शेख़ू-बाबा" के भविष्य की चिन्ता में खो गया है। यह बात जोधाबाई से छुपी न रही; उसने जान-बूझ कर विषयान्तर करते हुए पूछा—'महाराज, सुना है, आज दीवाने ख़ास में एक बहुत बड़े प्रश्न पर चर्चा होगी ?'

'हाँ, शतरंज के उन पाँच राजाओं में रेवा-नरेश भी एक हैं! वे हमारे आदर-सम्मान में तो किसी तरह की कमी नहीं रहने देते; हर बार अपने राजकुमारों को हमारे दरबार में भेज देते हैं, पर वे ख़ुद कभी नहीं आते! न जाने क्यों, मातहत हो जाने पर भी, यह हार उन्हें हमेशा चुभती रहती है....अकबर का, दोस्ती के लिए बढ़ाया हुआ हाथ उन्हें शाही क्रोध में थर्राता हुआ दिखाई देता है।'

'पर महाराज, रेवा-नरेश यह भी तो बख़ूबी जानते हैं कि सम्राट् अकबर चाहें तो उनकी सभी छुपी तैयारियों को सात दिनों में मटिया-मेट कर सकते हैं!' बादशाह की प्रारम्भिक उत्तेजना को शान्त करने के लिए जोधाबाई ने कहा।

'इस बात को तो वे भी जानते हैं, और मैं भी समझता हूँ रानी! लेकिन मैं इस वक्त उन पर ताक़त आज़माना नहीं चाहता और यह भी नहीं चाहता कि वे अपना मनमाना ढंग बरतें!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'यह आप उन्हीं के लिए फ़रमा रहे हैं, या सबों के लिए ?' जोधाबाई ने अर्थपूर्ण दृष्टि से पूछा।

'सबों के लिए !' बादशाह ने बैठक पर से उठते हुए मानो अपना निर्णय सुना दिया और पोशाक बदलने के लिए शयन कक्ष की ओर चला गया।

इस समय जोधाबाई की युक्ति सफल सिद्ध हुई; उसने रेवा-नरेश की बात छोड़कर, अकबर के मस्तिष्क में से, सलीम और बीरबल के विचारों को उसी समय दूर कर दिया था।

आज बादशाह के निमन्त्रण से सारे साम्राज्य के मुख्य अमीर-उमराव, फतहपुर-सीकरी के मुख्य "दीवाने ख़ास" में इकट्ठे हुए थे; पूर्व और पश्चिम के युद्ध-कुशल सिपह-सालार भी बादशाह के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। किसी भी युद्ध के विषय में तत्काल-निर्णय से ये सभी परिचित थे; अपने साम्राज्य के किसी भी भाग में, मामूली-सा विग्रह भी बादशाह का ध्यान अपनी ओर खींच लेता था। इन दिनों यह विग्रह रेवा-नरेश का स्वच्छन्द विचार था, जिसके लिए ये सभी सिपह-सालार अपना अपना मत देने के लिए तैयार थे !

"दीवाने-ख़ास" में आते ही बादशाह ने रेवा-नरेश की चर्चा शुरू कर दी और बादशाह, इस विषय में हरएक व्यक्ति के अभिप्राय को बहुत ध्यान-पूर्वक सुनने लगा।

ख़ानख़ाना ने कहा—'हुज़ूर, सिर्फ रेवा-नरेश ही क्यों, डूँगरपुर, चोरा, और नगरकोट के सब राजा और सुलतान भी, ख़ुद आने के बदले अपने शाहज़ादों को भेजकर आहिस्ता आहिस्ता जहाँपनाह की ख़िदमत में से दूर होते जा रहे हैं !'

राजभक्त हक़ीम ने अभिमत दिया—'और ऐसा भी तो नहीं है हुज़ूर कि ये लोग बादशाह की ख़िदमत के क़ाबिल ही नहीं हैं !'

तब वीरवर राजा मानसिंह ने अपने ढंग से सलाह दी—'हुज़ूर, अब तो फ़ौज को ही कूच कर देना चाहिए !'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और राजा भगवानदास और कूटनीतिज्ञ टोडरमल ने भी राजा मानसिंह का समर्थन करते हुए रेवा-नरेश को उचित राजदण्ड दिये जाने की सलाह दी।

तब, ईरान के शाह को भी, अकबर की तलवार की अपेक्षा अपनी लेखनी से अधिक प्रभावित करने वाले साहित्य-मनीषी महामंत्री अबुल-फ़ज़ल ने अपनी गम्भीर शैली में कहना शुरू किया—'ग़रीब परवर, एक बार जीते गये राजाओं को फिर से जीतना तो ठीक नहीं, लेकिन बद-तमीज़ को सजा भी मिलनी ही चाहिए !'

अभी तक शायरों के शायर फ़ैज़ी ने एक शब्द भी मुँह से नहीं निकाला था; बादशाह ने उसकी ओर मुख़ातिब होकर पूछा—'आप क्यों चुप हैं शेख़जी ?'

'हुज़ूर इस समय कविराज बीरबल यहाँ होते तो...सब से पहले वे ही बता देते—साम, दाम और भेद !'

कुछ ही क्षण पहले जिस नाम को अकबर भूल पाया था, वही नाम लेकर फ़ैज़ी ने वहाँ के गम्भीर वातावरण को यकायक हलका बना दिया। बादशाह ने हृदय से मुस्कराकर फ़ैज़ी की ओर देखा, और सबों ने देखा कि बीरबल की स्मृति मात्र ने बादशाह के मुख को कितना प्रफुल्लित कर दिया था ! अब तक सरदारों को इस बात का विश्वास ही था, आज उन्हें इसका प्रत्यक्ष अनुभव हुआ। बादशाह ने स्मृति में खोते हुए कहा—'हाँ, शेखजी अगर आज कविराज यहाँ होते तो—! खुदा उन्हें स्वर्ग में क़ामयाब करे !'

'हुज़ूर...?'

'जहाँपनाह...!'

'....आलीज़ाह !!'

टोडरमल, ख़ानख़ाना और राजा मान सिंह एकसाथ चीख़-से उठे !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बादशाह को ज़ोरों से हँसी आ गई; हँसी रोककर वह बोला—'अरे हाँ, राजाजी यह तो मैं भूल ही गया कि आप सब लोग तो युद्ध के मैदान से ही सीधे यहाँ चले आ रहे हैं। आप शायद यह बात नहीं जानते।....दर असल बात यह है कि कविराज बीरबल हमारे पुरखों के कुशल समाचार पूछने के लिए स्वर्ग को गये हैं; हमारे बहुत से सरदार भी अपने पुरखों के समाचार जानने के लिए बहुत आतुरता से उनकी राह देख रहे हैं!...टोडरमल जी, आप नहीं थे उस रात को, ...नहीं तो मैं समझता हूँ, आप जैसे धर्मात्मा पुरुष भी वहाँ जा सकते थे...'

'ना हुज़ूर...' टोडर मल के मुँह से यकायक निकल गया—मुझ में इतनी हिम्मत कहाँ? यह तो बीरबलजी का ही काम है, मैं ऐसे ही अपनी हार माने लेता हूँ!' सब लोग हँस पड़े।

राजा मानसिंह को ऐसे विनोद से चिढ़ थी; उन्हें बादशाह की बात बिलकुल समझ में नहीं आ रही थी; तनिक अकुलाकर पूछ बैठे—'हुजूर, आपकी बात का मतलब क्या है?'

बादशाह, मानसिंह के मतलब को समझ गया। कुछ सोचकर बोला—'राजाजी, अगर कविराज बीरबल यहाँ होते...'

'हाज़िर है जहाँपनाह!' अकबर की बात काटकर किसी ने बोलने का साहस किया था; सबों ने चौंक कर नीचे की ओर देखा, और देखते रह गये—द्वार के पास, अपनी लम्बी दाढ़ी से सुशोभित कविराज बीरबल खड़ा था। बादशाह को देखते ही बन्दगी करके वह अन्य सरदारों के पास आकर बैठ गया।

बीरबल को देखते ही अकबर की इच्छा हुई कि वह उसे दौड़कर सीने से लगा ले, किन्तु मर्यादा का ध्यान आते ही वह अपनी भावनाओं को दबा पाया। किन्तु चेहरे पर की ख़ुशी और वाणी की उमंग छुपी न रही—'हज़ारों बार मुबारक कविराज! कहो कैसी रही?... ऊपर स्वर्ग में तो सब सकुशल हैं न?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

फ़ैज़ी, अब तक बीरबल के मुख को देखने में निमग्न था। उसकी ओर आँखों से संकेत करके बीरबल बोला—'हुजूर, वैसे तो सब कोई मजे में हैं; पूर्वजों ने आपको बहुत बहुत आशीर्वाद भेजे हैं, कहा है—आप अमर रहेंगे !...बस, उन्हें एक ही बात का दुःख है, हुजूर !'

'वह ऐसी कौन-सी बात है, कविराज ?' बादशाह ने अर्थपूर्ण स्वर में पूछा।

राजा मानसिंह और हकीम को बादशाह और बीरबल की इन निकम्मी बातों से चिढ़ थी; उन्होंने अपना ध्यान वहाँ से हटाना चाहा ! किंतु फ़ैज़ी और अबुलफ़ज़ल इन बातों में बहुत रस लेते थे, यह जानकर कि बीरबल की ऐसी ही बातों से बड़े बड़े मतलब हल हो सकते हैं। वे ध्यान-पूर्वक बीरबल का उत्तर सुनने लगे।

बीरबल ने बादशाह के प्रश्न को अति गंभीर रूप देकर बहुत ही गम्भीरता से कहा—'महाराज, आप मेरा चेहरा तो देख ही रहे होंगे, देखिये दाढ़ी कितनी बढ़ गई है मेरी ! स्वर्ग में इन दिनों एक अच्छे हज्ज़ाम की सख़्त ज़रूरत है ! हमारे पुरखों ने अर्ज़ किया है कि खास तकलीफ न हो तो बादशाह-सलामत अपने ही हज्ज़ाम को स्वर्ग में भिजवा दें....कालिया हज्ज़ाम जाए तो ख़ास हर्ज़ नहीं होगा !'

'तो कल ही उसे भिजवाने का बन्दोबस्त किया जाएगा। क्यों, ठीक है न यूसुफ़ ख़ाँ ?'

यूसुफ़ख़ाँ की दशा कुछ विचित्र-सी हो रही थी; उसका चेहरा, बीरबल को देखते ही रुई की तरह सफ़ेद हो गया था। बीरबल के अचानक आने और उसकी इन टेढ़ी-मेढ़ी बातों से उसे विश्वास-सा हो चला था कि अब भण्डा-फोड़ होने में अधिक देर नहीं। उसका कलेजा ज़ोरों से काँप रहा था। बादशाह के पूछने पर उसने समर्थन में अपना सिर झुका दिया क्योंकि वैसी अवस्था में एक शब्द भी मुँह से निकालना उसके लिए अत्यन्त कठिन था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तब तिरछी दृष्टि से बीरबल की ओर देखकर पूछा—'अच्छा, तो हमारे दूसरे सरदारों के पुरखे किस तरह हैं ?'

'वे सब भी बहुत मज़े में हैं, लेकिन जहाँपनाह, उन्होंने भी एक अर्ज़ की है !'

वह भी कह डालिये न बीरबल जी, रुक क्यों गये आप ?' अकबर ने उत्कण्ठा के साथ पूछा ।

'उन्हों ने अपने वंशधारी सरदारों को कहलाया है कि वे पाप करते हैं तो कोई बात नहीं, पर साथ ही साथ दान-पुण्य भी किया करें, क्योंकि उन्हें इन दिनों दान तो बिलकुल ही नहीं पहुँचता ।'

'सरदारो, सुन लिया आप लोगों ने ?' यूसुफ़ के साथी सरदारों की ओर देखकर अकबर ने हुक्म दिया—'यूसुफ़ ख़ाँ, धरमपुर और ख़ैरातपुर में ग़रीब मुफ़लिसों के लिए खाना वग़ैरह पहुँचाने का इन्तज़ाम किया जाय । यूसुफ़ ख़ाँ, इसके लिए फ़िलहाल पचास हज़ार काफ़ी होंगे न ?

'जैसा जहाँपनाह का हुक़्म हो !' यूसुफ़ ख़ाँ के मुँह से ये शब्द बहुत प्रयत्नों के बाद निकल पाये—'कल ही पचास हज़ार वहाँ भिजवा दिये जाएँगे !' बादशाह के उस हुक्म से उसके शिथिल तन-मन को पुनर्जीवन मिला; वह उठ खड़ा हुआ ।

किन्तु यूसुफ़ ख़ाँ को खड़े हुए देखकर बादशाह ने अपने सबसे पहले हुक्म को बहुत ही मामूली ढंग से दुहरा दिया—'और देखो, कालिया को स्वर्ग में भेजने का इन्तज़ाम जल्दी कर दिया जाय !'

सारे सरदार आश्चर्य-चकित होकर बादशाह को देखने लगे ।

यूसुफ़ ख़ाँ ने कुछ सोच-समझ कर और अपनी घबराहट छुपाकर बादशाह के हुक्म को स्वीकार किया—'जैसा जहाँपनाह का हुक्म हो !' वह फिर बैठ गया ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बादशाह के पहले हुक्म से यूसुफ़ ख़ाँ को कुछ क्षणों के लिए सन्तोष और चैन का अनुभव हुआ था, किन्तु दूसरे हुक्म की घबराहट में, वह सन्तोष और चैन एक ही क्षण में घुलघुल कर जाने कहाँ विलीन हो गया। वैसे बीरबल के एक विनोद के पीछे पचास हज़ार निछावर हो जाने का उसे अधिक दुःख नहीं था किन्तु कालिया हज्ज़ाम को स्वर्ग में भेजना तो एक बहुत बड़ी समस्या थी। इतने दिनों तक वह और उसके साथी सरदार, सिर धुन धुन कर थक गये किन्तु पता न लगा सके कि बीरबल ने कोई चालाकी की है या सचमुच ही मर चुका है! और कुछ दिनों से यूसुफ़ की मंडली को एक तरह से विश्वास ही हो चला था कि बीरबल अब सदा के लिए उनकी राह से हट चुका है; यह सोचने के बाद इन दिनों उनकी आशा-उमंगों का पार न था।

बीरबल को राजकाज की पूरी जानकारी मिलती रहती थी; आज की चर्चा के विषय से भी वह अनभिज्ञ न था। जब फ़ैज़ी ने आज की बात-चीत को प्रगति से उसे अवगत कराया, और बादशाह ने भी अर्थपूर्ण दृष्टि से बीरबल की ओर देखा तो उसने बहुत शांतिपूर्वक कहना शुरू किया—'जहाँपनाह, पहले साम दाम, और भेद—!'

बादशाह तीक्ष्ण दृष्टिसे बीरबल की ओर देखने लगा। राजा मानसिंह को वैसे ही बीरबल की विनोदी बातों से चिढ़ थी। हकीम और राजा टोडरमल भी राजा मानसिंह के इस विचार के कट्टर समर्थक थे। राजनैतिक समस्याओं में हास्यविनोद उन्हें बिलकुल पसन्द नहीं था। एक तो राजा मानसिह "स्वर्ग" के प्रकरण से वैसे ही चिढ़ा बैठा था उसपर बीरबल की यह औंधी सलाह! उसने खीझकर बीरबल से कहा—'कविराज, रेवा-नरेश आन-बान वाला क्षत्रिय है, ब्राह्मण नहीं—और उसके लिए केवल एक ही उपाय है—तलवार!'

'रेवा-नरेश के घमंड का इलाज युद्ध के सिवा है ही नहीं!' टोडरमल ने समर्थन किया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'रेवानरेश एक ज़िद्दी वीर है.....और कवि, बादशाहत तलवार के बलपर ही खड़ी रह सकती है!' ख़ानख़ाना ने कवि को समझाने का प्रयत्न किया।

'लेकिन बादशाहत की ताक़त का निबाह तो शांति पर होता है! जहाँपनाह के उस्ताद के भी ये ही बोल हैं—'सुलह—ए—कुल' याने सबों के साथ सौजन्य का व्यवहार किया जाना चाहिए!' बीरबल ने अकबर को उसके बचपन के उस्ताद लतीफ़ साहब की याद दिलाई।

बीरबल की इस बात पर राजा मानसिंह, संपूर्ण रूप से धैर्य्य खो बैठा। उसने तनिक ऊँची आवाज़ से कहा—'बीरबलजी, बलवान राजा लोग शांति और बुद्धि की बातों को ठुकराना खूब जानते हैं, शक्ति ही उनका ध्यान अपनी तरफ़ खींच सकती है..' फिर बादशाह की ओर देखकर बोला—'जहाँपनाह, जल्द से जल्द फ़ौज़ रवाना की जाय; रेवानरेश को इस समय दंड की ज़रूरत है!'

और बीरबल ने भी दृढ़तापूर्वक कहा—'हुज़ूर, जहाँ तक हमारा बस चले, लड़ाई की बातें टालनी चाहिए!'

'स्वयं राजा रामचन्द युद्ध करना चाहता है!' टोडरमलने कहा।

'हुज़ूर, युद्ध ही—बस!' राजा मानसिंह ने तीव्र समर्थन किया।

'मूँछें मुंडा दूँ ग़रीबपरवर, अगर रेवा-नरेश शांति से यहाँ आ जाए तो!' कल्याणमल हुज़ूरिये ने जोश में आकर अपना होश—हवास गँवा दिया और यकायक खड़ा होकर अपने उद्गार निकाल बैठा। किंतु जब उसे दरबार की बेअदबी का ध्यान आया तो शर्म से सिर झुकाकर वहीं खड़ा रहा। अक़बर कुतूहल-पूर्वक कल्याणमल को देखने लगा; उसे उसके जोश पर क्रोध न आया।

बीरबल ने कल्याणमल के जवाब में, दृढ़ता और शांतिपूर्वक कहा—'वे अवश्य आएँगे!'

'नहीं हुज़ूर, यह ग़लत-फ़हमी है। रेवानरेश किसी भी हालत में यहाँ नहीं आएँगे!' हकीम और राजा मानसिंह ने एकसाथ चिल्लाकर कहा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'मैं उन्हें लेकर आऊँगा !' बीरबल ने शांतिपूर्वक उत्तर दिया।

'हमें मंजूर है !' बादशाह ने सारे सरदारों को आश्चर्य में डालते हुए कह डाला, जो अब तक उनकी शाब्दिक मुठभेड़ को ध्यान-पूर्वक देख रहा था।

बादशाह भलीभाँति जानता था कि राजनैतिक समस्याओं पर बीरबल का इस तरह वादविवाद या हस्तक्षेप करना फ़ैज़ी को छोड़कर किसी को पसन्द नहीं है। राजा मानसिंह और ख़ानखाना जैसे सिपह-सालारों पर होने वाली प्रतिक्रिया को तो वह स्पष्ट ही देख रहा था, फिर भी न जाने क्यों बीरबल के निर्णय दे चुकने के बाद उसे और बात बढ़ाना उचित प्रतीत नहीं हुआ। बीरबल, अकबर के दरबार में आने के बाद पहली बार आज इतने बड़े बड़े मनसबदारों और अकबर के सामने इतने अधिकार-पूर्वक बोला था। सभी दरबारी आश्चर्य चकित और क्षुब्ध थे, बीरबल के इस क्रांतिमय परिवर्तन को देखकर। क्योंकि आज से पहले सभी राजनैतिक प्रश्नोंपर वह बिलकुल मौन रहता था, यहाँ तक कि बादशाह के आग्रहपूर्वक पूछने पर भी वह दरबार में कुछ न कहकर एकांत में मित्र की तौर पर ही, जो बात बादशाह पूछना चाहता हो, उसका निराकरण करता था।

क्षोभ के वातावरण के बीच, बादशाह, फ़ैज़ी और अबुलफ़ज़ल को छोड़कर सबों को विश्वास हो गया कि बादशाह ने बीरबल को स्वीकृति देकर बड़े बड़े राजनैतिक प्रश्नों को भी मज़ाक का रूप देकर; समय और राजसत्ता को शनैः शनैः बरबाद करने की स्वीकृति दे दी है। राजा मानसिंह और हकीम ने भी सोच लिया कि बीरबल का यह हास्यास्पद प्रयत्न, एक साधारण राजपूत राजा के हाथों बादशाह का अपमान करा-कर रहेगा।

उधर युसुफ़ख़ाँ और उसके साथी सरदारों का क्षोभ, भयानक आघात के सदृश था। उन्हें विश्वास हो चला था कि यह ब्राह्मण बीरबल सबों को हँसाते हँसाते गंभीर रूप लेता जा रहा है, और जल्द ही "अमीर"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बनकर यह दूसरे सरदारों को मात करके दरबार में एक मुख्य स्थान पा लेगा।

यह रुक्ष चर्चा समाप्त होते ही तानसेन ने धीरे से अपना गीत शुरू किया और उसी क्षण बादशाह को ध्यान आया कि तानसेन पहले रेवा-नरेश का ही आश्रित और परम मित्र था और उन्होंने ही तानसेन को अकबर के दरबार में भेजा था। बादशाह ने मुस्करा कर पूछा—'तानसेनजी, आपने अपना अभिप्राय नहीं दिया ?'

बादशाह के प्रश्न का उत्तर, संगीत मग्न तानसेन ने अपने गीत में ही देना ज़ारी रखा। गीत का मर्म था—'इस संसार में प्रेम के समान अजेय शक्ति किसी वस्तु में नहीं है; सच्ची जीत, संहार में नहीं, प्रेम में है।'

एक दाँव हारने के बाद जुआरी, दुगनी रक़म से दूसरा दाँव खेलता है।

अब यूसुफ़ख़ाँ की वैरवह्नि, भयंकर ज्वाला का प्रचंड रूप धारण कर चुकी थी। बीरबल उसके षड़यंत्रों को मात पर मात देकर उसकी क्रोधाग्नि में घी उँड़ेल रहा था। बीरबल ?...बीरबल उसके मन-मस्तिष्क और आँखों में कंटक की तरह चुभ रहा था! जब इन्हीं विचारों की उथल-पुथल में पैर पछाड़ पछाड़ कर यूसुफ़ख़ाँ कमरे के फ़र्श पर "भूकम्प" मचा रहा था, उसी समय सिसकियाँ भरता हुआ कालिया हज्जाम आकर उसके पैरों पर अपना सिर पछाड़ने लगा—'सरकार, मैं तो स्वर्ग को चला! हुजूर अब मुझे स्वर्ग भेजे बिना न रहेंगे! सरकार, मैं ग़रीब बाल बच्चों वाला हूँ...आपही के कहने पर मैंने हुजूर से बात कही थी, अब आप मुझे नहीं बचाएँगे तो मैं... तो मैं...

'तो क्या करेगा तू ?' आँखों में आग भर कर यूसुफ़ ने कालिया की ओर देखी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यूसुफ़ का यह रूप देख कर कालिया अवाक् हो गया, किंतु दूसरे ही क्षण यह विचार आते ही कि वह भी बादशाह का हज्ज़ाम है, तनिक हिम्मत बँधी; बोला—'मैं ग़रीब कर ही क्या सकता हूँ, सरकार लेकिन सरकार! अगर मैं हुज़ूर से सच सच कह दूँगा तो मेरी जान नहीं बचने की?

'पीस डालूँगा कमबख़्त!' दाँत पीसते हुए यूसुफ़ ने कहा, मानो उसका लहू पी डालेगा!

'सरकार, अभी तो मुझे स्वर्ग में जाना बाकी है! अब आप मुझे नहीं मार सकते—मैं शाही अमानत हूँ!' चालाक कालिया बादशाह को बीच में डालकर छूटक गया।

बादशाह के फ़रमान का ध्यान आते ही यूसुफ़ कुछ शांत हुआ, क्यों कि कालिया को मरवा डालना स्वयं उसके लिए खतरनाक था। कालिया ने अपने इनाम के पचास हजार रुपये यूसुफ़ के पास ही रख छोड़े थे। रुपयों की याद दिलाकर उसने कालिया से कहा—'ले जा ये रुपये और भाग जा कहीं...डूब मर! किसी तरह यहाँ से अपना मुँह काला कर!'

यूसुफ़ बाहर जाने को पैर बढ़ाना ही चाहता था कि कालिया ने पुनः उसके पैर पकड़ कर गिड़गिड़ाना शुरू किया—'लेकिन सरकार, हुज़ूर ने बहुत से छुपे भेदिये मेरे पीछे छोड़ रखे हैं...अब मुझे चिता पर चढ़ना ही होगा!...'

'मैंने कह दिया न एक बार! ये अपनी रक़म ले और निकल जा यहाँ से! और यूसुफ़ उसी तरह पैर पछाड़ता हुआ बाहर चला गया।

कालिया को चारों ओर चिता ही चिता दिखाई देने लगी; यूसुफ़खाँ की सारी हवेली उसे ज्वालामयी प्रतीत हो रही थी। आँखें पोंछता और सिसकियाँ भरता हुआ वह जल्दी जल्दी हवेली के बाहर निकल आया। किंतु उसकी मानसिक उथल-पुथल की तरह हवेली के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाहर के राजमार्ग पर भी उसे जोरों का कोलाहल सुनाई दिया। अच्छी तरह दोनों आँखें पोंछ कर उसने देखा कि एक मस्त हाथी अपने मस्तक पर दोनों ओर दो तम्बूरे लटका कर झूमता हुआ चला जा रहा है और उसके आगे आगे बहुत से सिपाही दो शाही गवैयों को पकड़ कर शाही महल के उस झरोखे की ओर घसीटे लिए जा रहे थे, जहाँ अकबर नियमित रूप से प्रजा से मिलने के लिये बैठा करता था।

बात यह थी कि कुछ दिनों पहले उन गवैयों की संगीत-विद्या पर प्रसन्न होकर, अकबर ने एक क़ीमती हाथी इनाम दिया लेकिन हाथी का भरण पोषण करना उन ग़रीब गवैयों की शक्ति से बाहर की बात थी। कुछ दिनों तक तो वे ज्यों त्यों चलाते रहे किंतु आखिर एक दिन ऊब कर वे बीरबल के पास गये। बीरबल ने उन्हें हाथी से छुटकारा पाने के लिए एक युक्ति दिखाई।

दूसरे ही दिन गवैयों ने उस युक्ति पर अमल करके हाथी को स्वच्छन्द छोड़ दिया और बन्धन में से छूटते ही भूख से चिढ़े हुए हाथी ने शहर में घूम घूम कर लोगों का नुक़सान करना शुरू कर दिया, शाही सिपाहियों ने हाथी के साथ साथ गवैयों को भी पकड़ कर बादशाह के सामने हाजिर कर दिया।

बादशाह ने चिढ़कर गवैयों से पूछा—'क्यों उस्तादो! हाथी को इस तरह छोड़ कर मेरी बेइज़्ज़ती करने की ठानी है?

'इससे तो मर जाना बेहतर है जहाँपनाह!' गवैयों ने दयनीय बनकर गिड़गिड़ाया—'बात यह है हुज़ूर—कुछ दिनों तक हमने हाथी को अपने पास रखा और अपनी संगीत विद्या उसे अच्छी तरह सिखाई। विद्या सीख चुकने के बाद हमने दो सुन्दर तम्बूरे देकर इससे कहा कि गाँव-गाँव और गली गली घूमकर हमारे बादशाह सलामत के गुणगान कर! हुज़ूर, बेचारे इस हाथी की भाषा कोई समझता नहीं इसलिए लोग इसे सताते हैं और यह बेचारा अपना बचाव करते करते दूसरों का नुकसान कर बैठता है!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बादशाह ने हँसकर पूछा—'यह रास्ता तुम्हें किसने दिखलाया ?'

गवैयों ने कुछ संकुचित होकर कहा—'कविराज बीरबल ने हुज़ूर !'

बादशाह को पहले से इस बात का कुछ कुछ विश्वास हो चला था। बीरबल का नाम सुनते ही वह मुस्कराया और गवैयों को इनाम देकर, हाथी को हस्तिशाला में लौटा ले जाने की आज्ञा दी।

कालिया चुपचाप यह सब सुन रहा था; उसने आशा भरे हृदय से बीरबल के घर की राह ली।

बीरबल की हवेली को पहुँचने तक मार्ग में, कालिया के हृदय-स्थल में आशा और भय का तुमुल युद्ध चल रहा था, और उसकी आँखें चिता की ज्वालाओं की याद आते ही आँसुओं से मुंद मुंद जाती थी। किसी तरह रुदन रोक कर उसने हवेली में पैर रखा और गला साफ़ करके धीरे से बुदबुदाया—'नमस्कार, कविराज।'

वहाँ उमा भी थी और बीरबल भी; और विवाह को चार महीनों से अधिक समय नहीं हुआ था। बीरबल ने आश्चर्य से पीछे की ओर देखा और दूसरे कक्ष में आकर साश्चर्य पूछा—'अरे, तू यहाँ कैसे ?'

'कविराजजी, चार महीने से आपकी दाढ़ी बढ़ी हुई है; मैंने सोचा, आज कुछ काम नहीं है तो आपकी ख़िदमत कर आऊँ !' उसने अपना रुदन किसी तरह रोक कर, कंधे पर से अपने सामान की झोली उतारी।

'तूने तो खूब ख़िदमत की है मेरी, अब बिलकुल इच्छा नहीं है। दाढ़ी मुँड़ाने की इच्छा होगी तो अपने हाथों से मूँड़ लूँगा।'

'कविराजजी !' अब रोना रोकना उसके लिए अति कठिन था; जोरों से रोकर उसने बीरबल के पैर पकड़ लिए।

'अन्नदाता, मैं तो नरक का प्राणी हूँ, मुझे, स्वर्ग को नहीं जाना है। आप ब्राह्मण हैं, दयालु हैं..मैं..मैं.. बाल बच्चों वाला ग़रीब हूँ सरकार...!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'बाल बच्चों की चिन्ता तू किस लिए करता है? वे पचास हज़ार उनके जीवन भर के लिए काफ़ी हैं!'

पचास हज़ार का नाम सुनते ही कालिया गला फाड़ कर रो उठा—'नहीं, कविराज मुझे मरना नहीं है;-मैं मर नहीं सकता! किसी भी तरह मुझे इस बार बचा लीजिए...बहुत पुण्य होगा, ये रहे पचास हज़ार! कहकर उसने रुपयों की थैली बाहर से लाकर बीरबल के पास रख दी और हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

उमा को दया आ गई। कमरे के भीतर से ही बोली—'अरे खड़ा क्या है, हाथ जोड़े! इन्हें बिठाकर दाढ़ी मूँड़ क्यों नहीं देता, मैं पानी लेकर आती हूँ!'

कालिया को कुछ हिम्मत बँधी—'अन्नदाता, मुझे किसी तरह बचा लो और इस बार क्षमा कर दो! सच पूछो तो मेरा क़सूर बिलकुल नहीं है; उन सरदारों ने सब कुछ किया था!' कहकर उसने यूसुफ़ और उसके साथी सरदारों की करतूत का हाल अपने ढंग से नमक-मिर्च लगाकर कहना शुरू किया। बीरबल बहुत ध्यान-पूर्वक उसकी बातें सुन रहा था। उसे यह तो मालूम था कि बहुत से सरदार उसके विरुद्ध हैं, किंतु उनका ईर्ष्या-द्वेष इतनी पतित अवस्था को पहुँच सकता है, इस बात की उसने कल्पना भी नहीं की थी। कालिया के अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन में से उसने सच्ची बातें बहुत आसानी से जान लीं।

सब कुछ सुन लेने के बाद उसने कुछ देर सोच कर गंभीरता-पूर्वक कहा—'कालिया स्वर्ग में तो तुझे जाना ही पड़ेगा पर उसमें तुझे बच निकलने का एकही रास्ता है। उसमें ख़र्च बहुत होगा। पूरे डेढ़ लाख चाहिए!'

'तो डेढ़ लाख में मैं बच जाऊँगा, कविराज?' बीरबल का आश्वासन सुनकर उसकी जान में जान आई।

'तू बच तो जायेगा, पर उसके लिए एक शर्त है!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'कह दीजिये न अन्नदाता, जल्दी कह डालिए, नहीं तो मेरे प्राण हाथों में नहीं रहेंगे!'

कालिया की यह स्थिति देखकर बीरबल को हँसी आ गई। उसे कालिया के द्वारा ही सरदारों की ख़बर लेने की एक युक्ति सूझी, बोला—'कालिया, शर्त यह है कि स्वर्ग में जाने के बाद केवल ब्राह्मण ही लौट सकता है!'

'अरे सरकार, आप बिलकुल बेफिकर रहिए, ऐसा भागूँगा,..ऐसी दौड़ लगाऊँगा कि मेरा नाम-निशान भी किसी को ढूँढ़े नहीं मिलेगा! आप इसकी बिलकुल चिंता न करें। मैं अभी सरदारों से रुपये लेकर आता हूँ!'

'वे रुपये देंगे भी!' कालिया की आँखों में देखकर बीरबल ने प्रश्न किया।

'अकेले यूसुफ़खाँ ही दे देंगे। न देंगे तो जाएँगे कहाँ? उन्हें अपना पाप जो छिपाना है! मैं अभी आया सरकार!' कालिया ने वाक्य पूरा करने के पहले ही दौड़ लगा दी।

कालिया के जाने के बाद, बीरबल अपनी युक्ति की सफलता पर मौज़ में आकर कुछ गुनगुना ही रहा था कि किसी के पायल की झंकार ने उसका ध्यान बँटा दिया। उसने व्यस्त होकर पीछे देखा—वे कमल चरण स्थिर होकर भी अस्थिर थे; ऊपर देखा—ओठोंपर रहस्यमयी मुस्कान थी। आँखों में मृदु शेष भरा उलाहना-सा था और धनुष की तरह भृकुटियाँ चढ़ी हुई थीं। आँखों के उस उलाहने में डूबकर बीरबल ने सुना—'इस तरह ग़रीबों को रुला सताकर इकट्ठे किए हुए धन से कौन-सा सुख पा लोगे?'

.... बीरबल ने उसी तरह देखते हुए कहा—'इसी तरह हँसा हँसा कर काल्पी वाले पंडित चन्द्रशंकर और मुहम्मद शेख के द्वारा विद्या दान करने में मदद करूँगा, समझीं?....और निर्धन कवियों को जीवन-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दायिनी कविताओं को जीवन मिलेगा...और क़रीब दो हज़ार विधवाओं का भरण पोषण होगा...और कुछ ?'

उमा अपनी मुस्कान में हँस दी। आँखों में हँसी के साथ और भी सब कुछ भरकर उसने कवि की ओर देखा। वह अपने स्वामी के उदार हृदय से भली भाँति परिचित है।

उमा रुपयों की थैली लेने झुक ही रही थी कि एक दासी दौड़ती हुई आई और बीरबल के हाथ में एक बेर रख कर कहा—'कविराज, कोई बाहर आकर खड़े हैं। उन्होंने मुझे यह बेर देकर आप से कहलाया कि द्वापर में सुदामा ने कृष्ण जी को चावल भेजे थे, मैं कलयुग में बेर भिजवाता हूँ !'

बीरबल ने प्रश्नमयी दृष्टि से उमा की ओर देखा और उमा ने उसकी ओर। यकायक जैसे उसे कुछ स्मरण हो आया और वहाँ खड़े प्रतीक्षित पुरुष को हृदय से लगा कर चिल्ला उठा—'मेरे बाल सखा, मेरे गंग कवि ! स्वागत है, आओ भीतर पधारो !'

'हाँ कवि, मैं गंग हूँ—

तान हद्द मियाँ तानसेन, हद बुद्धि "बलबीर"।
शाहनशाहां अक़बरां—'

हँ, हँ, कविराज रहने दो यह सब ! कहो, मेरे योग्य कौन सी सेवा है ? किस लिये कष्ट किया ? अति उत्साह पूर्वक अपने इस बाल-सखा को हवेली के भीतर ले जाते हुए बीरबल ने पूछा।

'कवि, सैकड़ों ग्रामों में अकाल पड़ा है; सूखे ने असंख्य निर्धनों के प्राण ले लिये हैं, इसलिए अपने प्रिय मित्र के यहाँ उदर भरने और भोजन माँगने के लिए आया हूँ। देखो अब इनकी बारी है...!'

कवि गंग का संकेत पाकर अनेक गाँवों के मरणाभिमुख मुखिये उनके सम्मुख आकर खड़े हो गये। कवि गंग को नेतृत्त्व सौंपकर ये

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लोग बादशाह और बड़े बड़े व्यापारियों से अन्न की मदद माँगने के लिये आये थे।

उन्हें देखते ही बीरबल शीघ्रतापूर्वक भीतर गया और कालिया हज्ज़ाम की दी हुई रुपयों की थैली उठा लाया। रुपये निकाल कर उसने फ़र्श पर फैला दिए और मुट्ठियाँ भर भर कर मुखियों को देते हुए सोत्साह बोला—'लो भाइयो! ले लो; भगवान ने ही तुम्हें भेज दिया है! कवि गंग, भगवान व्यर्थ में मुझे आड़तिया बना रहा है, देखते हो न! लो, भाइयो, लो! जितना है, सब तुम्हारा है!'

बीरबल उत्साह-पूर्वक धन वितरित करता जा रहा था और यह बात सुनकर दूसरे गाँवों के प्रतिनिधिगण भी आ आकर कृतकृत्य होने लगे। अकाल-ग्रस्त भीषण मानव-मूर्तियों का वहाँ ताँता बँध गया।

तब पूजा करती हुई लखिया और चिलम फूँकते हुए पुराणी चाचा भी आश्चर्य में अवाक् होकर बाहर आ पहुँचे। अंतिम जो नौ प्रतिनिधि बच गये थे उन्हीं के पीछे आकर चुपचाप कवि केशव भी खड़े हो गये। उमा द्वार के पीछे खड़ी होकर वह सब देख रही थी; शीघ्र भीतर जाकर दो तीन और थैलियाँ ले आई और घूंघट निकालकर बीरबल के पास रखकर चली गई।

कवि केशव से अब न रहा गया; बोल उठे—

'रचि कै नृपनाथ बली बलवीर, भयो कृतकृत्य महाव्रत धारी।
दै करतारपनो कर तोहि, दई करतार दुहूँ कर तारी॥

बीरबलजी! विधात्री इस समय पछता पछता कर निःश्वास डाल रही है कि बीरबल को मैंने दो ही हाथ क्यों दिये? दाता के तो चार हाथ चाहिए! धन्य कविराज, धन्य! धन्य है शहंशाह, और धन्य है उनके ढूँढे हुए मित्र!..शतं जीव शरदः, धन्य!'

यह काम निबट जाने के बाद बीरबल और बादशाह के अन्य वज़ीर, उन अकाल पीड़ितों को लेकर शाहीमहल में जा पहुँचे। अपनी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आँखों यह स्थिति देखकर बादशाह ने शाही खज़ाने खोल देने की आज्ञा दी।..

जब दिन-प्रतिदिन, शाही ख़ज़ाने का धन अकाल-ग्रस्तों के उद्धार के लिए पहुँचने लगा तो एक दिन बादशाह को विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ कि रेवा नरेश के पास रवाना होने से पहले बीरबल ने ढाई लाख रुपये दान-धर्म में वितरित कर दिये थे। प्रजावत्सल बादशाह का कोमल हृदय यह समचार सुनकर पुलकित हुए बिना न रहा! अब बादशाह को ध्यान आया कि जो बड़े बड़े इनाम बीरबल को समय समय पर मिलते रहते थे वे कहाँ विलीन हो जाते थे! किंतु बादशाह का यह संतोष और यह पुलक, किसी दूसरे के हृदयमें पहुँच कर बैर और क्रोधाग्नि का रूप धारण कर रहा था। उसका नाम था यूसुफ़ खाँ।

---

(१२)

सहस्त्रों वर्ष में एक बार उत्पन्न होनेवाले 'तानसेन' जैसे संगीत सम्राट को आदरपूर्वक अकबर बादशाह के दरबार में भेजने वाला रेवा-नरेश राजा रामचन्द्र, जितना विनम्र-स्नेही था उतना उग्र भी था। रेवा-नरेश का यही अद्भुत स्वभाव अक़बर के अनेक मुख्य मन्त्रियों और स्वयं अक़बर की उलझन का कारण था। वैसे अक़बर भी अति उदार स्वभाव का था, किंतु रणक्षेत्र में क्रोधित होने पर वह निर्दयता का भी सीमोल्लंघन कर जाता था। अतएव कुछ अंशों में उपयुर्क्त दोनों राजपुरुषों में स्वाभाविक साम्य था और संभवतः यही कारण था कि दोनों एक दूसरे के प्रति आदर रखते हुए भी खुले मन से नहीं मिल पाये थे।

किसी कारण-विशेष को छोड़ कर प्रतिवर्ष अक़बर के दरबार में 'सलामी' के लिए जाने में रेवा-नरेश अपमान का अनुभव करता था। यद्यपि उसे इस बार अक़बर की सत्ता और समृद्धि के सम्मुख नतमस्तक होना पड़ता था, किंतु वह केवल शारीरिक पराजय थी, मानसिक नहीं!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

...और इसलिए वह केवल सैद्धांतिक रूप से; अकबर के शाही फ़रमानों को बिना विद्वेष या द्रोह के प्रमाणिकता से मानता था।

....और सच तो यह है कि यदि रेवा-नरेश के पास पर्याप्त रूप से अस्त्र-शस्त्र होते तो वह आजीवन अकबर की शाही सेना से लोहा लेता और किसी मूल्य पर भी आधीनता स्वीकार न करता। किंतु वह अपनी सीमित सैन्य शक्ति और अपने राज्य की लघुता से अवगत था और इसीलिए उसने विग्रह का मार्ग छोड़कर शांति और समझ का मार्ग अपनाया, अक़बर से सम्मान-सहित संधि करके !

किंतु अपने हाथों गले में डाली हुई यह पराधीनता, रेवा-नरेश के हृदय में हमेशा चुभती रहती थी ! वीर-पूजक होकर वह अक़बर के वीरत्व की सदा प्रशंसा किया करता था किंतु अपनी पराधीन वीरता को देखकर वह बार बार वह मन मसोस कर रह जाता था। उसे भय था कि कहीं इस मानसिक उद्वेलन के वश होकर उसके हाथों कोई ऐसा काम न हो जाय जिससे शाही विद्रोह का आभास हो। यही सोचकर अक़बर और साम्राज्य का सम्मान रखने के लिए समय समय पर अपने पुत्रों को अक़बर के दरबार में भेज दिया करता था !

रेवानरेश के इस आचरण का उसकी प्रजा और उसके आसपास के छोटे-मोटे नरेशों ने विपरीत अर्थ लगाया और कुछ ही समय में चौरा, डूंगरपुर, कालिंजर आदि राज्यों ने रेवानरेश के इस व्यवहार का अन्धानुकरण करना प्रारंभ कर दिया। एक प्रदेश के राज्यों के इस बरताव ने अक़बर के दरबार में खलबली मचा दी। अक़बर की दूरदर्शिता ने नरेशों के मत में छुपे हुए विग्रह को देख लिया। वह अपने साम्राज्य को केवल नाममात्र के सम्राट या सत्ताधीश बनकर नहीं, किंतु सही अर्थों में अखंड साम्राज्य बनाना चाहता था। ठीक इसी समय पर बीरबल को रेवा नरेश का मन मनाने के लिए भेजना उसे बहुत हितकर प्रतीत हुआ और इस तरह अनेकों विरोध के पश्चात भी बीरबल रेवा-नरेश के पास पहुँच ही गया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बीरबल ने अपना पहला दिन, संगीत और साहित्य-चर्चा में व्यतीत किया जो रेवा-नरेश के अतिप्रिय विषय थे। दूसरे दिन समय देखकर उसने अपने ढंग से विनोदी बातें छेड़कर रेवा-नरेश के गंभीर और चिंतित हृदय को हलका कर दिया। बीरबल एक शास्त्र निपुण ब्राह्मण होने के उपरांत मुखर पंडित था फिर उसकी विनोद में रँगी हुई गंभीर बातें रेवा नरेश के हृदय को स्वच्छ और स्पष्ट क्यों न करती? जब उसे विश्वास हो गया कि उसने रेवा नरेश को सम्पूर्णरूप से अपनी और आकर्षित कर लिया है तब उसने मूल बात को अपने ढंग से प्रारंभ किया। एक गूढ़ उदाहरण देने के बाद उसने कहा—'महाराज, एक बार मित्रता का संबंध हो जाने के बाद; क्षत्रिय उसे निभाना अच्छी तरह जानता है।'

'मैंने तो कभी मित्रता की अवहेलना नहीं की!'

'आप भूलते हैं राजन्! अकबर बादशाह आपके मित्र हैं; वे आपका आदर करते हैं!'

'तो मैंने भी सदा उनका आदर सम्मान किया है!'

'आपके इस आदर सम्मान को लोग समझते हैं—किंतु यह दूर दूर का आदर है!'

'दूर से ही तो पर्वत सुहावने दिखाई देते हैं!'

'महाराज हीरों की खोज करनी हो तो पर्वत के पास ही जाना पड़ता है। यह सच है कि पास जाने पर पर्वत सुहावने नहीं दिखाई देते, किंतु भूल जाना भी ठीक नहीं कि ऊपर से पत्थर दिखाई देने वाले पर्वत के गर्भ में ही हीरे संग्रहित होते हैं। और यदि पास न जायें तो हीरे नहीं मिलते!'

रेवा-नरेश एकटक कुछ क्षण बीरबल को देखने के बाद बोला-'कविराज, कवि-धर्म और राज-धर्म बिलकुल अलग अलग हैं!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'एक प्रश्न पूछता हूँ महाराज, यदि प्रकाश में अंधकार नहीं रह सकता तो राजा के पास कविराज कैसे रहते हैं ? कवि-धर्म और राज-धर्म अलग अलग जो हैं !'

रेवा नरेश इस बात पर तनिक चौंका फिर मुस्कराकर बोला-'कवि, राजा अपने कवियों का आदर अवश्य करता है, किंतु उसका सच्चा धर्म तो प्रजा का पालन करना ही है !'

'महाराज, एक और प्रश्न पूछने की आज्ञा चाहता हूँ—राजा, प्रजा का रक्षक है या भक्षक ?

'राजा, प्रजा-पालक होता है ? और पालक, भक्षक नहीं कहलाता ।'

'महाराज, वैसे तो शाक्त धर्मी भी बकरों-भैंसों को पालता है, जिसका कारण सब जानते हैं । पालक तो भक्षक हो सकता है किंतु रक्षक हो कर भक्षक कौन हो सकता है ? राजन, आप प्रजा-वत्सल हो कर भी क्या अपनी निर्दोष राजपूत प्रजा और सैनिकों का व्यर्थ में कत्ले-आम कराना अधिक पसन्द करते हैं ?'

'व्यर्थ में, कैसे कहा तुमने ?'

'हाँ महाराज बिलकुल व्यर्थ में! रक्षक सदैव अपने से अधिक रक्षित प्राणियों की चिन्ता करना है । राज-धर्म कहता है कि प्रजा के लिए राजा अपना अहं भाव भूल जाता है । आप वीर पुरुष हैं, और बादशाह जलालुद्दीन अकबर वीर पुरुषों को अपने हृदय में स्थान देता है; उनकी प्रतिष्ठा को अपनी प्रतिष्ठा समझता है । आपका वहाँ पधारना किसी भी अर्थ में अनुचित नहीं है । वीर के सम्मुख वीर खड़ा हो, इससे अधिक उचित और क्या हो सकता है ? बादशाह ने इस बार आप के लिए मित्रता का हाथ बढ़ाया है; यदि आप दो डग भर कर उसे ग्रहण करेंगे तो उसमें अहंकार की अपेक्षा आप के हृदय की विशालता ही अधिक विजयिनी होगी ? और महाराज, इन्हीं दो डगों में आप की प्रजा का भविष्य भी तो निहित है । आप अपने लिए न

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सही, अपने वीर सैनिकों के लिए—अपनी सन्तानों के लिए न सही, अपनी प्रजा की सुरक्षा के लिए एक बार मेरे साथ पधारें। यदि ऐसी ही छोटी-सी बात को लेकर हज़ारों वीरों का निर्दोष लहू बहाना रुक जाय, तो उससे मान हानि होने की अपेक्षा हृदय के संतोष की शोभा बढ़ेगी। पधारिये महाराज, मेरे साथ—प्रजा के लिए, प्रजा के सच्चे रक्षक हो कर!'

प्रजा की रक्षा और प्रजा के नाम पर बोलने वाले इस मुखर कूट-नीतिज्ञ को रेवा नरेश एकटक देखता रहा। बीरबल की विनोद वृत्ति के बारे में उसने बहुत कुछ सुना था किंतु हास्य की फुलझड़ियाँ छुड़ाने वाला यह ब्राह्मण राजनीति में भी इतना ही निपुण है, यह बात उसने कभी सोची तक न थी। बीरबल के इन शब्दों में शिष्टाचार भी था, विनम्रता भी; स्पष्टवादिता भी थी, गंभीरता भी; साथ साथ ही उसके शब्दों में रेवा नरेश के प्रति सच्ची आदर और सच्ची सहानुभूति भी व्यक्त हो रही थी। बीरबल के इस मृदुल और विशिष्ट वक्तव्य को रेवा-नरेश के मन पर अद्भुत प्रभाव डाला। उसे अपने पूर्व-निश्चय की सत्यता का स्मरण हुआ जिसके अनुसार उस ने अक़बर से संधि की थी। आज उसे विश्वास हुआ कि अक़बर के दरबार में अनेक रत्न हैं। यह भी ज्ञात हो गया कि भारत-विजेता सम्राट अक़बर के गूढ़ हृदय में बीरबल ने इतनी सरलता से कैसे स्थान पा लिया था? बीरबल की वह महत्ता भी रेवा-नरेश राजा रामचन्द्र से छुपी न रही जिसे लेकर अक़बर बादशाह यकायक उसे मित्र और मन्त्री बना बैठा था। बीरबल की महान् योग्यता ने रेवा नरेश को अत्यन्त प्रभावित कर दिया। बीरबल की संगति अब उसके आनन्द का कारण हो रही थी।

और एक दिन बीरबल के हाथों वह कार्य हुआ जिस पर स्वयं उसे विश्वास नहीं हो रहा था!

रेवा-नरेश राजा रामचन्द्र, कविराज बीरबल के साथ अक़बर बादशाह से मिलने के लिए रवाना हुआ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इस अद्भुत घटना से फ़तहपुर सीकरी के 'दीवाने-ख़ास' में जैसे धूम मचा दी। आज दरबारी उस घटना की सफलता को अपनी आँखों से देख रहे थे, जिसकी कल्पना किसी ने स्वप्न में भी न की होगी। बीरबल ने कुछ दिनों पहले, दरबार के बड़े से बड़े अधिकारी का विरोध करके जिस बात का बीड़ा उठाया था, उसे आज उस ने सफल कर दिखाया था। स्वयं अक़बर अपने दीवाने ख़ास में रेवा-नरेश के स्वागत को खड़ा था; रेवा-नरेश को बन्दगी से रोक कर उसने अपने हृदय से लगा लिया। सारा दरबार आश्चर्य-चकित हो कर देखता रहा।

अकबर की यह अपनी विशेषता थी कि वह अपने प्रतिद्वन्दी को शस्त्र-उपयोग के पश्चात प्रेम से जीतना अच्छी तरह जानता था। इस 'प्रेम-विजय के मार्ग में वह शाही-महत्ता को भी नहीं आने देता था। ऐसी उमंग से मिला, मानो रेवा-नरेश उसका कोई बहुत पुराना मित्र हो!

बादशाह ने रेवा-नरेश को योग्य स्थान पर बैठाया। उसके बाद शाही नजराने और भेंट देने की विधि सम्पन्न हुई। तब बादशाह ने अपने हुज़ूरिये कल्याणमल से नृत्यादि का प्रबन्ध करने की आज्ञा दी, और उसे देखते ही यकायक अकबर को कुछ याद आ गया। उसने देखा कि कल्याणमल का चेहरा मूँछ-विहीन था; उसने अपनी प्रतिज्ञा को सच कर दिखाया था, उस दिन उसे अपनी मूँछ का एक भी बाल कम न होने देने का विश्वास था; किन्तु बीरबल ने उसके "विश्वस्त पौरुष" को मिथ्या सिद्ध कर दिखाया था। बादशाह ने मुस्कराकर बीरबल और फ़ैज़ी की ओर देखा। कल्याणमल और उसका परम मित्र अतगबेग़ लहू का घूँट पीकर रह गये। और इस तरह यूसुफ़ख़ाँ को और दो नये साथी मिले!

आज बादशाह और जोधाबाई के शतरंज के पाँच राजाओं में से एक राजा बुद्धि से पराजित हुआ था। पश्चात कुछ ही महीनों में कविराज बीरबल ने चौरा नरेश को भी अपने बुद्धि-बल से समझाकर उसे बादशाह से व्यर्थ संघर्ष करने से रोक लिया, इतना ही नहीं, उसने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्वयं चौरानरेश के हाथों, बहुमूल्य माणिक और रत्नजटित तलवार बादशाह को भेंट कराई और सन्धि को स्थायी रूप दे दिया।

शतरंज का दूसरा राजा भी बुद्धिबल से पराजित हुआ और इस तरह बीरबल ने डूँगरपुर, कालिंजर और नगरकोट के नरेशों को, अपने साम, दाम और भेद का प्रयोग करके अकबर के सम्मुख ला खड़ा किया। राज संधियों ने विद्रोह और युद्ध का मार्ग स्वयंमेव अवरुद्ध कर दिया। शतरंज के पाँचों राजा पराजित हो चुके थे; जोधाबाई के शब्दों में बीरबल ने उन्हें पराजित किया था—'अपने बुद्धि बल से!'

बीरबल की इन कार्यवाहियों के बाद बहुत शीघ्र ही "नौरोज़" का त्यौहार आ पहुँचा। उस दिन बादशाह ने भरे दरबार में बीरबल को दो हजारी मनसबदारी देकर उसे "राजा" की उपाधि से सम्मानित किया। अकबर का अभिन्न मित्र, बादशाह के दरबार का राजमन्त्री बना।

बेचारे यूसुफ़ख़ाँ का भय सच्चा सिद्ध हुआ। कविराज बीरबल, "राजा" ही नहीं, "अमीर" और "सरदार" भी बन चुका था, और अकबर के "दीवाने-ख़ास" में मुख्य सरदारों में भी मुख्य स्थान मिल गया था!

किन्तु इस बार यूसुफ़ख़ाँ के इस दुःख में सहानुभूति जताने वाले सरदार भी कम नहीं थे। उनमें से उन पाँच राजाओं के सगे-सम्बन्धी राजपूत और बहुत से परदेशी तुर्क थे!

यूसुफ़ख़ां की द्वेषाग्नि की ज्वालाओं में, उसके साथियों की सलाह, और बीरबल को दिन-प्रतिदिन मिलनेवाली सफलता, घी उँडेलने का काम कर रही थी। उसने इस अग्नि के भीषण विस्फोट से शत्रु को तार-तार कर डालने का निश्चय किया।

उसके ईर्ष्या-दग्ध मस्तिष्क में एक भीषण—अति भीषण—युक्ति का प्रादुर्भाव हुआ!

[प्रथम भाग समाप्त]

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE